# सूचना ।

"नारीधर्मविचार" का कुल अधिकार ग्रन्थकर्ता महाशय ने मुझे देदिया है इस लिये अब बिना मेरी आज्ञा के कोई महाशय इसके छापने व छपवाने का उद्योग न करें ।

द्वारकाप्रसाद अत्तार

२५.९-१९०६ | बाजार बहादुर गंज,
शाहजहांपुर यू. पी.

* ओ३म् *

# भूमिका ।

देश हितैषियो ! मैं एक साधारण बुद्धिवाला मनुष्य हूं परन्तु बहुत काल से व्याख्यान देने और धर्म सम्बन्धी बातचीत करने की अधिक रुचि मुझको रहती है इस लिये जब कभी मेरे हितैषियों, मित्रों और सम्बन्धियों ने मेरा व्याख्यान या किसी समय पर वाद विवाद सुना तो कहा कि स्त्री शिक्षा सम्बन्धी जो कुछ नोट आपने संग्रह किये हैं यदि उन को पुस्तकाकार कर दिया जावे तो सबको लाभ होगा और यह भी कहा कि तुम राजसेवक हो जिस के कारण मित्रों और सम्बन्धियों की सेवा में भी विशेषतः उपस्थित नहीं हो सक्ते । दूसरे पुस्तक के सदृश कोई भी मनुष्य कहीं पहुँच नहीं सक्ता । मैंने अपने को इस महत् कार्य के अयोग्य जानकर दो कारण बतलाये ।

( १ ) यह कि खड़े होकर व्याख्यान दे देना या बात चीत करना सहल है परन्तु उसको पुस्तकाकार करना अति कठिन है पर मेरी इस वार्ता पर ध्यान न देकर उन्होंने कहा कि परमात्मा पर भरोसा रखकर प्रारम्भ कीजिये वह सब प्रकार से आपकी इस शुभ कार्य में सहायता करेगा, लिखना आरंभ किया जावे ।

( २ ) दूसरी मेरी यह प्रार्थना थी कि बहुतसी पुस्तकें इस प्रकार की बड़े २ योग्य विद्वानों ने रची हैं तो फिर मुझ तुच्छ बुद्धि की पुस्तक का उनके सामने क्या मान होसक्ता है उन के सामने इस पुस्तक के मान की इच्छा करना इसी प्रकार है जैसे कि कोई मनुष्य सूर्य्य के सामने दीपक दिखाकर मान की इच्छा करे । इस के उत्तर में उन्होंने यह कहा कि प्रथम तो सांसारिक कार्य किसी ने भी समाप्त नहीं किया द्वितीय यदि यह बात मानली जावे तो मानलिया कि यह लेख उनका मुकाबला नहीं कर सक्ता मगर अभी तो सहस्रों देहातों में बहुत अधिक प्रचार की आवश्यकता है उनका लेख बड़े २ नगर शहर कसबात उच्च शिक्षा पाये हुए मनुष्यों में सम्मान के योग्य होगा तो यह लेख भी देहात और न्यून शिक्षा ग्रहण

किये हुओं में कुछ न कुछ अवश्य प्रभाव डालेगा । अन्त को उन के कथनानुसार यह कई पत्रे सर्व साधारण की सेवा में " नारीधर्मविचार " नामी पुस्तक के नाम से दृष्टिगोचर कराता हूं । यद्यपि यह पुस्तक यथानाम तथा गुण नहीं होसक्ती तौ भी इस संग्रह का अभिप्राय यह है कि जो स्त्रियां विदुषी हों वे स्वयं पढ़कर और जो पढ़ी लिखी नहीं हैं वे सुनकर अपने कर्म को जानकर उन के अनुसार चलकर लाभ उठावें क्योंकि आज हिन्दू अपनी मूढ़ता से चाहे कितना ही प्रयत्न योग्य बनने और सुधरने का करें परन्तु वह स्त्री सुधार के बिना व्यर्थ होजाता है । क्या हम स्वयं ही कोट पतलून टोप कनफ़ुर्टर घड़ी छड़ी के धारण करने से ही सभ्य नेक बनसक्ते हैं । नहीं २ वास्तव में यदि कोई भी हमारे सुधार का कारण है तो स्त्री का धार्मिक अर्थात् स्त्री सुधार और कन्याओं-स्त्रियों की शिक्षा ही है । जो सारे सुधारों की जड़ है । दीवार तभी पुष्ट और दृढ़ और चिरकालस्थायी होती है जब कि जड़ दृढ़ और पुष्ट हो । मातायें जड़ हैं क्योंकि मनुष्यों के सुधार का मूल माताओं से ही आरम्भ होता है । इस स्थान पर मुझ को एक कहानी का स्मरण होगया कि:—

एक मनुष्य के पेट में दर्द होता था वह दर्द के मारे चिल्लाता हुआ वैद्य के पास औषधि कराने को गया, वैद्य ने पूछा कि तूने क्या खाया था ? कहा कोयला के समान जली रोटी का टुकड़ा खाया था । वैद्यने ( अंजन ) सुरमा दिया कि इसे लेजा और आंख में लगा, जब आंखें ठीक होजावेंगी तब पेट की औषधि होसकेगी । वह कहने लगा कि आंखों में तो कोई रोग नहीं है मुझे अच्छे प्रकार दिखलाई देता है । वैद्यने हँसकर कहा कि यदि आंखें ठीक होतीं तो जली हुई रोटी क्यों खाता ! बस ठीक है, यदि ऐसे ही हमारी स्त्रियां धार्मिक विदुषी होतीं तौ आज जैसी २ लज्जा इन के मूर्ख होने के कारण हम को उठानी पड़ती है, कदापि न उठानी पड़ती । बस जब हमारी स्त्रियां विदुषी होंगी तब उन में विवेक और ज्ञान का अँकुर उत्पन्न होगा फिर उन के उदर से सुधरी हुई धर्मात्मा सन्तान होंगी वह हमारी सारी रुकावटों को दूर करेंगी और हम पूरे सुशील और धर्मात्मा कहला सकेंगे । इस लिये इस पुस्तक में

पहिले मुझे यह दिखलाना है कि स्त्री क्या है और उसकी क्या आवश्यकता है और उसके कर्त्तव्य कर्म क्या २ हैं ? क्योंकि ऋषियों ने जहां सम्पूर्ण अधिकार स्त्रियों के पुरुषों के तुल्य और स्त्री को पुरुष की अर्द्धांगिनी बतलाया है वहां पर उनकी जिन्दगी के सुधार और निर्विघ्न धर्म पालन के अभिप्राय से नितान्त स्वतन्त्र रहने के लिये मना किया है जैसे कि—

पिता रक्षति कौमारे भर्त्ता रक्षति यौवने ।
रक्षन्ति स्थाविरे पुत्रा न स्त्री स्वातन्त्र्यमर्हति ॥

स्त्री जब तक क्वांरी रहे तब तक पिता की रक्षा में और युवा होने पर पति के और बुढ़ापे में पुत्र के आधीन रहे । इस लिये प्राचीन काल में हमारी कन्यायें जब तक क्वांरी रहती थीं, ब्रह्मचारिणी बन कर विद्याध्ययन करती थीं । अर्थात् अपनी आयु के एक भाग को पिता के घर व्यतीत करती थीं तब तक वह माता, पिता, गुरु की आज्ञा पालन करती थीं । उन का लालन पालन प्रत्येक प्रकार की देखा भाली और रक्षा उनके माता, पिता और गुरु करते थे । जब युवती हो जाती थीं तब अपने सदृश पति को स्वयं वरके या माता पिता और अपनी इच्छा से पति की सम्यक् प्रकार के परीक्षा करके अपने सदृश और अनुकूल पाकर आपस में प्रतिज्ञा कर पति को प्राप्त होती थीं । दोनों पतिव्रत और स्त्रीव्रत धर्म को धारण कर एक दूसरे की प्रसन्नता पूर्वक कुल कार्य करती थीं और एक दूसरे के सुख दुःख में सम्मिलित रह कर धर्म पूर्वक गृहस्थाश्रम व्यतीत करती थीं और पति की रक्षा में रहती थीं ।

तृतीय दशा में जब युवा अवस्था समाप्त होती थी और सन्तान जिस के लिये विवाह किया जाता था, हो चुकती थी, तब अपनी शेष आयु को दो प्रकार से व्यतीत करती थीं, या तो अपने पति के साथ वाणप्रस्थ को धारण कर वन को चली जाती थीं या गृहस्थ में अपने पुत्रों के पास रह कर उन से अपनी श्रद्धापूर्वक तृप्ति होने के लिये सेवा का काम लेती थीं और उन की रक्षा में रहती थीं और अपनी आयु की प्राप्त की हुई शिक्षाएँ पुत्र

वधुओं को सिखाती और स्वयं ईश्वर भजन में मग्न रहती थीं। इसी वास्ते इस पुस्तक को चार अध्यायों में विभाजित किया है। १ प्रथम अध्याय में यह कि स्त्री क्या है? और उसकी क्या आवश्यकता है। २ द्वितीय अध्याय में यह जो कन्या को माता पिता गुरु के यहां व्यतीत होगा। ३ तृतीय अध्याय वह है जिसमें पति के साथ रहना होगा। ४ अध्याय में पति के साथ बाणप्रस्थाश्रम धारण करना या पुत्रों के पास रहना होगा।

इन्हीं चार अध्यायों में बहुत सी बातें आजावेंगी जिनको आवश्यक समझ कर काण्ड और भाग में आवश्यकतानुसार विभाजित किया जायगा। पाठकों से सविनय प्रार्थना है कि इस पुस्तक को पढ़कर कृपया इस लेख पर ध्यान दें, और जहां २ जो २ त्रुटियां दृष्टि पड़ें कृपाकर मित्रता पूर्वक सर्व हितार्थ कार्ड द्वारा सूचित करें जिस से आगामी छपने के समय वह दोष त्रुटि दूर हो जावे * मैं ऐसे कृपा करने वालों को धन्यवाद दूंगा। क्योंकि मेरा इस समय जहां तक खयाल है, मनुष्यों का परममित्र उस से अधिक कोई नहीं है, जो उसके दोषों से उसे सूचित करता है, जिससे उस को अपने जीवन में बड़ी सफलता प्राप्त हो जाता है।

आप का हितैषी

**इन्द्रजीत**

तिलहर निवासी

---

* त्रुटियों की सूचना इस पते पर कीजियेगा।

द्वारकाप्रसाद अत्तार

बाज़ार बहादुरगंज

**शाहजहापुर**

U. P.

ओ३म्

# प्रार्थना।

सनो वन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा।
यत्र देवा अमृतमानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त ॥
त्वमेव माता च पिता त्वमेव त्वमेव वन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणन्त्वमेव त्वमेव सर्वं मम देव देव ! ॥

हे परमेश्वर ! आप हमारे माता, पिता, वन्धु, विधाता हैं। शारीरिक आत्मिक कोई सुख ऐसा नहीं है जो हमें आपने अपनी अनन्त कृपा से नहीं दे रक्खा है अर्थात् हमारे भोजनों के लिये तरह २ के अन्न फल, मेवे, खटाई, मिठाई और दूध, दही, मधु आदि दिये हैं। पीने के लिये जल दिया है, इसी के सहस्रों नदी नाले निर्मल और पवित्र जल के जारी किये हैं। प्रत्येक स्थान खोदने से मीठा और शुद्ध जल मिल जाता है। भोजन और जल के विना तो कुछ काल तक जी भी सक्ते थे, परन्तु वायु के विना एक क्षण में प्राण त्याग देते, इस लिये जीवरक्षा के अर्थ वायु के हमारे आस पास ढेर लगा दिये हैं। सवारी के लिये हाथी, घोड़ा रथ दिये और शोभा के अर्थ मणि, मुक्तादि और आत्मिक सुख के अर्थ बुद्धि ज्ञान सत्यवेद विद्या। यह सब पदार्थ आप की अनन्त कृपा का परिचय दे रहे हैं। देखिये कि कुत्ता एक टुकड़ा रोटी के वदले कितनी सेवा करता है, रात्रि को जागता है, स्वामी के माल की रक्षा करता है परन्तु हम मूर्ख जीव आप के महादानों और दया का कुछ भी प्रत्युपकार नहीं कर सक्ते। न शुद्ध अन्तःकरण से धन्यवाद देते और न गुणानुवाद गाते हैं। इस पर भी जिधर देखिये उधर सुख ही सुख दिखाई देता है। आपने संसार में कोई भी पदार्थ हमारे दुःख का उत्पन्न नहीं किया। प्रत्येक पदार्थ में सुख ही सुख भरा हुआ है, परन्तु हम बुद्धिहीनता के कारण उसके विपरीत वर्त्तने से अपने अज्ञानवश दुःख उठाते हैं। जैसे कि संखिया आदि विषों को उचित प्रकारसे कार्य में लाने से वैद्य ( हकीम ) लोग कुष्ट आदि दुःसा-

ध्य रोगों को दूर करते हैं, परन्तु मूर्ख उसे खाकर अपनी जान तक खोते हैं।

इस कथन का मुख्य अभिप्राय यह है कि हम आप का कहां तक धन्यवाद दें आपने वह दया हम दीनों पर की है कि जिसका वारापार नहीं, हम जिस समय अधर्मयुक्त कामों में तत्पर होते हैं उसी समय आप हमको अपनी दया से रोकते हैं उस काम से बचने के अर्थ हमारे आत्मा में भय लज्जा, शंका उत्पन्न कर देते हैं क्योंकि आपने उपदेश कर दिया है कि वही पाप है जिसमें भय, लज्जा, शंका उत्पन्न हों। आप हमारी इच्छा ( इरादे ) को रोकते हैं जब कि हम प्रथम ही प्रथम किसी बुरे काम के करने पर उद्यत होते हैं। हमारा सारा शरीर और मन थरथराता और कांपता है परन्तु जब हम अज्ञान और अविद्या के कारण आपकी आज्ञा के विरुद्ध बारबार पापों में प्रवृत्त हो जाते हैं तो फिर हम महापापी बनकर बड़े दोषों के भागी बन जाते हैं। तिसपर भी आप दया नहीं छोड़ते आप न्यायपूर्वक औरों को पाप से बचाने और शिक्षार्थ हमें दण्ड देते हैं। यदि कोई कहे कि आपने हमारे हाथ, पैर, आंख, जिह्वा को पाप करते समय ही क्यों न रोक दिया जो हम पाप करते ही नहीं। यह भी मूर्खता का प्रश्न है। जैसे कि किसी ने किसी तलवार से हनन किया है, लाश और तलवार पड़ी हुई है, परन्तु घातक भाग गया है। अब कोई तलवार को लेजा कर फांसी नहीं दिलवाता वरन् घातक की तलाश होती है। इसी प्रकार हमारे हाथ पैर ने वह कर्म नहीं किया था उसको करनेवाला आत्मा था। जैसे कि—( आत्मसंयोगाद् हस्त कर्म ) और ( हस्त संयोगात् मुशले कर्म ) जब आत्मा का हाथ से सम्बन्ध होता है तब हाथ में काम करने की शक्ति होती है और जब आत्मसंयुक्त हाथ का मूशल से सम्बन्ध होता है तब मूशल में काम करने की शक्ति होती है हाथ पैर तलवार के सदृश काम करने के साधन थे, इस लिये परमात्मा हाथ पांव को नहीं रोकता वरन् हाथों से काम लेने वाले आत्मा को रोकता है और सांसारिक न्यायाधीश जो हाथों में हथकड़ियाँ और पैरों में बेड़ियाँ डलवाकर हाथों पैरों को जिन से पाप किया है स्वभाव छुटाने

के लिये दंड देते हैं। चूंकि उनका आत्मा पर राज्य नहीं है इस लिये वे आत्मिक दण्ड देने के अयोग्य हैं। बहुत से पापी दण्ड पाने पर भी पाप करने से नहीं रुकते। देखो एक मनुष्य को कारागार होता है, वहां जाकर वह दूसरा पाप करता है दण्ड अधिक हो जाता है छुट आने पर फिर वही पाप करता है और वारम्वार कारागार का मुंह देखता है। एक को जन्म कैद का दंड हुआ उसने वहां जाकर वध किया और फांसी पाई। चूंकि सांसारिक न्यायाधीश का राज्य आत्मा पर नहीं है, इस लिये वे हाथ पांव को दण्ड देकर पापों से रोकते हैं। परमात्मा का राज्य आत्मा पर है, इस लिये वह मुख्य पापी को रोकता है। परमात्मा आप हमीं को नहीं, किन्तु पशुओं को भी रोक रहे हैं। देखो जब कुत्ते को रोटी का टुकड़ा दिया जाता है वह वहीं खा लेता है और पूंछ हिलाता जाता है मानों रोटी देने वाले को धन्यवाद देता है। वही कुत्ता जब रोटियां चुरा कर भागता है तब पूंछ नहीं हिलाता वरन् छिपा कर किसी दीवार की आड़ में खाता है। जरा खटका हुआ भागा। क्यों जी! अब क्यों भागता है और क्यों वहीं नहीं खा लेता। वह जानता है कि यह पाप है, चोरी है। वह पाप नहीं था। क्या मैंने वा आपने उस को यह समझ और ज्ञान दिया? नहीं २ परमात्मा ने ही पाप कर्म होने के कारण उस में भय लज्जा शंका उत्पन्न करदीं परन्तु हे परमात्मन्! आप की इतनी दया और निगराना पर भी जब हम अपने कर्मों के सूचीपत्र को देखते हैं, तब जो २ हमने मन वचन कर्म से पाप किये हैं, हमें अपने पापों का स्मरण अथाह दुःख सागर में डुबा देता है। उस से उभरने की कोई आशा नहीं होती, चकित होकर जिस प्रकार कोई मनुष्य दौडता हुआ अन्त को थककर गिर पड़ता है उसी प्रकार हे दयामय! दीनानाथ, दीनबन्धु, कृपासिन्धु! हम महादीन दुःखी आप के पैरों पर थककर चारों ओर उभरने की आशा न पाकर "त्राहिमाम् २" करते हुए गिरते हैं। आप अपने करुणारूपी हस्त से उठाइये और शुभ कर्मों में लगाइये और शुभ मनोरथ सिद्ध कीजिये। 'सब ओर से निराश हूं, एक आशा है तेरी'॥ ओ३म् शम्॥

इन्द्रजीत

# ओ३म्

स्त्री शिक्षा की अमूल्य पुस्तक

# नारीधर्म विचार

प्रथम भाग का

पाँचवाँ एडीशन।

महाशयवर! प्रथम व द्वितीय व तृतीय व चतुर्थावृत्ति की ८ हज़ार प्रतियोंको जिस भांति हाथों हाथ लेकर आप ने अपने अनुग्रह का परिचय देते हुए मेरे उत्साहको बढ़ाया है, उस के लिये मैं आप को धन्यवाद देता हूं।

और अब फिर पाँचवीं बार बहुत कुछ शुद्धकर और बड़े अक्षरों में निहायत ही उत्तम छपाई व काग़ज़ के साथ दो हज़ार कापियां आप को अर्पित हैं।

आशा है कि इस आवृत्ति को देखकर आप बहुत ही प्रसन्न होंगे और मेरे परिश्रम को सफल करेंगे।

वैदिकधर्म का सेवक
द्वारकाप्रसाद अत्तार

बाज़ार बहादुरगंज
शाहजहांपुर यू. पी.

ओ३म्

# नारीधर्मविचार

## प्रथम भाग

## प्रथम अध्याय ।

### स्त्री और उसकी आवश्यकता

संसार के सब पदार्थ निराकार साकार या जड़ चेतन हैं ? जड़के अतिरिक्त चेतन के दो भाग करने पड़ते हैं । एक जीव दूसरा ईश्वर । और जीवों को जब हम देखते हैं तो उनको स्वेदज, जरायुज, अण्डज, उद्भिज चार प्रकार के पाते हैं, उनमें योनिज और अयोनिज दो प्रकार के होते हैं । अयोनिज वह हैं जो विना माता पिता के सम्बन्ध से उत्पन्न होने वाले हैं । दूसरे योनिज जो माता पिता के सम्बन्ध से उत्पन्न हुये हैं । अयोनिज के विषय को छोड़ कर योनिज में, पशु और मनुष्य दो जाति कर्त्तव्य और भोक्तव्य के लिहाज से पाई जाती हैं । पशु आदि जाति अपने पिछले कर्मों के बुरे स्वभावों को भुलाने के लिये और भविष्यत् के लिये कोई कर्म न करने के लिये हैं । मनुष्य अपने पिछले कर्मों का दण्ड भोगता और भविष्यत् के अर्थ कर्म कर सकता है । यह विभाग ईश्वर परमात्मा ने मुख्य २ मन्तव्यों की पूर्ति के अर्थ किये हैं, जैसे कि वर्त्तमान राज्य में अलग २ महकमेजात अर्थात् सिविल, मिलीटरी, दीवानी, फौजदारी, कमसरियट आदि हैं—और सब मिल कर एक मुख्य न्यायाधीश के अभिप्राय को पूर्ण कर रहे हैं । इसी तरह इस मनुष्य जाति में भी दो भेद, मनुष्य और स्त्री मुख्य मुख्य कर्त्तव्यों को पूर्ण

करने के अर्थ से नियत हुए हैं और दोनों ही मिल कर उस परमात्मा की आज्ञा का पालन कर एकही अभिप्राय सिद्ध करने के लिये हैं । यद्यपि दोनों के लिये अलग अलग कर्त्तव्य बतलाये हैं तथापि दोनों अपने अपने कर्त्तव्यों को पूर्ण कर अपने जीव को सुगमता से काम चलाने के अर्थ भिन्न भिन्न महकमों की तरह ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, बाणप्रस्थ, सन्यासाश्रमों और ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र आदि बर्णों में विभाजित कर अपने पिछले कर्मों को भोगते और आगे के अर्थ कर्म कर अमूल्य जन्मको धर्म-पूर्वक व्यतीत कर सकते हैं । मैं इस पुस्तक में केवल स्त्रियों के धर्मों का वर्णन करूंगा और बतलाऊंगा कि क्या २ उनके आवश्यक कर्म हैं। तथापि बहुत सी बातें दोनों पर समकर्त्तव्य होने के कारण एकसी माननीय होंगी ।

अब विचारणीय यह विषय है कि प्रत्येक का यह स्थूल शरीर अपने कर्मों के अनुसार है जैसा कि बड़े २ धनाढ्यों के रहने के बड़े २ ऊंचे महल कोठियां होती हैं और दरिद्रियों के झोपड़े । ऐसेही यह नाना प्रकार की योनियां कर्मों के अनुसार जीवों के रहने के मकान हैं । परन्तु देखा जाता है कि ऊंचे २ गृहों के रहने वाले भी दुःखी और झोंपड़ों के रहने वाले भी सुखीं होते हैं । इस से सिद्ध होता है कि अन्तर गृहों में ही है रहने वालों में नहीं । यही अन्तर मनुष्य और पशुओं के शरीर में है वास्तव में जीव में नहीं । जब मनुष्य और पशुओं के जीव में भेद नहीं है तब पुरुष और स्त्री के आत्माओं में अन्तर नहीं होसकता। पुनर्जन्म मानने वाले जानते हैं कि न जाने यह पुरुष कितनी बार स्त्री कितनी बार पुरुष बनता है। इस लिये जैसे पशु भोक्तव्य योनि में हैं इसी तरह स्त्री केवल भोक्तव्य योनि नहीं है । इनकी ऋषियों ने पुरुष के सदृश कर्त्तव्य योनि में गणना की है । यह पुरुषों के प्रकार वेदोक्त धर्म का पालन करती हुई मोक्ष तक की भागी बन सक्ती हैं। गृहस्थ रूपी गाड़ी के दो पहिये पुरुष और स्त्री हैं । अगर यह तुल्य हुए तब तो गृहस्थरूपी गाड़ी ठीक तौर से चल सकती है नहीं तो गृहस्थी में सुख

स्वप्न में भी नहीं मिल सकता क्योंकि पहियों के नीचे ऊंचे एक ठीक दूसरा खारिज होने से गाड़ी चल ही नहीं सकती इस लिये वेद स्मृति में स्त्री के लिये शब्द अर्द्धांगिनी और गृहिणी आया है यदि पुरुषों से स्त्रियां छीन ली जावें तो कोई गृहस्थ कहला ही नहीं सकता गृहस्थ गृहिणी के होने से ही कहलाते हैं स्त्री पुरुष दोनों मिल कर मुकम्मिल इनसान कहलाते हैं वास्तव में एक वस्तु के दो भाग हैं स्त्री को सन्तानों का पालन तथा उन का सुधार करना पड़ता है इस लिये वेदों में बतलाया है कि संसार में धर्मात्मा वही हो सकता है जिस के माता पिता गुरु धर्मात्मा हों जैसा कि—

मातृमान् पितृमानाचार्यवान् पुरुषो वेद।

वरन् यहा पर पिता शब्द से माता का शब्द प्रथम आया है इस लिये कि सब से प्रथम शिक्षा माता से आरम्भ होती है। किसी अन्य स्थान पर ज्ञात हो जायगा कि माता जैसा चाहे बालक उत्पन्न कर सकती है। संसार में प्रसिद्ध है कि "मा पर पूत पिता पर घोड़ा, बहुत नहीं तो थोड़ा थोड़ा"। माता सुशीला का बेटा सुशील, माता कुचालिनी का बेटा कुचाली। माता सुशिक्षित का बेटा सुशिक्षित, माता कुशिक्षित का बेटा कुशिक्षित। यह ऐसी स्वयं सिद्ध वार्ता है कि इस से कोई भी पुरुष इनकार नहीं कर सकता क्योंकि वह कौन मनुष्य है जिसने माता के उदर में परवरिश नहीं पाई और कौन उनकी महती कृपाओं और शिक्षाओं से अज्ञात है। जब कि सन्तानों का पालन ही माता के दूध पर निर्भर है तब कौन कह सकता है कि माताओं के स्वभाव का प्रभाव बच्चे में दूध के साथ प्रवेश नहीं करता। माता के शिर पर शिक्षा और बच्चों के पालन पोषण के अतिरिक्त और भी बहुत से काम हैं। माता ही को बच्चों के लड़ाई झगड़े चुकाने पड़ते हैं और जब कभी पिता और पुत्र में किसी प्रकार धर्म के विरुद्ध कोई झगड़ा उत्पन्न हो जाता है तो दोनों को समझा देना और जैसी की तैसी सफाई करा देना माता ही का काम है। जो वस्तु घर में आवे उस को नियत स्थाने पर

रखना और भागानुसार सब को पहुंचा देना, घर के आय व्यय की जांच परताल और हिसाब किताव लिखना, सम्पूर्ण पदार्थ और कोष अन्नादि नियमानुसार प्रबन्ध के साथ रखना और व्यय करना, सन्तानों के रोगों के दूर होने का यत्न करना, जब से बालक बोलना आरम्भ करे शब्दों को स्थान प्रयत्न के साथ उच्चारण कराना, शुद्ध शब्द बोलना सिखाना, व्यञ्जनों को बनाना, बनवाना, अनेक प्रकार के काम और प्रबन्ध ऐसे सौंपे गये हैं कि यह ऐसे २ काम विद्या के बिना पूर्णतया नहीं हो सकते । इस से स्त्रियों को विद्या की आवश्यकता ज्ञात होती है । फिर भी स्त्री को पैर की जूती बताने और विद्या से अनभिज्ञ रखने की आज्ञा होती है । शोक है कि वर्तमान में भी जिस को प्रकाश का समय कहा जाता है, मुझ से बहुत से महाशय यह कहते हुये पाये जाते हैं कि विद्या पढ़ कर स्त्रियां कुमार्गिनी और कुचालिनी हो जावेंगी इस लिये विद्या पढ़ाना ठीक नहीं । इस कथन से उन का मन्तव्य यह विदित होता है कि वास्तव में विद्या कुमार्गी बनाने का कारण है । यदि यही ठीक है तौ पुरुषों को क्यों पढ़ाना चाहिये । यदि कुमार्गता वास्तव में विद्या का गुण है तौ गुण से गुणी कदापि पृथक् नहीं हो सकता इस लिये विद्या पढ़ कर पुरुष व्यभिचारी बनकर संसार का नाश करेंगे । यदि कहो कि पुरुषों पर प्रभाव न पड़ैगा तौ व्यभिचार विद्या का गुण नहीं रहता और जो स्त्रियों को बिगाड़ैगी वह पुरुषों का सुधार नहीं कर सकती । और एकही पदार्थ में दो पृथक् २ परस्पर विरोधी गुण नहीं हो सकते और इस के विरुद्ध यह भी सिद्ध होता है कि मूर्ख स्त्रियां व्यभिचारिणी नहीं हो सकतीं उन के पक्षानुसार आज व्यभिचारिणी स्त्रियों का पता भी नहीं होना चाहिये था । क्योंकि वर्त्तमान समय में स्त्रियां अधिकांश मूर्खा ही हैं । मित्रो ! स्वार्थ और हठधर्मी की तो और बात है परन्तु यथार्थ यह है कि विद्या से बुद्धि की वृद्धि होगी, ज्ञान प्राप्त होगा, प्रत्येक पदार्थ का तत्व ज्ञान होगा अर्थात् उस की असलियत माहियत मालूम होगी परन्तु वह जैसे पात्र में होगी वैसा ही गुण उत्पन्न करेगी, क्योंकि कहा है कि शस्त्र, शास्त्र और जल यह पात्र के आधीन होते हैं । जैसे

कि दही और रसादि काच वा फूल के वर्तन में और गुण और तांवे के वर्तन में और गुण उत्पन्न करता है । इसी प्रकार यदि शस्त्र किसी न्यायशील बुद्धिमान वीर के पास होगा तो वह धर्मात्माओं की रक्षा करेगा और दुष्टों का वध । और यदि किसी मूर्ख खल—दुष्ट के पास होगा तो धर्मात्माओं को कष्ट देगा । इसी भांति विद्या यदि किसी सुयोग्य के पास होगी तो संसार को लाभ पहुंचेगा और दुष्ट के पास होगी तो उलटे अर्थ स्वार्थ साधन को करके वाममार्ग आदि से संसार को दुःख और कष्ट पहुंचाने का हेतु होगी । वस यदि विद्या पढ़कर स्त्री को धार्मिक शिक्षा मिली, धर्म का ख्याल हुआ तो संसार में वही विद्याग्राही आप और अन्यों को लाभ पहुंचावेगी । इस के विरुद्ध यदि उसको अधर्म की शिक्षा मिली और अधर्मियों की संगति रही तो इसमें कुछ संदेह नहीं है कि मूर्ख की अपेक्षा अधिक आपको और दूसरों को हानि पहुंचावेगी, स्वार्थ और परमार्थ दोनों का खोज मारेगी । जैसा कि आज मनुष्य दूसरे के साथ बुराई नहीं करते इस ख्याल से कि वह मेरे साथ बुराई करेगा परन्तु जब कभी ऐसी चाल और धोखा सूझ जाता है कि दूसरे को हमारी चाल की खबर न हो तो उस समय अवश्य बुराई करने से नहीं रुकते । यह जरूरी वात है कि एक ओर मनुष्य विद्वान् होकर धार्मिक शिक्षा पाकर सम्पूर्ण शुभ गुणों से परिपूरित होगये, सारे झूठ, फरेब, मकर, छल छूट गये, मोक्ष के स्वयं भागी हुवे, औरों को ठीक और सत्मार्ग दिखागये । दूसरी ओर विद्या से बड़े २ पद और प्रतिष्ठा को प्राप्त किया, मगर अपनी चालाकी और फरेब से झूठ का सच कर दिखा गये और सम्पूर्ण संसार को झूठ वोलने और ठगई करने धोखा देकर माल उड़ाने, नाना प्रकार की मक्र और दगा की वातें सिखागये । आज देख लीजिये बड़े २ उहदेदार घूस ( रिशवत ) लेते हैं । बड़े २ वकील झूठ सिखलाते, मुकदमे वनवाते हैं । परमेश्वर के वास्ते ऐसी अधार्मिक शिक्षा यदि आप दिलाना चाहते हैं तो मैं ऐसी शिक्षा का प्रचारक नहीं हूँ । मेरा उस शिक्षा से अभिप्राय है जो धार्मिक हो और स्त्रियों को पूर्ण पतिव्रता और धार्मिक वनासके । जिससे परमेश्वर

का यथार्थ ज्ञान प्राप्त होसके अर्थात् उनके आत्मा को आत्मिक शिक्षा मिलना चाहिये । आत्मिक शिक्षा ही को धार्मिक शिक्षा कहते हैं क्योंकि धर्म सदा धर्मी में रहता है । आत्माही धर्मी है । इस लिये मैं धार्मिक शिक्षा के प्रचार का सहायक हूँ । आप उस शिक्षा के प्रचार का प्रबन्ध कीजिये और स्त्रियों की निन्दा, अपमान कदापि न कीजिये देखो यदि आज जैसा स्त्रियों की बावत ख्याल होता तौ मनु स्त्रियों की पूजा न बतलाते । कृपा करके यहां पूजा शब्द से रोली, अक्षत चढ़ाना वा हाथ जोड़े सामने खड़े होकर विन्ती करना न समझ लीलिये । पूजा के अर्थ आदर सत्कार के हैं । जैसे किः—

विद्वत्वञ्च नृपत्वञ्च नैव तुल्यं कदाचन !
स्वदेशेपूज्यतेराजा विद्वान्सर्वत्रपूज्यते ॥

विद्वान् और राजा की कोई बराबरी नहीं है । राजा की पूजा अर्थात् आदर सत्कार उस के राज्यही में होता है, परन्तु विद्वान् का सर्बत्र पूजन होता है ।

यत्रनार्यस्तुपूज्यन्ते रमन्तेतत्रदेवताः ।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः ॥

मनुजी कहते हैं कि जहां स्त्रियों की पूजा अर्थात् आदर सत्कार होता है वहां देवता अर्थात् विद्वान् प्रसन्न रहते हैं और जहां उनकी पूजा नहीं होती वहां सम्पूर्ण कार्य निष्फल होजाते हैं । और भी कहा है—

दोहा ।

नारी निन्दा मतकरौ, नारी नर की खान ।
नारी से नर ऊपजैं, ध्रुव प्रह्लाद समान ॥

वर्त्तमान और प्राचीन काल में अत्यन्त अन्तर जान पड़ता है । आज यदि किसी की माता का नाम सभा में लेलिया जावे तौ प्रतिष्ठा-भंग होजाना समझते हैं । परन्तु हमारे पूर्वज पुरुष माता के नाम के साथ अपना नाम पुकारा जाना प्रतिष्ठा का कारण समझते थे । माता के

नाम से उन के नाम प्रसिद्ध होते थे । जैसे कि—कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर, कौशल्यापुत्र रामचन्द्र, सुमित्रापुत्र लक्ष्मण, देवकीनन्दन कृष्णादि पुकारे जाते थे । विदुषी मातायें प्रथम ही से संस्कृत बोलना सिखा देती थीं। मैं ने इस गये गुजरे समय में भी दो एक बच्चों को पांच छः वर्ष की आयु में धाराप्रवाह संस्कृत बोलते देख अचम्भित होकर पूछा, पता लगा कि यह सब माताओं की शिक्षा का कारण है आज सारा संसार पुकार रहा है कि अमुक की ( मदरटंग—मादरी ज़ुबान ) मातृभाषा अमुक है कोई नहीं कहता कि अमुक की फादरटंग या पिदरी ज़ुबान या पितृभाषा क्या है । पिता के एम. ए. बी. ए. होने से बालक अंग्रेजी संस्कृत नहीं बोल सक्ता परन्तु माता के विद्वान् होने से बोल सक्ता है इस लिये सब से अधिक विद्या की आवश्यकता माता को है । विद्या शब्दही स्त्री लिंग है इसी प्रकार गायत्री और धी ( बुद्धि ) भी—स्त्रियों के वास्ते विशेषता प्रकट कर रहे हैं "मातृदेवो भव पितृदेवो भव आचार्य देवो भव" में माता का शब्द प्रथम इसी हेतु है, जिन्हों ने प्राचीन इतिहास नहीं देखे जिनकी स्वाभाविक नियमों पर दृष्टि नहीं, वे कह देते हैं कि—( यके गुफ्त कसरा जने बद मुबाद ) जो उसी सीमा तक उचित है कि यदि दुष्ट स्त्री न हो तौ पुरुष भी दुष्ट नहीं होना चाहिये । आगे द्वितीय पद में कहते हैं ( दिगर गुफ्त अन्दर जहां जन मबाद ) अर्थात् संसार में स्त्री ही नहीं होनी चाहिये । मैं विनय पूर्वक ऐसे महाशयों से पूछता हूँ कि यदि संसार में स्त्री ही न होती तो क्या आप जैसी शुद्ध और पवित्र मूर्त्तियां दृष्टिगोचर हो सक्ती थीं और आप अपनी माता के सारे उपकारों को भुलाकर ऐसे कृतघ्नी बन इस वाक्य के उच्चारण के समर्थक बन सक्ते थे ? आप यदि प्राचीन समय की स्त्रियों की व्यवस्था और कर्त्तव्यता इतिहासों और उपनिषदों में देखेंगे तो ज्ञात होगा कि पुरुषों की अपेक्षा अधिक शुभाचारिणी और लज्जावती स्त्रियां थीं और उन्हों ने पुरुषों से बढ़ कर काम किये हैं । क्या आज सम्पूर्ण मनुष्य सर्व गुणों से सम्पन्न ही हैं । आज पुरुष बाहर निकल कर पढ़ लिखकर दूरदर्शक हो गये । स्त्रियां गृह में रहने से मूर्खा, विद्या से शून्य रह कर अर्धपशु ( नीमवहशी ) बन गईं ! ईश्वरीय नियम है कि

एक हाथ उठालो दूसरे से काम लेते रहो तो जिस हाथ को उठा लिया है उस से काम लेना छोड़दिया वह थोड़े ही दिनों में निकम्मा और बेकार हो जावेगा । पुनः उस से वही काम लेना चाहो तो काम नहीं लिया जा सक्ता; जब तक कि फिर एक अधिक समय तक उस की मर्दनादि चिकित्सा न की जावे । यही दशा आज उन स्त्रियों की दिखाई दे रही है जो विद्या से शून्य हैं । फिर वह जो न करें वह थोड़ा, जो न समझें वह कम । क्या मूर्ख पुरुष सर्वज्ञ सम्पूर्ण विद्यानिधान होने की डिगरी पा सक्ते हैं ? वा सत्य असत्य का निर्णय कर सक्ते हैं ? जब पुरुषों की यह दशा है तो फिर स्त्रियों ही पर क्यों यह सारे ताने तिशने हैं यद्यपि एक समय से उन की यह दुर्दशा हो रही है तो ऐसी दुर्दशा हो जाने पर भी उन का नाम आज तक पुरुषों से प्रथम लिया जा रहा है । देखो सारा संसार कह रहा है ।

सीताराम व राधाकृष्ण । कोई नहीं कहता कि रामसीता व कृष्ण-राधा । फिर भी उन की शिक्षा की ओर कुछ ध्यान नहीं । आप जैसा पुरुषों की शिक्षार्थ परिश्रम करते हैं, वैसा ही उन की शिक्षार्थ भी कीजिये । फिर देखिये क्या फल प्राप्त होता है । यदि पाठशाला में कन्याओं के लिये दो पैसे फीस पड़े तो एक भी न भेजें परन्तु पुत्रों की दूनी फीस हो जावे तो भी भेजने को तत्पर रहते हैं । जब कि यह बात निश्चित है कि बिना विद्या के ईश्वर की पहचान और उस की प्राप्ति नहीं हो सक्ती तो कितने अन्याय की बात है कि उन को विद्या से हीन रखकर ईश्वर प्राप्ति से भी दूर और अलग रक्खा जावे । आज विद्या का फल नौकरी समझा जाता है इस लिये कह देते हैं कि हमें स्त्रियों से नौकरी थोड़े ही कराना है । खूब ! देखो स्त्रियों की शिक्षा का फल जापान जरमन में खुले दिन की तरह प्रकट है कैसे सुयोग्य पुत्र उत्पन्न कर रही हैं ? हा ! जब पुरुष ही देश उन्नति के लिये विद्या नहीं पढ़ते तो वह किस प्रकार समझें कि देश उन्नति के अर्थ पढ़ाना अभीष्ट है, न कि नौकरी । जापान में एक माता ने अपनी जान इस लिये खोदी कि उस का बच्चा उस की सेवा करने की

वजह से फ़ौज में भरती नहीं किया गया था, मरते समय पत्र लिख गई कि जाओ बेटा अब देशभक्त बन देश की रक्षा करो। उसकी शिक्षा से यहां तक उनमें देश की सेवा में उद्यत होने का जोश भरगया कि एक दिन में जहाज के नीचे १४ आदमियों के डुबाने की आवश्यकता जाहिर की गई तीन सौ दरख्वास्तें गुजर गईं जिनमें से चौदह डुबा दिये गये। स्त्री का मस्तक परमात्माने ऐसा अच्छा बनाया है कि जिस के वर्णन की आवश्यकता नहीं। सहस्रों ऋषियों डाक्टरों की सम्मति बतला रही है कि पुरुष जो विद्या गुण पच्चीस वर्ष की आयु में सीख सकता है उतनी ही स्त्री सोलह वर्ष में, बालिग़ (तरुण) होने की अवस्था पुरुष की पच्चीस वर्ष और स्त्री की सोलह वर्ष है। प्रत्यक्ष में भी जिस अवस्था में कन्या बातें करने लगती है, लड़के उतनी ही में कदापि नहीं। तथापि जैसे बड़ी आंख होने पर भी बिना सूर्य वा उससे आये हुये प्रकाश के कोई मनुष्य देख नहीं सकता इसी तरह उत्तम मस्तक होने पर भी शिक्षा के बिना मस्तक स्वयं काम नहीं कर सकता। जो कुछ मनुष्य सीखता है अपने माता, पिता, गुरु, साथी-संगी आदि से। यदि उत्पन्न होतेही एक कोठरी में बन्द कर दिया जावे, उसके साथ बात तक न की जावे, वह कुछ भी न जान सकेगा। चाहे पुरुष हो या स्त्री विद्याहीन होने से पशु के तुल्य है। जैसे कि—(विद्या विहीनः पशुः) बरेली अनाथालय में जो दो बच्चे भेड़ियों के भाठे से लाये गये थे, जिन्हों ने आदि दशा उनकी देखी है वे कह सकते हैं कि उनमें कौन सी बात मनुष्यता की थी। चारों हाथ पांव से चलते थे। कच्चा मांस खाते थे। बोलना अक्षर तक न जानते थे। मनुष्य योनि से भागते थे। इस लिये माता पिता का कन्या को पढ़ाना लिखाना, धर्मात्मा बनाना, अपनी और उसकी रक्षार्थ आवश्यक ही नहीं, किन्तु मुख्य कर्त्तव्य है। इस लिये कि यदि पुत्र अयोग्य और कुमार्गी है तो वह उसी घराने को अप्रतिष्ठित और क़लंकित करेगा। परन्तु दुहिता दो घरानों अर्थात् बाप और श्वशुर की प्रतिष्ठा और कीर्त्ति में दाग़ लगाने का हेतु बनेगी। जैसा कि—

सूक्ष्मेभ्योपि प्रसंगेभ्यः स्त्रियो रक्ष्या विशेषतः ।
द्वयोर्हि कुलयोः शोकमावहेयुररक्षिताः ॥

किञ्चित् प्रसंगों से भी स्त्रियों की अधिक रक्षा करनी चाहिये क्यों कि उनके अरक्षित रहने से दोनों कुलों में शोक उत्पन्न हो जाता है ।

अब आप स्वाभाविक और ईश्वरीय नियम और मेरी प्रार्थना पर विचार करते हुए सोचिये कि जब बच्चों को माता की गोद उत्तम पाठशाला से कम नहीं है और माता के विचार और बर्ताव का प्रभाव सन्तान पर प्रतिबिम्ब के सदृश पड़ता है तो उन महाशयों का कथन कहां तक माननीय हो सकता है कि "स्त्री शूद्रौ नाधीयाताम्" वा—

शूद्र गँवार ढोल पशु नारी, यह सब ताड़न के अधिकारी ॥

जब यह बात स्पष्ट है कि मूर्ख स्त्री हो वा पुरुष, कोई शुद्ध शब्द उच्चारण नहीं कर सकता तब कौन कह सक्ता है कि जबसे बच्चा बोलना आरम्भ करेगा, माता के मूढ़ होने से अशुद्ध उच्चारण न सीखेगा जब माता को स्वयं ही शब्द के स्थान प्रयत्न का ज्ञान नहीं तौ वह किस प्रकार शुद्ध उच्चारण करना सिखलावेगी । देखा जाता है कि आज उच्च शिक्षा पाने पर भी माता के मूढ़ होने के कारण मातृभाषा के शब्द बार्तालाप करने के समय अशुद्ध निकल ही जाते हैं । आज अशुद्ध शब्द बोलना ही नहीं सिखाये जाते वरन् वह दुष्प्रभाव बच्चे के शुद्ध मन पर माता के मूर्खा होने से पड़ जाते हैं कि जो सम्पूर्ण आयु उच्चशिक्षा को प्राप्त करने और समझाने और समझने से कदापि नहीं जाते । एक बार मदरास के एक एम० ए० पास पुरुष ने एक महात्मा से प्रश्न किया कि मेरी इस बात की तसल्ली नहीं होती, विचार काम नहीं करता, कारण मालूम नहीं होता, हालांकि मैंने एम० ए० तक पढ़ा है । हेडमास्टर ने अच्छे प्रकार समझाया है कि भूत चुडैल कोई डराने वाली वस्तु नहीं हैं । मैंने भी खूब समझ लिया कि वास्तव में यह बात सत्य है । आप के व्याख्यान में भी सुना है परन्तु इस का क्या कारण है कि जब मैं

स्मशानादि भूमि में जाता हूँ तो मुझे डर लगता है। इस का कारण बतला कर मुझे कृतार्थ कीजिये। महात्मा ने उत्तर दिया कि आप यह बतलायें कि आप की माता पढ़ी हुई है? वह आप की बाल्यावस्था में भूत प्रेत का भय तो नहीं दिखलाती थी? उत्तर दिया कि माता वे पढ़ी है और भय दिखलाया करती थी। तब उत्तर दिया कि बच्चे का दिल पिघली हुई धातु के सदृश होता है। बचपन में जैसी मुहर छाप लग जाती है वह अमिट हो जाती है। पस आप के भीतर से माता का डाला हुआ भूत नहीं निकल सक्ता। वह लज्जित होकर मान गये। महात्मा ने यह भी बतलाया कि संसार में माता से बढ़ कर अध्यापिका और वेदों से बढ़ कर पुस्तक नहीं है। जितनी बातें बच्चा मा की गोद में सीखता है उतनी बादको नहीं अर्थात् जितकी आयु अधिक होती है उतनी ही पहिले वर्षों की अपेक्षा कम सीखता है। यहां तक कि पांच वर्ष की आयु में जितनी बातें सीख जाता है उतनी सारी आयु में नहीं सीख सकता, एम० ए० साहिब माता के मूर्ख होने से अति लज्जित हुए। आज हमें क्या २ लज्जायें अपनी मूर्खा माता, भगिनी आदि के कारण उठानी नहीं पड़ती हैं? विचार कर सोचने से ज्ञात होता है कि इन सारी लज्जाओं और दुःखों का उठाना वास्तव में पुरुषों की स्वार्थ सिद्धि का फल है। सूक्ष्म बुद्धि और गूढ़ विचार से कार्य नहीं लिया। साधारण रीति से यह सोच लिया कि पुत्रों को शिक्षा देंगे वह धन उपार्जन कर घर में लावेंगे सम्पूर्ण गृह प्रफुल्लित और आनन्दित हो जायगा पुत्रियों को पढ़ा कर क्या होगा? प्रथम तो वह दूसरे के घर चली जावेंगी इस से अपना क्या लाभ होगा द्वितीय जितना धन उन की शिक्षा में व्यय किया जावेगा, यदि उतना ही द्रव्य उन के विवाह और भूषण में व्यय कर देंगे तो हमारा बड़ा काम होगा परन्तु यह विचार न किया कि जब हमारा ही सा सब मनुष्यों का विचार हो जावेगा "सौ स्याने और एक ही मता," तो कोई भी लड़कियां न पढ़ावेंगे और हमारे यहां भी वही मूर्खा स्त्री आवेगी जो हमारे नाना भांति के समझाने बुझाने पर भी किसी एक बात पर ध्यान न देगी और मुर्गी की एक ही टांग बतलावेगी। कभी हमारा कहा

न मानेगी वरन् धोवी, धीमर, चमार, चुहड़े आदि की वात मानलेगी । सदा गृहों में वह २ अत्याचार मचावैगी कि सारे घरवालों को बन्दर की भांति नचावैगी । दुःख को सुख और अधर्म को धर्म और अनुचित को उचित समझैगी जैसा कि अविद्या का लक्षण है—

**यया तत्वपदार्थं न जानाति भ्रमादन्यस्मिन्नन्यन्निश्चिनोतिसाऽविद्या ॥**

जो ठीक अर्थ न जाना जावे और का और ही समझा जावे उस को अविद्या कहते हैं। जैसा कि आज कल हो रहा है । पुरुष एम. ए. बी. ए. वकील वैरिष्टर वाहर देशोद्धार सोशियल रिलीजस रिफार्म पर वड़े २ लेक्चर दे रहे हैं और कुरीतियों के दूर करने का प्रयत्न कर रहे हैं । उन सम्पूर्ण प्रयत्न और उन के पास किये हुये रिजोल्यूशनों की तामील स्त्रियों की मूर्खता के कारण नहीं होती वरन् उन के विरुद्ध अन्य २ कुरीतियां प्रति दिन वढ़ती जाती हैं । उनकी वढ़िया रायों की तामील उन की स्त्रियों के मूर्ख होने के कारण कठिनही नहीं वरन् असम्भव सी होरही है। हाय ! आज ऐसे २ सुशील धार्मिक विद्वान् पुरुषों को ऐसी २ मूर्खा गंवार स्त्रियों का संग है जो उनके जी का जंजाल और ववालेजान हो रही हैं जैसे अर्द्ध अंग्रेजी अर्द्ध देशी पोशाक पहिनने से शोभायमान नहीं होती वैसीही मूर्खा स्त्री और पण्डित पुरुष की दशा होती है यथार्थ में देखो तो हंस और कौवे का जोड़ा मिलाया गया है । वह कौनसा दुःख है जिस का आज उन्हें सामना नहीं करना पड़ता । जैसे यह अंगरेजों और विद्वानों से मिलना चाहते हैं या वे स्वतः उन से मिलने को आते हैं । यदि इसी तरह कोई मेम किसी वड़े अफसर की वा किसी रईस वा वकील वैरिस्टर आदि की स्त्री से भेंट करना चाहे या चाहती है तो क्या एक विपत्ति का सामना नहीं हो जाता । मैं अपनी जानी हुई दो एक व्यवस्थायें यहां पर लिखता परन्तु वह क्लेशित होंगी । आज अपनी कमियों के सुनने वाले भी वहुत न्यून पुरुष हैं । इस लिये पता न लिखता हुआ प्रार्थना करता हूँ । जिस समय मेम भेंट को आती है उधर वह विद्या के भूषण से

सजी हुई, इधर वह एक अक्षर तक न जान मूर्खता के रंग में रंगी हुई। यदि वह सभ्यता में अपने सदृश नहीं रखती तो क्या असभ्यता और बुद्धि हीनता में कोई इस का भी उदाहरण ढूंढ लासक्ता है ? मेम के डर से उनका वैसे ही नाक में दम आरहा है प्रथम तो उत्तर ही नहीं दे पातीं, यदि दिया भी तो अनाप सनाप। मेम साहिब आकर उन के पतियों से कहती हैं कि (योर वाइफ इज काइट फूल) Your wife is quite fool अर्थात् तुह्मारी स्त्री बिलकुल बेवकूफ है, तुम इतना योग्य जंटिल मैन और तुह्मारा साथी इतना गंवार। क्या उस समय वह एम. ए. बी. ए. बैरिस्टर साहब कुछ लज्जित नहीं होते ? यही कारण है कि आज बहुधा पढ़े लिखे अपनी विवाहिता स्त्रियों से किनारा किये हुए दिखाई पड़ते हैं वे चाहते हैं कि वह योग्यता की बात चीत करें परन्तु वहां उसका अभाव "हम हैं मुशताकेसखुन और उस में गोयाई नहीं" गोकि वह बैरिस्टर साहब मेम साहब के आने के प्रथम घर जाकर बिठलाने बैठने आदि का ढ़ंग सिखला आये थे परन्तु कहीं सिखाये पूत दरबार जाते हैं। वह बतला आये कुछ, उस ने आकर पूछा कुछ, अब क्या करे जो कुछ अपनी बुद्ध्या नुसार उत्तर देतीं वह भी न दे सकीं। आज स्त्रियां यदि किसी अपने नातेदार सम्बन्धी भाई बहिन आदि से मिलती हैं तो प्रथम प्रश्न उनका यह होता है कि अमुक का विवाह हो गया, कब–कब होगा–उस की गोद में क्या है, इस के अतिरिक्त और बात करना ही नहीं जानतीं सच तो यह है कि आज हमको अपनी स्त्री अपना पुत्र कहते, हुए लज्जा आती है क्योंकि वह संस्कृत नहीं इस पर हमारे बहुधा मित्र कहते हैं कि क्या तुह्मारा मन्तव्य स्त्रियों को मेम साहिबा बनाने का है। उनकी ही तरह बेपरदा और स्वतन्त्र रखना चाहते हो। मैं निवेदन करूंगा कि जिस को आप परदा समझे हुए हैं वह तो आप का झूठा परदा है। आज घर में केवल जेठ श्वसुर के सामने परदा जैसा चाहिये मान लीजिये। नहीं तो मेलों, दसहरों, शिवालों, मन्दिरों में जाते हुए फेर पगधार आदि में विवाह बरातों में गाते समय जैसा कुछ परदा होता है वह तो ज्ञात ही है। मेलों में बिसातियों से बातें और झगड़े होते हैं। आज उन परदे

वालियों के कड़े छड़े और छम २ के शब्दों को देखिये और इन बेपरदे वालियों की बग्घी की आवाज । एक मेम का पति कचहरी जाता है, वह बेत हाथ में लेकर सम्पूर्ण सेवकों से ठीक २ काम ले लेती है । जहा किसी ने कुछ भी असावधानी की, एक बेत लगाया हमारे गृहों में दश २ मजदूर काम करते हैं। पति आकर पूछता है कि कितना काम हुआ। वह उत्तर देती है कि हम तो घूंघट मारे थीं, हमें क्या खबर। स्टेशन और मेलों पर वह बैठी ही रहती हैं, चोर उचक्के गठरी ले जाते है। पुरुषों को जैसी और गठरियों की रक्षा करनी पड़ती है इसी प्रकार गठरी की भांति स्त्री की भी । यह दशा उनकी क्यों न हो जब कि उन के नाक कान छिदाकर झुझुनियां डालदी हों, यदि पुरुषों की भी यही दशा की जावै और उन से कहै कि बाहर स्वतन्त्रता से फिरैं तो नहीं फिर सकते । इन मूर्ख स्त्रियों की स्टेशन पर जब पुरुष रेल पर चढ़ जाता हैं और यह रहजाती हैं वा चढ़ जाती हैं और पुरुष रहजाता है अकथनीय हालत होती है रोने पीटने के सिवा कुछ नहीं बन आती धोखेबाजों की बन आती है। यही दशा जब वह तीसरे दर्जे के स्थान में ड्योढ़े में बैठ जाती हैं और वहां से टिकट देखकर उतार दी जाती हैं या बनारस के स्थान में उसे टिकट लखनऊ का दे दिया जाता है और वहां उतार दी जाती हैं वे यदि विदुषी होतीं तो यह दशा क्यों होती शोक कि आज उन्हें ताजी हवा से भी रोका गया है तभी यह बाधाएं सहनी पड़ती हैं नहीं तो सोचिये कि क्या कोई कुविचार रखने वाला पुरुष उस मेम की ओर कुदृष्टि से देख सकता है, वरन् उसके रोब में ही आ जाता है रही मन की दशा वह उसकी शिक्षा पर निर्भर है । आज पुरुषों के खयाल और मन की वृत्ति खोटे कर्मों की ओर झुकी है। अपनी माता भगिनी, कन्या को और दृष्टि से देखते हैं और २ औरतों को और और निगाह से इतना ज्ञान नहीं कि जब दूसरे हमारी को उसी दृष्टि से देखेंगे तो क्या फल होगा। "स्वस्य च प्रियमात्मनः" को भुलाकर स्वार्थ सिद्धि में फंस गये । स्मरण रक्खो, न सब परदेवाली नेक चलन हैं न बेपरदेवाली बदचलन । इस लिये जहां तक हो सके, उन के अन्दर

भले शुभ आचार पतिव्रतधर्म प्रवेश कराने का प्रीति पूर्वक यत्न करो। अपने आचार विचार को शुद्ध करो । रही स्वतन्त्रता, सो मेरा यह सिद्धान्त कदापि नहीं कि मैं जिस वात को चाहे वह बुद्धि और तर्क के स्वभाव के अनुकूल हो या प्रतिकूल, उसके पीछे चलने लगजाऊँ । स्वतन्त्रता के विषय में मैं प्रथम ही वर्णन करचुका हूँ और इस पुस्तक को जिस श्लोक द्वारा तीन भागों में विभाजित किया है, स्वयं ही वतलाया है कि स्त्री को नितान्त स्वतन्त्र न रहना चाहिये, हां जो २ भलाइयां उन में हैं उन्हें ग्रहण करना और दोषों को छोड़ देना यही सत्पुरुषों का काम है । आप भी हंसवत् दुग्ध और जल मिले हुये से दुग्ध और चींटी की नाईं शर्करा और जल और रेत मिले हुये से शर्करा ग्रहण कर लीजिये शेष जल और रेत को रहने दीजिये । जब पुरुष को राज आज्ञा, धर्म आज्ञा के वन्धन में रहना उत्तम है तो स्त्रियों की स्वतन्त्रता कैसी ? ऊपर के उदाहरण से मैं यह दिखलाना चाहता हूँ कि जिस यूरुप अमेरिका आदि को स्त्रियों की योग्यता और सभ्यता पर घमण्ड है जो कि आज उन मेमों को वहुत वड़ा योग्य शिक्षित और गुणयुक्त वतलाते हैं और जो आज हमारे देश की स्त्रियों को गँवार की पदवी देते हैं वही पुरुष स्त्री यदि हमारी पूर्व काल की स्त्रियों की दशा शिक्षा और सभ्यता और सुशीलता की ओर ध्यान दें तो उनकी योग्यता के सामने छक्के छूट जावें । आप इस एक श्लोक ही से परीक्षा कीजिये । देखिये कि कितनी उच्च सभ्यता थी । पुरुष ने स्त्री से परदेश जाते समय पूछा था कि मैं परदेश जाता हूँ, तू क्या चाहती है ? उसने उत्तर दिया है, उसको देखिये—

मा याहीत्यपमंगलं व्रज पुनः स्नेहेन हीनं वचस्तिष्ठेति प्रभुता यथारुचि कुरुष्वेषाप्युदासीनता । नो जीवामि विना त्वयेति वचसा सम्भाव्यते वा न वा, तन्मां शिक्षय नाथ यत् समुचितं वक्तुं त्वयि प्रस्थिते ।

अर्थ—यदि मैं आप से कहती हूँ कि आप न जायें तौ जो कहीं जाने को हो और उससे ऐसा शब्द कह दिया जावे कि न जाओ तो अमंगल होता है इस लिये यह नहीं कह सकती। यदि कहती हूँ कि आप चले जाइये तौ स्नेह हीन (बेमुरव्वती) की बात है क्या मैं ऐसी बेमुरव्वत बन इस बचन के कहने को उद्यत हो सकती हूँ कि आप से कह दूं कि चले जाइये। यदि कहती हूं कि ठहर जाइये तौ एक प्रकार का बड़प्पन होता है। मैं बड़ी तौ क्या अपने तईं आपकी दासी समझे हुये हूं यदि कहती हूं कि जैसी रुचि हो वैसा कीजिये तौ सभ्यता का नितान्त नाश हुआ जाता है। इस कहने से उदासीनता (बेतअल्लुकी) समझा जाती है। मुझ में और आप में तौ अर्द्धांग का सम्बन्ध है। यदि मैं कहती हूं कि आपके जाने से मैं जीवित न रहूंगी। यदि जीवित रही और न मरी तो झूंठ बोलना पडता है जो महा पाप है। इस लिये आप ही बतलाइये कि मैं आप को क्या उत्तर दूं।

अब आप इस सभ्यता को विचार दृष्टि से देखिये और प्रशंसा कीजिये इस पर भी बहुधा प्रमाण चाहते हैं कि पूर्वकाल में स्त्रियों के विदुषी होने का क्या प्रमाण है। इसका उत्तर तो इतना काफी है कि आज इस प्रकाश के समय में सैकड़ों विद्वानों ने हर तरह पर सिद्ध कर दिया है। यदि इस देशको सब प्रकार की उन्नति प्राप्त थी तो बिना स्त्री सुधार और उनके पूर्ण शिक्षित होने के वह उन्नति कदापि सम्भव न होगी। तथापि मैं इस पुस्तक में पिष्टपेषणवत् दिखलाऊंगा। जिस से आप को प्रकट हो जावेगा।

अनेन कर्मयोगेन संस्कृतात्माद्विजः शनैः।
गुरौवसन्सञ्चिनुयाद् ब्रह्माधिगमिकं तपः॥म० २-१६४

अर्थ—यज्ञोपवीत धारण किये हुए लड़का हो वा लड़की शनैः २ वेदों के अर्थ समझाने की योग्यता को बढ़ाते जावें। और देखो यमस्मृति पराशर माधव में लिखा है:—

पुराकल्पेतु नारीणां मौञ्जीवन्धनमिष्यते।
अध्यापनं च वेदानां सावित्रीवाचनं तथा॥

अर्थ—पूर्व स्त्रियों के यज्ञोपवीत होते थे। वेद और गायत्री पढ़ती थीं।

प्रावृतां यज्ञोपवीतिनोमभ्युदानयतजपेत् सोमो-
ऽददद्गन्धर्वायेति॥ गोभि० गृ० प्र० २ क० १॥

जो कन्या उत्तम वस्त्र आदि से प्रावृत आच्छादित और यज्ञोपवीत धारण किये हो उस कन्या को विवाहशाला में लावे और ( सोमोददद् ) इत्यादि मंत्रों को वर पढ़े। इसी प्रकार पारस्कर गृह्यसूत्र में लिखा है॥

"स्त्री उपनीता अनुपनीताताश्च" गृह्यसूत्र प्र० २४ छापा काशी सिद्धि विनायक सं० १९३६

इसी प्रकार पराशर स्मृति के माधवभाष्य में लिखा है कि स्त्रियां दो प्रकार की होती हैं, एक तो ब्रह्मवादिनी दूसरी सदेववधू। उनमें से ब्रह्म वादिनी स्त्रियों को यज्ञोपवीत—उपनयन अग्निहोत्र वेदपठन और अपने गृह में भोजन करने का विधान है। तथा सदेववधू को विवाह करने के समय में उपनयनमात्र कराकर विवाह करना चाहिये। यह हारीत ऋषि का वचन है देखो यजुर्वेद अध्याय ३६ मंत्र २ में मनुष्यमात्र को वेद पढ़ने का अधिकार है।

यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः।
ब्रह्मराजन्याभ्याᳪशूद्राय चार्य्याय च स्वायचारणाय॥

और जो प्रथम स्त्री अध्ययन वयान में लिखा है उस से मनुष्य स्त्री पुरुष दोनों ही आजाते हैं और व्यासमुनि का भी यही सिद्धान्त है कि स्त्री भी मनुष्य जाति में होने से वेद पठन पाठन आदि सत्कर्मों की अधिकारिणी है जैसे कि "आयुर्दा असि इत्याशीः" पूर्वमीमांसा आ० २ स० ३२ और आपस्तम्ब धर्मसूत्र प्र० ११ खण्ड १६ में लिखा है॥

**अथर्वणस्य वेदस्य शेषइत्युपदिशन्ति।**

अर्थ—स्त्री शूद्रों को अथर्ववेद पढ़ना चाहिये। गृहस्थाश्रम में बतलाया है कि कन्या "ध्रुवाहं०" इत्यादि मन्त्रों को उच्चारण करके ईश्वर से प्रार्थना करे कि हे परमात्मा! मैं पति सहित गृह में निर्विघ्नतापूर्वक निश्चल बनी रहूं। ऐसा कहकर पति का और अपना नाम उच्चारण करे।

मन्त्र—

**ध्रुवमसि ध्रुवाहं पतिकुले भूयासममुष्या-**
**साविति। पति मां गृह्णीयादात्मनश्च॥**

सीमन्तोन्नयन संस्कार में लिखा है कि माता बच्चे को निम्नलिखित मन्त्र से आशीर्वाद दे।

**ओ३म् वीरसूस्त्वं भव जीवसूस्त्वं भव जीवपत्नी त्वं भव॥**

विवाह संस्कार में स्त्रियों को मन्त्रों के उच्चारण करने और प्रतिज्ञा वेद मन्त्रों से करने की आज्ञा है। बहुत से मन्त्र विवाहपद्धति व संस्कार विधि में लिखे हैं। हिन्दी प्रसिद्ध दोहा।

दोहा।

**जो हरि सोई राधिका, जो शिव सोई शक्त।**
**जो नारी सोई पुरुष है, यहि में कुछ न विभक्त॥**

उपरोक्त कथन से स्त्रियों का यज्ञोपवीत होना और वेदों के पाठतक का अधिकार पाया जाता है। यह भी नहीं कि ब्रह्मगायत्री के अतिरिक्त उनकी कोई और गायत्री हो स्त्रियों के प्राचीन यज्ञोपवीत होने के चिन्ह अब भी पाये जाते हैं। ब्रह्मचारी जबतक विवाह नहीं होता, एकही यज्ञोपवीत धारण करते हैं। जब विवाह होजाता है तब दो पहिनते हैं। जिस से सिद्ध होता है कि एक अपना और दूसरा अपनी पत्नी का छीन लिया व उतार कर आप धारण कर लिया है। या जैसे कोई २ पुरुष अपनी स्त्रियोंके बदले करवाचौथ वा अहोई आठें आदि व्रत रखते हैं वैसे ही

उनके बदले जनेऊ भी आप पहिने हुये हैं । जैसे व्रतों का फल स्त्री को पहुँच जाना बतलाते हैं या स्त्रियों के कर्म्मों का फल अपने को पहुँचना समझे हुए हैं, ऐसा ही यह उनका विचार है कि यज्ञोपवीत का फल भी स्त्रियों को पहुँच सकता है । मानो पुरुष स्त्रियों के प्रतिनिधि या वकील हो गये हैं । शोक है कि हम अपना हृदय वेद मन्त्रों से भरें परन्तु स्त्रियां मूर्खता से उन्हीं कबरों, पेड़ों से सिर मारती फिरें । अब इस के आगे स्त्रियों को विदुषी और पण्डिता होने के प्रमाण में संक्षेप से कुछ विदुषी स्त्रियों के जीवनचरित्र लिखे जाते हैं । जिससे आप पर अच्छे प्रकार प्रकट होजावेगा कि इस देश में प्राचीन काल में कैसी २ विदुषी स्त्रियां थीं ।

## ❀ ( १ ) कौशल्या ❀

यह श्रीरामचन्द्रजी की माता थीं । जिस समय श्रीमहाराज पिताकी आज्ञा पाकर वनयात्रार्थ चलने लगे और माता से मिलने और आज्ञा प्राप्त करने को उनके पासगये उस समय उन की माता सन्ध्या और अग्निहोत्र कर रही थीं । जैसा कि अयोध्याकाण्ड सर्ग २० से विदित है—

सा क्षौमवसना हृष्टा नित्यं व्रतपरायणा ।
अग्निं जुहोतिस्म तदा मन्त्रवत् कृतमंगला ॥

## ❀ ( २ ) सीता या जानकीजी ❀

इनके विदुषी होने का प्रमाण भी रामायण के बहुधा स्थानों, मुख्य उस स्थान से मिलता है, जब हनुमान उन्हें ढूंढ़ते २ लंका पहुँचे थे और सीताजी राक्षसियों की रक्षा में थीं । हनुमान ने इस लिये कि वह समझ न सकें देववाणी अर्थात् संस्कृत में सीता से वार्त्तालाप किया था । सम्पूर्ण प्रश्नोत्तर संस्कृत में हुये थे ।

## ❀ ( ३ ) सुमित्रा लक्ष्मणकी माता ❀

यह भी बहुत बड़ी विदुषी थीं । इन्हों ने अपने पुत्र लक्ष्मण को वन

जाते समय कैसी उत्तम रीति से शिक्षा की थी । जो रामायण से प्रकट है ॥

जैसा कि—

रामं दशरथं विद्धि मां विद्धि जनकात्मजाम् ।
अयोध्यामटवीं विद्धि गच्छ तात ! यथा सुखम् ॥

## ❀ ( ४ ) जरत्कारु नामी स्त्री ❀

महाभारत उद्योगपर्व में लिखा है कि जरत्कारुनामी एक बड़ा पंडित था । वह बिवाह नहीं करता था । युवा होगया । अन्त को कई प्रतिज्ञाओं के साथ बिवाह करना स्वीकार कर लिया । प्रथम यह कि स्त्री मुझ ऐसी विदुषी हो । द्वितीय मेरे ही नाम की हो । तृतीय कभी मुझे सोते से न जगावे ।यदि सोते से जगा दिया तो उसी समय निकाल दी जावेगी । अंत को एक स्त्री उसी ऐसी पण्डिता, उसी के नाम की मिल गई और उसने वे प्रतिज्ञा भी स्वीकार करलीं तब बिवाह होगया कुछ दिनतक रहते रहे । उसके गर्भ भी रह गया । ऐसी दशा में जब वह गर्भिणी थी, भोजन बना चुकी थी । उसका पति सोता था । इतने में अतिथि ने आकर द्वार पर नाद किया । वलिवैश्वदेव नित्य पति ही किया करता था । बिना भूतयज्ञ हुये भोजन बाहर नहीं निकल सकता था । सोचती है कि यदि पति को जगाती हूँ तो गृह से निकाली जाती हूँ और यदि नहीं जगाती हूँ तो गृहस्थ का धर्म जाता है । यह सोचकर कि यदि निकाली जाऊं तो कुछ चिन्ता नहीं परन्तु धर्म नहीं छोड़ना चाहिये संसार के सम्पूर्ण पदार्थ यहीं रह जावेंगे । केवल एक धर्म साथ जावेगा ।

जैसा कि—

मृतं शरीरमुत्सृज्य काष्ठलोष्ठसमं भुवि ।
विमुखा बान्धवा यान्ति धर्मस्तमनुगच्छति ॥

मरे हुए शरीरको काष्ठ वा ढेले के समान फेंक कर विमुख हुये बंधु जन वापिस चले जाते हैं, केवल एक धर्म ही साथ जाता है । यह सोच

कर झट पतिको जगा दिया। पति ने उठकर बलिवैश्वदेव कर पूर्णतया अतिथि सत्कार किया। जब उससे निवृत्त हुआ, अपनी बात और उस की प्रतिज्ञा स्मरण आई तब अपनी धर्मपत्नी से पूछा कि क्या तुझे मेरी और अपनी प्रतिज्ञा स्मरण नहीं रही? उसने उत्तर दिया कि मुझे स्मरण थी। परन्तु यह सोचकर कि धर्म जाने से घर से निकाला जाना नहीं अच्छा है, आप को जगा दिया जो कि वह सत्यव्रत और सत्य प्रतिज्ञा का समय था, बात नहीं टलती थी। उसे गर्भदशाही में निकाल दिया। सच है:—

**बातहि से दशरथ मरे अरु बातहि राम फिरे वन जाई।**
**बातहिसे हरिश्चन्द्र सहेदुख बातहि सर्वस दियो मुनिराई॥**
**रे मन बात विचार सदा कहु बातकी गातमें राखु सचाई।**
**बातठिकान नहीं जिनकी तिनबाप ठिकान न जानियोभाई॥**

वह स्त्री दूर देश में जाकर एक पहाड़ की खोह में रही और कन्द-मूल फल आदि पर निर्वाह करने लगी। उसी दशा में वहां उसके पुत्र उत्पन्न हुआ। उसका उस माता ने वहीं पालन पोषण किया और स्वयं ही शिक्षा दी। और नामी पंडित बनाया। एक दिन ऋषि वहां होकर निकले और उस पुत्रको वेद स्वर सहित उस कन्दरा में पढ़ते हुये सुन कर चकित होकर देखने लगे कि यहां यह कौन पढ़ रहा है। पास जाकर लड़के से पूछा कि तुझे किस ने पढ़ाया? उत्तर दिया—माता ने। पूछा कि माता कहां है? वह माता के पास ले गया। माता ने अपना सारा हाल कह कर सुनाया और निवेदन किया कि आप इसकी परीक्षा लें। ऋषि परीक्षा लेता है। एक अशुद्धि नहीं पाकर माता को धन्यवाद देता हुआ अपनी राह लेता है।

## ❀ (५) विद्योत्तमा कालिदास की पत्नी ❀

आप पर विदित होगा कि कालिदास विवाह के समय तक निपट

मूर्ख थे। एक अक्षराभ्यासी भी न थे भेड़, बकरियां चराते थे। विद्योत्तमा एक बड़ी विख्यात पण्डिता थी। उस ने सम्पूर्ण बड़े २ पण्डितों को अपने विद्या बल से नीचा दिखाया था। शास्त्रार्थ के समय उस के सम्मुख एक की भी दाल न गलती थी। सब को मुंह की खाना पड़ती थी। उसका प्रण था कि जब कोई मुझ जैसा पण्डित मिलेगा तभी विवाह करूंगी। नहीं तौ जन्मपर्यन्त कुंवारी रहूंगी। क्योंकि उस ने पढ़ा था :—

कामममामरणात्तिष्ठेद् गृहे कन्यर्त्तमन्यपि ।
न चैवैनां प्रयच्छेत्तु गुणहीनाय कर्हिचित् ॥

चाहे सारी आयु कुंवारी रहे, परन्तु असदृश वर से विवाह कभी न करे। जब पंडितों ने देखा कि इस के सामने कुछ नहीं बसाती है तौ कुछ कपटी पुरुषों ने आपस में कपट विचार किया कि इस का विवाह किसी महामूर्ख से करा देना चाहिये क्यों कि जैसा इसे अपने पांडित्य का घमण्ड है वैसीही इस की प्रतिज्ञा भंग होकर महालट्ठ मूर्ख वर प्राप्त हो। यह सोच कर एक बकरियां चराने वाले को ढूंढकर कहा कि तेरा विवाह हम ने एक बड़ी उत्तम जगह उत्तम स्त्री से ठहराया है। तुम चुपचाप रहना। यदि कहना तौ इशारे से कहना। वह विवाह का नाम सुनते ही राजी होगया। सब कहना स्वीकार कर लिया। तब वे कपटी विद्योत्तमा के पास आये। उससे कहा कि एक बड़े नामी मौनी पण्डित आये हैं वह आप से इशारे से शास्त्रार्थ करेंगे। यदि तुम्हारे दो तीन प्रश्नों का भी उत्तर सन्तोषजनक तुम्हारी रुचि के अनुसार दे दें तो तुम्हें विवाह करना होगा। दोनों को इस प्रकार समझा कर शास्त्रार्थ निमित्त एक स्थान पर एकत्र कर दिया। पण्डिता ने एक अंगुली उठाई। इस विचार से कि आत्मा एक है। उसने यह सोचकर कि यह कहती है कि मैं तेरी एक आंख फोड़ दूंगी, दो अंगुली उठाई यह समझा कर कि मैं तेरी दोनों आखें फोड़ दूंगा। उस ने समझा कि यह कहता है कि आत्मा एक नहीं वरन् दो हैं एक जीवात्मा, दूसरा

परमात्मा। समझी कि यह यथार्थ में योग्य पंडित है। फिर उसने पांच अंगुली उठाई। इस विचार से कि पाचों इन्द्रियां तेरे वश में हैं। उस ने यह समझकर कि यह कहती है कि तेरे थप्पड़ मारूंगी मुट्ठी को वन्द करके उस की ओर इशारा किया कि मैं तेरे मुक्का मारूंगा। वह समझी कि यह कहता है कि मैंने सब वश में करली हैं।

ऐसे ही प्रश्नोत्तर होकर विवाह होगया। जब रात्रि के समय पंडिता ने उनकी बात चीत सुनी, तब उसे पता लगा कि यह तो निरक्षर भट्टाचार्य है। निपट मूर्ख है। तब बहुत पछताई और कपट छल रचने वालों को उनके कर्मों का फल मिलने के लिये परमात्मा को सौंप कर प्रथम कुछ शोक किया। पश्चात उसी समय धर्म के पहिले लक्षण धृति को धारण कर और यह सोच कर कि यत्न और पुरुपार्थ करना चाहिये। "पुरुपार्थ ही इस दुनिया में हर कामना पूरी करता है। मन चाहा सुख उसने पाया जो आलसी बन के पड़ा न रहा" "यत्ने कृते यदि न सिद्ध्यति कोत्र दोपः" अर्थ यह है कि जब यत्न करने पर काम सिद्ध न हो तो देखना चाहिये कि हमारे यत्नों में क्या दोप रह गया। परमेश्वर का भरोसा करके स्वयं ही उस के पढ़ाने का यत्न किया और इतनी शिक्षा दी और ऐसा पंडित बनाया, जिस का नाम आज संसार में और प्रसिद्ध महाशयों की भांति प्रकाशित है। शकुन्तला नाटक आदि बहुत सी पुस्तकें उनकी बनाई हुई हैं।

## ❀ ( ६ ) विद्याधरी व उभयभारती ❀

यह अपने समय की स्त्रियों में बहुत बड़ी विख्यात पंडिता थीं। मंडनमिश्र काशी के निवासी प्रसिद्ध पंडित को व्याही थीं। इन दोनों की विद्या कीर्त्ति संसार में छाई हुई थी। प्रयाग में इन के गुण सुनकर स्वामी शङ्कराचार्य उनसे मिलने और शास्त्रार्थ करने काशी पहुँचे थे। जब काशी में पहुँच कर एक कहारिन से शङ्कर ने मंडनमिश्र का स्थान पूछा। उस धींवरी ने निम्नलिखित श्लोक द्वारा शङ्कर को उत्तर दिया।

उसे शंकरदिग्विजय ने नोट के तौर पर बतलाया है कि यह श्लोक उसी पनिहारी का कहा हुआ है । वह उत्तर देती है—

**स्वतः प्रमाणं परतः प्रमाणं शुकांगना यत्र गिरं गिरन्ति ।**
**शिष्योपशिष्यैरुपशोभितांगनमवेहि तन्मण्डनमिश्रधाम ॥**

जहां चिड़ियां स्वतः प्रमाण और परतः प्रमाण कह रही हैं और विद्यार्थी पढ़ रहे हैं वही मंडनमिश्र का धाम है ।

शङ्कराचार्य ने जी में सोचा कि जहां की पनिहारियों की यह दशा है तो न जाने मंडनमिश्र कितना विद्वान् और कैसा पंडित होगा । अन्त में यह विचार कर कि चार और चार के जोड़ का ठीक और सच्चा उत्तर 'आठ' एक ही होगा शेष झूठे होंगे ( सत्यमेवजयतिनानृतम् ) सत्य की जय होती है न कि झूँठ की आगे बढ़े । जब मण्डन के स्थान पर पहुँचे। नियम शास्त्रार्थ के निर्णय हुए । मध्यस्थ कौन हो ? इस पर विचार था कि विजय व पराजय का कौन निर्णय कर बिजय पत्र देगा । तब शङ्कराचार्य ने उभयभारती को ही मध्यस्थ नियत किया और शास्त्रार्थ प्रारम्भ हुआ. शंकराचार्य की विजय हुई । मण्डन की पराजय । उभयभारती फैसला देती है कि ( कविर्दण्डी कविर्दण्डी न संशयः ) अर्थात् शंकराचार्य की जय होने में कुछ सन्देह नहीं । कितना गम्भीर धर्म कार्य किया परन्तु साथ ही सन्मुख आकर यह भी कहती है कि—अभी तक आपने मेरे पति को आधा जीता है : अभी अर्धांगी उसकी मैं जीतने को शेष हूँ । आप मुझ से भी शास्त्रार्थ कर मुझे भी परास्त कर पति को मेरे सहित शिष्य बनाइये । जैसा किः

**अपितुत्वयाद्यनसमग्रजितः प्रथिताग्रणीर्ममपतिर्यदहम ।**
**वपुरर्द्धमस्यनजितामतिमन्नपिमांविजित्यकुरुशिष्यमिमम् ॥**

तब शंकराचार्य ने उत्तर दिया ( ज्ञात होता है कि उस समय किंचित स्त्रियों का मान कम हो चला था ) कि तुम मुझ से शास्त्रार्थ

करने को कहती हो परन्तु महा यशस्वी पुरुष स्त्रियों से शास्त्रार्थ नहीं करते । जैसा कि :—

यदवादिवादकलहोत्सुकतां प्रतिपद्यतेहृदयमित्यबले ।
तदसाम्प्रतंनहिमहायशसो महिलाजनेनकथयन्तिकथाम्॥

तब विद्याधरी ने इन दोनों श्लोकों द्वारा उत्तर दिया । जिन का अभिप्राय यह है कि जो अपने पक्ष का खण्डन करै वह चाहे पुरुष हो वा स्त्री । अपने पक्ष की रक्षार्थ उस का उचित उत्तर देना आवश्यक है और जो आप का कथन है कि स्त्रियों के साथ शास्त्रार्थ करने से अपयश होता है तो क्या आप नहीं जानते कि गार्गी ने याज्ञवल्क्य से और जनक ने सुलभा से शास्त्रार्थ किया और शास्त्रार्थ में विजय भी न पाई थी । क्या आज संसार में याज्ञवल्क्य वा जनक का अपयश है ? जैसा कि :—

स्वमतंप्रभेत्तुमिहयोयतते सवधूजनोऽस्तुयदिवास्त्वितरः ।
यतितव्यमेवखलुनस्यजये निजपक्षरक्षणपरैर्भगवन् ! ॥
अतएवगार्ग्यभिधयाकलहं सहयाज्ञवल्क्यमुनिराडकरोत्।
जनकस्तथासुलभयाऽबलया किममीभवंतिनयशोनिधयः॥

अन्त को शंकराचार्य उत्तर न पाकर शास्त्रार्थ करने पर उद्यत हुये १७ दिन तक निरन्तर शास्त्रार्थ होता रहा । किसी का पक्ष न गिरा । विद्याधरी ने प्रश्न किया कि काम की कितनी कलायें भीतरी वा बाहरी हैं । चूंकि उन्हों ने ब्रह्मचर्य से ही सन्यास लेलिया था । काम की क्रियाओं को जानते ही न थे कहदिया—मैं नहीं जानता । फिर एक मास के पश्चात् शास्त्रार्थ आरम्भ का प्रण करके चले आये और बुलाने पर भी नहीं गये । यह विदित रहे कि शास्त्रार्थ साधारण नहीं हुआ वरन् बुद्धि तर्क वेद शास्त्र के प्रमाण सहित हुआ था । जैसा कि :—

अथसाकथाप्रववृतेस्मतयोरुभयोः परस्परजयोत्सुकयोः ।
मतिचातुरीरचितशब्दभरी श्रुतिविस्मयीकृतविचक्षणयोः ॥

प्रतिफल इस का यह ही निकलता है कि शंकराचार्य यति विद्याधरी नाम सती से परास्त होते हैं हमें इस से कुछ प्रयोजन नहीं । हमारा तात्पर्य्य इस से यह है कि जो स्त्रियों को विद्या और मुख्य कर वेदों के पढ़ने का अधिकार नहीं बताते । उन्हें इस उदाहरण से शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये ।

## ❃ (७) लीलावती ❃

यह राजा भोज की स्त्री थीं । बड़ी विदुषी मुख्य करके गणित में अपना सदृश नहीं रखती थीं । उन्हों ने बीज गणित बनाया था । आज कल के विद्वान् बड़ी २ डिगरी प्राप्त करनेवाले उस के प्रश्नों के हल करने में चकित रहजाते हैं । जैसे कि :—

लीलावती थी इल्म रयाजी में नुक्तेदां ।
वाकिफ हैं जिन के नाम से हर पीर और जवां ॥
हैरान हैं सवालों से जिसके हिसाबदां ।
आलिम भी अन्य देशों के जिसके हैं मदहख्वां ॥
जो लोग होगये हैं रियाजी में बेबदल ।
उसके सवाल उनसे हुवे आज तक न हल ॥

## ❃ (८) द्रौपदी ❃

महाभारत बनपर्व अध्याय २७ श्लोक २ से विदित है कि द्रौपदी बड़ी विदुषी थी :—

**प्रिया च दर्शनीया च पण्डिता च पतिव्रता ।**

## ❃ (९) मैत्रेयी ❃

याज्ञवल्क्य ऋषि की दो स्त्रियां कात्यायनी और मैत्रेयी थीं । जिन में से मैत्रेयी ब्रह्मवादिनी थीं । जैसे कि :—

**अथ ह याज्ञवल्क्यस्य द्वे भार्ये बभूवतुर्मैत्रेयी च ।
कात्यायनी च । तयोर्हिमैत्रेयी ब्रह्मवादिनी बभूव ॥**

जब याज्ञवल्क्य ने वाणप्रस्थ की तैयारी की उस समय उन्हों ने अपनी

स्त्री मैत्रेयी से कहा कि तुम दोनों जो कुछ धन सम्पत्ति है आधा २ बांट लेना। धन दौलत की इनके यहां क्या कमी थी क्योंकि यह राजा जनक के गुरु थे। तब मैत्रेयी उत्तर देती है कि आप जो सम्पदा आदि के बांटने को कहते हैं सो आप यदि सारी पृथिवी रुपये मुहरों से पूरित मुझे देदें तो क्या इनको ग्रहणकर मैं अमर होजाऊँगी ? तब याज्ञवल्क्य ऋषि उत्तर देते है कि धन सम्पत्ति से संसार में कोई अमर नहीं हो सक्ता। हां, जैसा अन्य रुपये वालों की आयु व्यतीत होती है वैसे तेरी भी होगी। धनसे अमर कोई नहीं हुआ। जैसे कि:—

सहोवाच याज्ञवल्क्योयथैवोपकरणवतां
जीविते जीवितं स्यादमृतत्वस्य ॥

तब मैत्रेयी उत्तर देती है कि यदि मैं इससे अमर नहीं होसक्ती। फिर आपही बतलाइये कि मैं उसे लेकर क्या करूंगी ? हां, वास्तव में मैं जिससे अमर होसकूं वह मुख्य धन तत्व पदार्थ जिसे आप अपने साथ लिये जारहे हैं कि मुझ जैसी कात्यायनी और मैत्रेयी दो स्त्रियों को छोड़े जाते हो, धन सम्पत्ति की आकांक्षा नहीं और आप के मुखड़े की झलक, कांति मे रत्तीभर कमी नहीं हुई वरन् इस समय कुछ और ही झलक मारती है। क्यों वहही मुख्य सम्पत्ति मुझे नहीं देते ? जैसा कि:—

येनाहं मृतास्यां किमहं तेन कुर्य्याम्।
यदेव भगवान् वेत्थ तदेव मे ब्रवीतु ॥

अन्त को अपने पतिके साथ वाणप्रस्थ होती है। क्या इतना वैराग्य और इतनी योग्यता बिना विद्या के प्राप्त होसक्ती है ? कदापि नहीं। यह महा कठिन बात है। इतना निर्मोहित होकर वाणप्रस्थ के धारण करने पर उद्यत होजाना प्रत्येक का कार्य नहीं है। मैत्रेयीने जाना था कि:—

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्।

संसार में चमकीली वस्तुओं ने सचाई का मुख ढांप रक्खा है। इसी के कारण कोई कुछ, कोई कुछ कौतुक रचता है। कोई स्त्री के रूप

को देख पतंग की नाईं प्राण त्यागता है । नाना प्रकार की ठगई बेईमानियां इसी के मर्म न जानने के कारण होती हैं । यदि यह चमकीली वस्तुयें शांतिदायक होतीं और चित्त को अशान्त न कर देती होतीं तो संसार में इतने पाप न होते । महमूद ग़जनवी ने इसी के कारण से १७ धावे किये । सम्पूर्ण गजनी सुवर्णमय बनादिया । परन्तु अन्त में महमूद की मृत्यु जिस अशान्ति के साथ हुई है, कौन नहीं जानता । सम्पूर्ण कोष हीरा मणि मुक्तादि का ढेर अपने समीप लगवाता है और किये हुए महान् पापों का स्मरण करके रोता है और अत्यन्त कष्ट के साथ प्राण त्यागता है । मरते समय आज्ञा देता है कि आगे २ जनाज़ा और पीछे २ सारे ढेर निकाले जावें संसार को भय दिलाता है कि मैंने जिन निरपराधी बच्चों और बेचारी विधवाओं का घातक बनकर यह सम्पदा इकट्ठी की आज साथ नहीं लेगया । इस लिये पाप से अनुचित मार्ग से सता कर धन एकत्र करने का स्वभाव न डालो । इसी प्रकार सिकन्दरे आज़म की मौत भी कैसी भयानक है । जनाजा कफ़न से दोनो हाथ बाहर निकले हुये बतला रहे हैं कि "सिकन्दर जब गया दुनिया से दोनों हाथ ख़ाली थे" इस धन के उपार्जन में लगा मनुष्य क्या २ अपराध नहीं करता और फिर इसे पाकर मदमाते हस्ती की नाईं ऐंठकर चलता है, दूसरे की हस्ती नहीं समझता । परमात्मा के नियमों को देखकर कि उसने किसी को न्याय पूर्वक ऐंठने व अकड़कर चलने का अवसर नहीं दिया है । प्रत्येक मनुष्य को अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने को राजा और प्रजा को एकही नियम में बांधा है परन्तु कहां इस ओर ध्यान है । तभी तो कहा है कि:—

मदिरापान कर चैतन्य बैठना होसक्ता है परन्तु धन ऐश्वर्य पाकर यदि उन्मत्त न हो तो मनुष्यता है । सारांश यह है कि प्रायः मनुष्य इसे पाकर उन्मत्त हो मनुष्यता खो बैठते हैं । और भी कहा है कि " प्रभुता पाय काहि मद नाहीं" पर धन्य है मैत्रेयी ! तूने इसे छोड़कर वनबास स्वीकार किया और गृह के नाना प्रकार के भोजन घृत दुग्धादि त्याग कर कन्दमूल को पसन्द किया । तूने ही इस जीवन का सार मुख्य उद्देश्य समझा था कि:—

सन्त समागम हरि कथा, तुलसी दुर्लभ दोय।
सुत दारा और लक्ष्मी, पापिउ के भी होय॥

तूने जाना था मृत्यु का कष्ट उसे ही नहीं होता जो संसारी पदार्थों का प्रथम ही से त्याग कर देता है। जैसे कि कोई मनुष्य जब तक किसी गृह को अपना समझता है उस के मैला रहने, किंचित् हानि पहुँचने पर दुःखी होता है। वही घर जब दान कर देता है वा बेच देता है तब उस में आग लग जाने वा ढहजाने पर भी दुःख नहीं मानता। पापी को पापों का स्मरण बाधा देता है धर्मात्मा को नहीं। जैसा कि शाहजहांपुर से प्रयाग जानेवाले पुरुष को यदि कोई लखनऊ वा कानपुर में उतारता है तो वह घबराता और दुःखी होता है परन्तु जहां प्रयाग पहुँचा फिर बिना उतारे स्वयं ही उतर पड़ता है। ऐसे ही पापी मरने से डरता, रोता, घबराता है। धर्मात्मा ज्ञानी जानता है कि आत्मा नहीं मरता और शरीर अनित्य है इस का अन्त अवश्य होगा। परमात्मा इस का स्वामी न्यायकारी है। शुभ कर्मों के बदले इस से उत्तम स्थान प्राप्त करायेगा। मेरे लिये उतरते ही दूसरी सजी सजाई सवारी खड़ी मिलेगी उस पर चढ़ विचरूंगा। इस हेतु से वह शरीर त्याग ने से नहीं घबराता।

## ❀ ( १० ) अरुन्धती ❀

यह वशिष्ठ ऋषि की धर्मपत्नी थीं। यज्ञों में जाती थीं। इन की प्रतिष्ठा और आदर सम्मान सभा में पुरुषों के तुल्य होता था। इन के धैर्य और पति सेवा की बड़ी प्रशंसा है। जब विश्वामित्र ने इन के पुत्रों का वध किया था, इस हेतु कि वशिष्ठ जी के पास हथियार बन्द शस्त्र धारण किये हुये आकर अपने तईं ब्रह्मर्षि कहलाते थे,—परन्तु इन्हों ने जब तक शस्त्र छोड़कर नहीं आये, राजर्षि ही कहा। अरुन्धती ने पति से कुछ नहीं कहा था केवल धैर्य से काम लिया था।

## ❀ ( ११ ) मन्दालसा ❀

यह भी एक विदुषी स्त्रियों में से थीं। इन्हों ने पुत्र को ब्रह्म-

ज्ञान की शिक्षा दी। जैसी समयानुकूल उन्हों ने स्वयं पाई थी कि हे पुत्र ! यह संसार स्वप्नमात्र है, मोह निद्रा को त्याग भ्रमजाल से निकल अपने को शुद्ध जान। यहां पर केवल अभिप्राय स्त्रियों के पाण्डित्य दिखलाने से है। जैसे कि:—

शुद्धोसि बुद्धोसि निरंजनोसि संसारमायापरिवर्त्तितोसि।
संसारसुप्तिं त्यज मोहनिद्रां मन्दालसा वाचमुवाच पुत्रम्॥

## ❋ (१२) अनसूया ❋

यह अत्रि ऋषि की पत्नी थीं। जब सीता जी रामचन्द्र के साथ बनयात्रा में इन के स्थान पर ठहरी थीं तब इन्हों ने अति उत्तम उपदेश सीता को किया था जैसा रामायण से विदित है। गृहस्थ के धर्म पति सेवा के मर्म को भलीभांतिं दर्शाया था।

हो बुद्धिमान् ज्ञानि गुणखानी। चहु निर्बुद्धि होय अज्ञानी।
निर्बल होय कि हो बलवाना। पति सेवा कीन्हे कल्याना॥

जो उनके विदुषी होने को स्पष्ट प्रकट करता है—

## ❋ (१३) रुक्मिणी ❋

इन्हों ने श्री कृष्ण को कई बार पत्र भेजे थे जैसा कि भागवत, रुक्मिणीमंगल से विदित है।

## ❋ (१४) मृगनयनी ❋

यह राव मानसिंह राणा ग्वालियर की रानी गान विद्या में बड़ी निपुण थीं। इन्हों ने ४ प्रकार के राग स्वयं निकाले थे। तानसेन प्रसिद्ध गवैया इन रागों के सुनने को आया था। जिस की समाधि यहां पर बनी हुई है।

## ❋ (१५) मीराबाई ❋

यह चितौड़गढ़ के राजा कुम्भ की रानी थीं। इस ने भक्ति और

वैराग्य के उत्तम भजन बनाये थे जो वैष्णव सम्प्रदायों के यहां गाये जाते हैं। जो जयदेव कवि से कुछ कम न थी।

## ( १६ ) काशी के राजा की कन्या की पुकार और विदुषी होने का प्रमाण।

जब बौद्धमत सारे भारतवर्ष में फैल गया था और उसी दिन उस के पिता ने शिखा सूत्र दूर करा बौद्धमत को स्वीकार किया था। कन्या ने एक शिखा सूत्र धारण किये हुए ब्राह्मण को अटारी से देख, रोकर इन शब्दों से हाहाकार मचाया था:—

**किं करोमि क्व गच्छामि को वेदानुद्धरिष्यते।**

तब कुमारिल भट्टाचार्य जी ने जो महल के नीचे जारहे थे, सुन कर उत्तर दिया था:—

**मा चिन्तय वरारोहे भट्टाचार्योऽस्ति भूतले॥**

ए धार्मिक कन्या तू इतनी चिन्ता मतकर ! अभी भट्टाचार्य वेदों के उद्धारार्थ उपस्थित है। और उन्हीं ने प्रयत्न किया। गो वह पूर्णतया अपने कार्य में सफलता प्राप्त न कर सके परन्तु उनके पश्चात् गुरु गोविन्दाचार्य के शिष्य स्वामी शंकराचार्य ने बौद्धमत को जड़ पेड़से भारत से निकाल दिया। प्यारी वहिनो ! इस राजकन्या की ओर टुक ध्यान दो कि कितना धर्म भाव और वेदों का गौरव इस के आत्मा में था। बस तुम भी इस से शिक्षा ग्रहण कर वेदों के उद्धार में लग जाओ।

—:o:—

ओ३म्

# द्वितीयाध्यायारम्भः

इस में गर्भाधान से लेकर बच्चे के उत्पन्न होने और यथायोग्य पालने और शिक्षा ग्रहण कराने का वर्णन है, जो उसको गृहस्थ बनने से प्रथम माता पिता गुरु से मिलेगी।

## ❋ गर्भाधान ❋

प्रथम यह जानना आवश्यक है कि इस क्रिया के करने का अधिकारी कौन है। जब यह पता लग जावे तब इस क्रिया का वर्णन करना लाभदायक हो सकता है। यह भी जानना अति आवश्यक है, कि इस क्रिया का मुख्य अभिप्राय क्या है। मैं यहा पर बहुत संक्षेप से मुख्य २ बातें दिखलाऊंगा। इस हेतु से प्रथम यह दिखलाया जाता है कि इस क्रिया को वह कर सकता है जो प्रथम ब्रह्मचारी रह चुका हो। इस लिये यह बतलाना आवश्यक है कि ब्रह्मचर्य क्या है? और ब्रह्मचारी किसको कहते हैं? और गर्भाधान कब और क्यों करना चाहिये?

## ❋ ब्रह्मचर्य ❋

यह ब्रह्म और चर्य दो शब्दों से मिलकर बना है। ब्रह्म के अर्थ वीर्य वेद परमेश्वर के हैं। चर्य के अर्थ चरना। जिसका अभिप्राय यह है कि जितेन्द्रिय रहना, वेदों को पढ़ना और ईश्वर प्राप्ति करना ब्रह्मचर्य कहाता है। ब्रह्मचारी वह है जो वीर्य को चरै अर्थात् जितेन्द्रिय रहे और वेदों को पढ़े और ईश्वर, प्राप्ति करे। इस लिये ब्रह्मचर्य से दो आशय हैं। एक यह कि जितेन्द्रिय रहकर शरीर को बलिष्ठ और पुष्ट बनाना। द्वितयि यह कि वेद विद्याको पढ़कर सत्य गुरु रूपी सन्था से ज्ञान रूपी अंजन अविद्यान्धकार रूपी धुन्ध से राहत बुद्धिरूपी नेत्र

को बनाकर अर्थात् ईश्वर प्राप्ति की शिक्षा ग्रहण कर जिस तरह शरीर को बलिष्ठ बनाने की आवश्यकता है उसी तरह आत्मा को पुष्ट बनाना अर्थात् शारीरिक आत्मिक दोनों प्रकार की उन्नति करना ब्रह्मचर्य का अभिप्राय और ब्रह्मचारी का मुख्य उद्देश्य है। संसार में अमृत का नाम सुना है परन्तु नहीं समझते कि अमृत क्या है? अमृत वह है जिस से अमर हो जावे अर्थात् मरे नहीं। वह वीर्य ही है। जिस की रक्षा करने से संसार में भीष्मपितामह अमर हो गये और सन्तान न होने पर भी पितामह कहलाये और शुकदेव जी भी अपने पिता व्यास ऋषि के समझाने पर भी विवाह न करके नाम पागये। इन के विषय में प्रसिद्ध है कि एक वार युवावस्था में राजकन्या और स्त्रियों के नदी में नंगे स्नान करते समय उनके बीच में होकर निकल गये परन्तु किसी ने इन से पर्दा नहीं किया और जब पीछे से इनके वृद्ध पिता व्यास आये तब सब स्त्रियों ने पर्दा किया तब व्यास ने इस का कारण उन स्त्रियों और कन्याओं से पूछा तब उन्हों ने बतलाया। मैं आप को जानती हूँ। आप ऋषि व्यास हैं। परन्तु आप ने शुकदेव को उत्पन्न किया है। आप यह जानते हैं कि स्त्री किस काम में लाई जाती है? क्या २ शर्म के स्थान हैं। इस लिये आप से परदा किया गया। शुकदेव को इन बातों का ज्ञान ही नहीं। इनसे परदे की क्या आवश्यकता थी। इस वीर्य्य रक्षा का प्रताप यह है कि जब तक संसार स्थिर है वह दोनों इस वीर्य के महत्व के साथ स्मरण रहेंगे। यह समझना कि अमृत वह है जिस के पान से जीवका इस शरीर से वियोग न हो, केवल भ्रम और बालकपन है। संसार में नियम है कि जो वस्तु उत्पन्न हुई वह नष्ट होगी दशा बदलेगी, वह कभी नित्य नहीं हो सकती। इस लिये मुख्य अमर होना जो था वह बताया गया और इन के अतिरिक्त और बहुत से ऋषि मुनि इस के संचय करने से अमर हो गये। दूसरा गुण यह बताया जाता है कि जिस से मृत्यु प्राप्त हुआ जीवित हो जावे। उस को भी समझ लीजिये कि जिस समय स्त्री ऋतुकाल से निवृत्त होती है, ऋतुकाल में विकारी रक्त मृतक के सदृश हो जाता है, वही निकलता है। निवृत्त

होने पर भी कुछ वही रुधिर शेष रह जाता है, उसी मृतक रक्त पर एक बिन्दु वीर्य पड़ने से हम और आप सब जीवित हुये हैं। परन्तु शोक का स्थान है कि आज हम सब इस अमृत के निरादर करने वाले और विष रूपी विषयों के आदर करने वाले स्त्री, पुरुष बन गये। वीर्य का जब तक शरीर में बास रहता है तब तक किसी प्रकार का रोग व निर्बलता शरीर में नहीं आती। जब तक इस का शरीर में बास रहता है, पुरुष प्रति समय हर्षित प्रफुल्लित मग्न रहता है। पचीस वर्ष की आयु तक यह वीर्य पुरुष के शरीर में बढ़ता और फूलता है। यदि इस से प्रथम यह सार पदार्थ रत्न निकल जाता है, या यूं कहिये कि कच्चा तोड़ा अर्थात् नाश किया जाता है फिर आयु भर चाहे जितनी पुष्टिकारक और बलवर्धक घी दुग्ध मलाई आदि खाइये परन्तु मुख सदैव कान्ति हीन कुम्हलाया हुआ मृतक के सदृश ही रहता है। जैसे दीपक के बिना सारा गृह अन्धेरा रहता है वैसे ही इस के बिना मनुष्य का सब तेज नष्ट हो जाता है। दांतों में मुक्ताओं के सदृश भड़क, नेत्रों में झलक, मुखड़े पर चमक, कान्ति की दमक, सब इसी पर निर्भर है। यही सम्पूर्ण शरीर का राजा है। जब राजा सुस्त निर्बल होता है तो प्रजा और सेना भी सुस्त, निर्बल होजाती है। इस का अधिक व्यय करने वाला सदा लज्जित होता है और इस का संचित करनेवाला सर्वगुणों से संयुक्त हो बड़ाई प्राप्त करता है। जिन्हों ने इस की रक्षा की अर्थात् संचय किया, नाम पा गये और धर्मात्मा कहला गये। देखो :—

शुकदेव को इसी से पदवी थी ये मिली।
बरतर बुजुर्गतर हुये भीष्म पितामह जी॥
इसके तुफैल से हुये मशहूर कृष्ण जी।
योगी हुये इसी के सबब गोपीचन्द भी॥
जेर थे आफताब इसी के सबब हुये।
क़तरे थे दुर्ने आब इसी के सबब बने॥

इसी लिये वतलाया है कि स्त्री पुरुष दोनों ब्रह्मचर्य धारण कर सन्तान उत्पन्न करने के हेतु ( ऋतौभार्य्यामुपेयात् ) वा-

ऋतुकालाभिगामीस्यात् स्वदारनिरतस्सदा।
पर्ववर्जंव्रजेच्चैनां तद्व्रतोरतिकाम्यया॥

ऋतुकाल में ही जब स्त्री रजस्वला होचुके पहली चार रातों को छोड़कर स्नान की तिथि से सम विषम रात्रियों का विचार कर के अपनी ही स्त्री से पुरुष और अपनी ही पुरुष से स्त्री भोग करे ऐसा करने से ऋतुगामी होने से पुरुष गृहस्थ में भी ब्रह्मचर्य के सुख भोगता है। विपरीत दशा में सम्पूर्ण सुखों से हाथ धोना पड़ता है। इस के अतिरिक्त ब्रह्मचर्य और गृहस्थ दशा में इन आठों प्रकार के मैथुनों से बचने का यत्न करे। १ दर्शन, २ स्पर्श, ३ भाषण, ४ एकान्त सेवन, ५ विषय कथा, ६ परस्पर क्रीड़ा, ७ विषय का ध्यान, ८ संग। प्राचीन काल में ऋषि मुनि, विद्वान् धार्मिक स्त्री पुरुष गर्भाधान क्रिया को केवल सन्तान उत्पत्ति के अर्थ समयानुकूल करते थे। और जितनी अपनी सामर्थ्य सन्तान के लालन पालन प्रत्येक प्रकार की शिक्षा और व्यय आदि की अपने में देखते थे, उतनी ही सन्तान उत्पन्न करते थे। यह नहीं कि आज सन्तान तो होती जाती है परन्तु उन के पालन पोषण की ओर कुछ ध्यान नहीं दिया जाता। जिसका फल यह होता है कि कोई चोर कोई जार कोई छली, कोई कपटी आदि बनता है। वा कोई धन, पृथ्वी स्त्री के लोभ में फंसकर धर्म खोता है। बालक की शिक्षा और सुधार की ओर तो ध्यान नहीं सन्तान अभी निरी बच्चा है, दूध के दांत उखड़े नहीं, द्रव्य कमाना कहां। अभी दश वर्ष की आयु नहीं, परन्तु माता पिता के मनमें वह अधैर्य और बेचैनी है कि कौन दिन हो जो उस के विवाह के बोझ से उद्धार हो। इधर विवाह हुए कुछ दिन नहीं बीते कि उन के मन में दूसरी इच्छा उत्पन्न होने लगी कि परमेश्वर वह कौन दिन आवेगा जो मेरे लल्लुआ के मुन्ना दिखायेगा। और मेरे मन के संकलप पूरे होंगे।

इस कारण युवावस्था से प्रथम ही दोनों को एक कोठरी में बन्द करने लगे । उन की भलाई की ओर क्षणभर भी ध्यान नहीं । चाहे उसकी आने वाली अगली सारी आयु नष्ट भ्रष्ट हो जावे। चाहे पुरुषार्थ हीन होकर दो २ दानों को मारा २ फिरे । चाहे युवावस्था तक को न पहुंचे, कि स्वर्ग पधारे । उस बच्चे की वह दुर्दशा है कि परमेश्वर पनाह, इधर लिखने पढ़ने के परिश्रम से मस्तक के बल का व्यय उधर माता पिता और सम्बन्धियों की दया गृहस्थ का कार्य। इधर ब्रह्मचर्य की क्षीणता । थोड़े ही दिनों में " राम २ बोलो सत्य है " होजाता है । उस समय माता पिता शिर पीटते हैं । नहीं सोचते कि इस के इतने शीघ्र स्वर्ग सिधारने के कारण हमही हैं । वह बेचारे क्या जानें कि ब्रह्मचर्य किसे कहते हैं । उससे क्या लाभ होता है । जब उन्हों ने ' अष्टवर्षा भवेद् गौरी ' के अतिरिक्त कुछ सुनाही नहीं और वह स्वतः ही हाड़ों की माला बन गए हों । इन्हों ने आदि से ही दुःख को सुख समझा । जिस प्रकार अपना खोजमारा उसी तरह लल्लुआ का सत्यानाश किया । पहिले स्त्री पुरुषों को आदि से ही ऐसी शिक्षा मिलती थी जिसमें वीर्य के हानि लाभ भली भांति उन्हें सुझाये जाते थे । उन्हें भी श्री स्त्री का ठीक अर्थ सम्बन्ध समझा दिया जाता था, कि प्रथम धी पहिले विद्या ग्रहण कर बुद्धिमान बने, फिर श्री अर्थात् द्रव्य उपार्जन कर धनाढ्य बने, तब स्त्री का नाम ले। पाहुन को जबही बुलाना चाहिये जब प्रथम घर में खाने का सामान करले, इस लिये यदि पैदा नहीं करता तो बिवाह करना उचित नहीं, इसी भांति कन्या भी जब तक युवा न हो जावे तब तक बिवाह न करे आज बच्चा उत्पन्न हो जाता है दूध है नहीं औषधियों से पैदा किया जाता है जिससे निर्वलता बहुत बढ़ जाती है और थोड़ी सन्तान होने से वह प्रसूति आदि रोगों में फंसकर शीघ्र मरजाती है । इस लिये कच्चा वीर्य छेड़ना नहीं चाहिये, पहिले इधर व्यायाम कराया जाता था उधर उपदेश द्वारा वीर्य रक्षा के लाभ समझाये जाते थे, विषय कथा कानतक पहुँचती ही न थी हर एक प्रकार से शारीरिक, आत्मिक उन्नति के लिये

वीर्य रक्षा कराई जाती थी । वह युवा होने पर समयानुकूल सृष्टि व्यवस्था स्थिर रखने और केवल सन्तानोत्पत्यर्थ विषय भोग और गर्भाधान करते थे, क्योंकि वह जानते थे कि विषय भोग में सुख लेश मात्र नहीं है । सम्पूर्ण दुःख ही दुःख है । अज्ञानी अज्ञानवश सुख जानते हैं । जैसे कुत्ता अपने मुंह में सूखी हड्डी पकड़े हुवे चवाता है उस हड्डी के कारण रक्त उसके मसूड़ों में घाव हो २ कर निकलने लगता है। वह उस रक्त को पीकर और अधिक हड्डी कटकटाता है । वह यह नहीं समझता है कि यह रक्त हड्डी से नहीं आ रहा है, यह तो मेरे मसूड़ों ही से निकल रहा है, परन्तु वह उसे सुख समझे हुए है । जहां दूसरी हड्डी मिल जाती है, उसकी फिर वही दशा हो जाती । ऐसी ही दशा विषय सुख की है । स्त्री समझती है कि यह आनन्द पुरुष से आ रहा है, पुरुष जानता है कि स्त्री से । वास्तव में वह स्त्री पुरुष अविद्या अज्ञान के कारण उस के तत्व मर्म नहीं समझते । जिस प्रकार हड्डी में रक्त नहीं वैसे ही विषयों में सुख नहीं । वास्तव में वह अपने ही से रुधिर रूपी वीर्य निकाल २ कर अपने ही शरीर का नाश मार २ कर उसको घायल और निर्बल कर रहा है । जैसे खुजली खुजलाने से अधिक होती जाती है या जैसे वार २ हड्डी पाने पर कुत्ता वारंवार अपने मसूड़ों को घायल करता है । यही दशा स्त्री पुरुष की होकर अपने दुःखों को सुख समझ रहे हैं । आज अशुद्ध विचार होने के कारण वीर्य नीचे को गिर जाता है, परन्तु जब उत्तम शुद्ध विचार होते हैं तब वही वीर्य ऊर्ध्वगामी हो जाता है । आज उन अपवित्र विचारों ही का यह फल है कि हर समय स्त्री पुरुष वैद्यों, ज्योतिषयों, रम्मालों नौते, सियानों के द्वार की धूल छान रहे हैं, आज वह समय आगया कि हजार में एक ऐसा नहीं मिलता कि जिस को किसी प्रकार का रोग न हो । किसी को अजीर्ण, किसी को ववासीर, प्रसूत, क्षीण, गर्मी आदि अनेक रोग घेरे रहते हैं । जो यह सब अपने ही कर्मों के फल हैं। जो उसी अविद्या अज्ञान के कारण प्राप्त हुए हैं । स्त्रियां स्वयं मरीं पुरुषों को मारा वा पुरुष आप मरे, स्त्रियों का घात किया । यदि दोनों

धार्मिक होते, नियमानुकूल गृहस्थ करते, तौ आज यह दशा क्यों होती बहिन भाइयों ! देखो कि ऊपर जो आठ प्रकार के मैथुनों से बचने की तुम्हें शिक्षा की गई है उन में से प्रत्येक का वर्णन विस्तार पूर्वक है। पुस्तक बढ़ जाने के भय से नहीं लिखा गया । इतने ही से समझ लेना कि उस में हंसी, ठठोली भी करना बर्जित है। पहले परमेश्वर को सर्व व्यापक, अन्तर्यामी, न्यायकारी जानते थे । प्रत्येक स्थान में पाप कर्मों से बचते थे। पराई स्त्री पुरुष को माता पिता के तुल्य जानते थे। जैसे कि

मातृवत् परदारेषु परद्रव्येषु लोष्टवत् ।
आत्मवत् सर्वभूतेषु यः पश्यति स पंडितः ॥

इस लिये पुरुष कभी भी साली, सलहज, भावज आदि से भी हंसी न करते थे। न स्त्रियां, नन्दोई, देवर आदि से । आज जिसे देखो वह साली, सलहज भावजों से उनकी रुचि अनुसार तौ अवश्य ही वरन् इसी प्रकार के नाते रिश्ते और भी सैकड़ों स्त्रियों से लगा करके वह हँसी करते रहते हैं कि जिस की कोई सीमा नहीं । होली में पिचकारियां भर २ तक २ मारी जाती हैं। हाय ! आज इस वाणीयुक्त हंसी को पापही नहीं समझा जाता है बरन् कहती हैं कि "होली में बाबाही बर लागे"! शोक है कि यह नहीं समझते कि यजुर्वेद के ब्राह्मण में बतलाया है :—

यन्मनसा ध्यायति तद्वाचं वदति यद्वाचा वदति
तत्कर्मणा करोति यत्कर्मणा करोति तदभिसम्पद्यते ॥

जो मन में होता है वह वाणी में आता है जो वाणी पर आता है वह किया जाता है, जो किया जाता है उसी का फल प्राप्त होता है अर्थात् जब तक मन में नहीं, वाणी पर आही नहीं सक्ता । और बतलाया है कि जब तक मूर्ख से मूर्ख भी किसी काम का प्रयोजन वा उद्देश्य नहीं समझ लेता, कोई काम आरम्भ ही नहीं करता और न किसी बात के कहने वा करने पर तत्पर होता है ।

**प्रयोजनमनुद्दिश्यन मन्दोऽपि न प्रवर्त्तते ।**

वरन् यहां तक वतलाया है कि निष्प्रयोजन नेत्रों का संकोच विकाश अर्थात् खुलना और वन्द होना भी नहीं होता । जैसा कि :—

**अकामस्य क्रिया काचिद् दृश्यते नेह कर्हिचित् ।**
**यद्यद्धि कुरुते किंचित्तत्तत्कामस्य चेष्टितम् ॥**

अर्थ—मनुष्यों को निश्चय करना चाहिये कि निष्काम पुरुष में नेत्र का संकोच विकाश तक का होना सर्वथा असम्भव है । इस से यह सिद्ध होता है कि जो कुछ भी किया जाता है वह चेष्टा कामना के विना नहीं होती । परन्तु जो वात हंसी ठठोली में भी कही जाती है वह उसके मन में विद्यमान है । पहिले ऋषि इन के मर्मों को जानते थे तव तो मन वचन कर्म तीनों प्रकार के पाप मानते थे । उस समय उन्हें वह कौनसा सुख था जो प्राप्त न था । कितने हर्ष और आनन्द का राजा अश्वपति का समय था कि उन के राज्य भर में कोई चोर जार शरावी मांसभक्षी झूठा कपटी आदि नहीं था । जव ऋषि उन के पास आत्म विद्या की शिक्षा ग्रहणार्थ आये थे, राजा यज्ञ के प्रवन्ध में लगा हुआ था । उन से प्रार्थना की कि आज आप ठहरिए, यज्ञ में सम्मिलित हूजिये, प्रातःकाल मैं आप को जो कुछ मुझे आता है वताऊँगा । उन्हों ने ठहरने से इनकार किया । तव राजा ने उत्तर दिया कि ऋषियों धर्मात्माओं को अधर्मी राजा के यहां नहीं ठहरना चाहिये । मेरे राज्य भर में कोई ऐसा नहीं है कि जो चोर, झूठा, जार, ज्वारी हो । इन वातों का कहीं नाम नहीं सुना जाता । ऐसा भी कोई नहीं है कि जिस के पास कोई वस्तु हो और उससे कोई प्रार्थी हो और न देदे । हंसी में भी झूठ नहीं वोला जाता । वहुतसी भलाइयां वताई थीं । जव हंसी तक पाप जानते थे, तभी तो पूर्ण ब्रह्मचारी होते थे । देखो जव लंका जीतकर श्रीरामचन्द्र अयोध्या आते थे मार्ग में ऋषि भरद्वाज के आश्रम पर ठहरे थे । ऋषियों ने उन से पूछा कि यह तो वतलाइये कि मेघनाद को किसने मारा ? रामचन्द्र उत्तर देते हैं कि आपने रावण कुम्भकर्णादि वड़े २ योद्धाओं को नहीं

पूछा, केवल मेघनाद को क्यों पूछा। बतलाया कि मेघनाद पूर्ण ब्रह्मचारी था। उस ने बारह वर्ष तक अखण्ड ब्रह्मचर्य धारण किया था। उस का मारना किसी उस से अधिक अखण्ड ब्रह्मचारी का काम था। उत्तर दिया कि लक्ष्मण ने मारा है। उन्हें आश्चर्य हुआ, लक्ष्मण! जिन के साथ सीता थीं, तो फिर दर्शन भाषणादि आठ प्रकार के मैथुनों से लक्ष्मण कैसे बच सक्ता था, और बिना बचे किस प्रकार ब्रह्मचारी रह सक्ता था। उस समय बतलाया है कि लक्ष्मण के ब्रह्मचारी होने में सन्देह नहीं हो सक्ता। दृष्टान्त के तौर पर ऋष्यमूक पर्वत का वृत्तान्त वर्णन किया है कि जब सुग्रीव से भेट हुई, सुग्रीव ने बतलाया कि एक स्त्री चिल्लाती हाहाकार मचाती हा राम! हा लक्ष्मण! कहती अपने वस्त्र आभूषणों को चिन्हार्थ फेंकती जाती थी। जब वह आभूषण लाकर दिखलाये और सुग्रीव ने लक्ष्मण से पूछा कि लक्ष्मण! पहचानो कि यह सीता के हैं? उस समय जो लक्ष्मण ने उत्तर दिया है वह उत्तर ही उन के अखण्ड ब्रह्मचारी होने में प्रमाण है। रहा देखना वा बात करना यह तो माता भगिनी से भी होता है। जब तक मन मलीन न हो, पाप दृष्टि से न देखा जावे, ब्रह्मचर्य खण्डित नहीं होता। वहां पर लक्ष्मण ने यह उत्तर दिया है:—

केयूरे नैव जानामि नैव जानामि कुण्डले।
नूपुराण्येव जानामि नित्यं पादाभिवन्दनात्॥

मैं कुण्डलों को नहीं पहचानता क्योंकि मैंने कभी सीता जीके मुंह की ओर दृष्टि भर के नहीं देखा। न मैं बाजूबन्दों को जानता हूँ इस लिये कि हाथों से ऊपर निगाह नहीं की, हां इन बिछुओं को मैं अवश्य पहचानता हूँ कि यह सीता ही के हैं। उसका कारण यह है कि मैं जब नित्य पैर छूता था तब इन्हें देखता था। यह बात सुनकर ऋषि को निश्चय हो गया कि निःसन्देह लक्ष्मण ब्रह्मचारी रहे। यदि ब्रह्मचारी न रहते और दो वर्ष अधिक न होता तो मारही कैसे सकते थे। देखो बहुत काल व्यतीत होगया, लक्ष्मण नहीं रहे परन्तु उनका नाम इस ब्रह्मचर्य

के महत्व के साथ सदैव के लिये इस अमृत के संचय करने से अमर होगया। द्वितीय बात यह बतलाई थी कि यदि लक्ष्मण को ब्रह्मचर्य का पूर्ण ध्यान न होता तो शूर्पणखा जैसी सुन्दर रूपवती स्त्री कि जिस के नाखून सूप के सदृश थे उसके बारम्बार हठ करने पर गन्धर्व विवाह क्यों न करलेता क्यों उसके नाक कान काटकर सांसारिक जनों को यह शिक्षा देता कि ब्रह्मचारी व्यभिचारिणी स्त्रियों की नाक कान काट लेते हैं। इसी की पुष्टि करता हुआ एक उदाहरण महाभारत से हाथ आता है कि जब अर्जुन ने वन में राक्षस को मारा था। उसने अन्त समय शोक के साथ प्रकट किया कि शोक है! इस बात का कि आप का ब्रह्मचर्य कुछ दिनों मुझ से अधिक है नहीं तो भला आप क्या मुझे जीत पाते इस लिये हे रामायण महाभारत के पढ़नेवालो ! हे राम लक्ष्मणादिक अपने पूर्वजों का मान करनेवालो ! जब तक उन के सदृश होकर ब्रह्मचर्य सेवन और भावजों की माता के समान प्रतिष्ठा नहीं करते, कुछ भी लाभ नहीं है।

**अनुज वधू भगिनी सुत नारी, सुनु शठ यह कन्या समचारी**

फिर उन के साथ हँसी ठट्ठा करने से कभी भी उन के भक्त नहीं कहला सकते। जैसा कि:—

सवैया।

**धर्मको लेश नहीं तनमें, तौ कहा भयो धन के अभिलाखे।**<br>
**शूरबनो दसशीस खबीस, तौ कहा भयो चपिगयो जबकांखे**<br>
**रामके काम पै ध्यान नहीं, तौ कहा भयो रसरामके चाखे।**<br>
**जीके क्या करिहौ जगमें, जब बात गई तब प्राणके राखे॥**

इस कवित्त के तृतीय पद से यह अर्थ निकलता है कि यदि रामचन्द्रादि महापुरुषों मर्य्यादा पुरुषोत्तमों के कामोंपर ध्यान न करके उन्हें अपने जीवन का उद्देश्य नहीं बनाते तो केवल राम २ कहने से कुछ नहीं

हो सकता। चोरी, जारी आदि निन्दित कर्म सब करते जावें और राम राम करते रहें इस से कुछ नहीं हो सक्ता। जैसे खाजा हलवाई की दूकान पर है। केवल उसके नाम लेने से स्वाद नहीं मिलता, जब तक मोल लेकर लाया और खाया न जावे, मुँह मीठा नहीं हो सकता। वा जैसे कलेक्टर हाकिम ज़िला किसी लोकलबोर्ड के मेम्बर को सफ़ाई कराने का आर्डर दे, वह सफ़ाई तौ करावे कहीं प्रातःकाल से सायंकाल तक और सायंकाल से प्रातःकाल तक कलेक्टर ही कलेक्टर किया करे और कलेक्टर को मालूम हो जावे कि इसने सफ़ाई तौ कराई नहीं परंतु मेरा नाम लेता रहा है तौ क्या कलेक्टर उस से प्रसन्न होगा वा उसे मूर्ख समझ कर दण्ड न देगा ? बस ऐसेही बहिन ! भाइयो ! विचार से देखो कि जो काम उन्होंने स्वतः करके आप को दिखाया, आप को करने की शिक्षा दी, उनकी प्रसन्नता उनकी आज्ञाओं के पालन करने से ही हो सक्ती है अन्यथा नहीं। किंचित् तौ सोचा करो कि जब माता पिता तक बिना आज्ञा पालन किये प्रसन्न नहीं रहते तो वे कैसे प्रसन्न होंगे यदि बिना किये ही रंग चोखा आता तौ वे स्वतःही इतना कष्ट क्यों सहते। क्यों इन्द्रियों को तुम्हारी नाईं भोग न भुगाते नहीं २, वे जानते थे कि यदि इन्द्रियों को उनके विषयोंसे न रोका जावे तौ वे स्वतः ही विषयों में प्रवृत्त हो जाती हैं। जैसे गिराने के लिये परिश्रम की इतनी अवश्यकता नहीं जितनी उठाने की होती है। पृथ्वी की आकर्षण शक्ति उन्हें आपही गिरा रही है और अपनी ओर खींच रही है। शिक्षा लो श्री रामचन्द्र के जीवन से जब सुग्रीवने कहा कि बाली मेरा भाई बड़ाही बली है, वह एक साथ इन सात ताड़के पेड़ों को हिला देता है। आप के बलकी मुझे परीक्षा हो जावे यदि आप इस पेड़ को हिला वा गिरादें, तब श्री रामचन्द्र कहते हैं कि प्रथम यदि मेरा सच्चा भाव ऋषियों के चरण कमल में है द्वितीय द्विज कुल को दूषित करने वाला कोई काम मैंने नहीं किया है तृतीय पराई स्त्री की ओर मैंने स्वप्न में भी दुष्ट विचार से नहीं देखा है, तो यह वाण

मेरा इन्हें तोड़ कर रसातल को पहुँच जावे और एक ही वाणसे सातों को गिरा देते हैं। इस से क्या फल हाथ आता है कि जब वह आप इतने धर्म में वन्धे थे, कि कोई धर्म विरुद्ध वेदविरुद्ध कार्य करने को उद्यत न थे, जिस से आज उनकी यह कीर्त्ति छा रही है तौ वह इसके प्रतिकूल कैसे प्रसन्न हो सकते हैं ? आज सच्चा स्वामी झूठे सेवक पर धर्मात्मा मालिक अधर्मी नौकर पर क्रोधित होता, दण्ड देता है तौ धर्म वीर धर्मध्वजी, धर्ममूर्ति रामचन्द्र यदि इस समय राजशासन पर होते तो कलेक्टर की नाईं केवल नाम लेने वालों और शुभ कर्म न करने वालों को न जाने कितना दण्ड देते। फिर मैं नहीं जानता कि आज क्या खयाल काम कर रहा है कि उनका सच्चा मान करने वालों पर दोष आरोपित किया जाता है। अपनी ओर कुछ ध्यान नहीं है। और भी सोचो कि द्रौपदी ने दुर्योधन के साथ किंचित् ही हंसी की थी जब कि वह राजसूय यज्ञ में जल को थल समझ कर पानी में जा पड़े थे—इतना कह दिया था कि अन्धों के अन्धे ही होते हैं। उस समय देवर समझ कर ही कहा था कि जिस का फल यह हुआ कि इतना वड़ा महाघोर संग्राम हुआ और इतना महाभारत रचा गया। जिस में हज़ारों ऋषि, मुनि, विद्वान्, वलवान काम आये, जिस के कारण जो भारत को हानि पहुँची वह गुप्त नहीं है। वह ही भारत में ऐसी फूट वो गई जिस से भारतवासी फूट से फूट कर अलग होगये। एक धर्म के स्थान पर हज़ारों मत खड़े होगये। प्रत्येक अपनी अपनी अलग अलग खिचड़ी पकाने और अलग अलग डफली वजाने लगे। कहां ऋषि मुनि रहते थे ? आज महालम्पट, अज्ञानी, व्यभिचारी वन गये। कुकर्म अन्तिम दशा को पहुँच गये। हाय २ ! उन्हीं ऋषियों की सन्तान कहाते और भृगु भारद्वाज गोत्र वतलाते, त्रिवेदी, चतुर्वेदी, कहलाते, ब्राह्मण, क्षत्रियों में गणना कराते हुवे अपने को सर्वोत्कृष्ट उत्तम श्रेणी वाला कहते हुवे कुत्ते, गधे, घोड़े, वैल आदि पशुओं से गिर गये। आज पशु, पक्षी, वृक्षादि सव अपने नियमों के पालन करने में तत्पर हैं परन्तु मनुष्य उन परमेश्वरीय नियमों को भी तोड़ वैठे अधिक व्यौरेवार

वर्णन करते लज्जा आती है, इसी से समझ लेना कि ताजीरातहिन्द में दफ़ा ३७६ व ३७७ इन्हीं के कारण बनानी पड़ी, परन्तु इन्हें अब भी लाज नहीं आती। आज खुले बाज़ार दिन धौले अपने साथ हाथ में हाथ लिये फिरते हैं। शोक! कहां ऋषि, मुनि हंसी को मना करते थे कि "लड़ाई की जड़ हासी, और बीमारी की जड़ खांसी" होती है। इन से बचे रहो। कहां यह महाभ्रष्ट अतिनीच क्रियाएँ देखनी और सुननी पड़ती हैं। इस लिये ब्रह्मचारी बनो। ब्रह्मचर्य में बड़ा बल है। देखो एक राजा की कन्या ने जो ब्रह्मचारिणी थी किस प्रकार अपने धर्म को बचाया और ब्रह्मचर्य ब्रत को पूर्ण कर दिया था। उसका कथन था कि प्रायः मनुष्यों को आज पशुओं और वृक्षों तक के ब्रह्मचर्य पूरा कराने का, उनकी शारीरिक दशा के सुधार का ध्यान है। गाय, घोड़ा आदि तक को युवावस्था तक रोकते हैं। परन्तु स्त्री पुरुष आप उसी अविद्यान्धकार में फंस गुड़ियों के खेल की भाति बच्चों के बिवाह रचा रहे हैं।

उस की कहानी यों है कि एक राजा की कन्या ने ब्रह्मचर्य ब्रत धारण किया था, उसने प्रतिज्ञा की थी कि मैं पूर्ण ब्रह्मचारिणी बनूंगी और विद्याभूषण से अपने को भले प्रकार भूषित करूंगी। वह अपनी प्रतिज्ञा और ब्रत पर स्थिर थी। उसकी आयु पन्द्रह सोहल वर्ष की हो गई थी युवावस्था को पहुँच चुकी थी परन्तु समावर्तन संस्कार नहीं हुआ था, न उसकी इच्छा ब्रह्मचर्य ब्रत तोड़ने और बिवाह करने की थी। ब्रह्मचर्य के तेज से और राजकन्या होने से सर्वप्रकार के ऐश्वर्य प्राप्त होने के कारण उसका चेहरा तपाये हुये स्वर्ण की नाई चमचमा रहा था। एक साधु जो युवा और विद्वान् था उसने आकर राजा से बात चीत की। राजा ने साधारण प्रणाम के पश्चात् भोजनार्थ उसे राजगृह को भेजा, उस की कन्या ने भोजन परोसा, ज्योंही उस साधु की दृष्टि उस राजकन्या पर पड़ी, इसकी दशा कुदशा होगई। सच है काम बड़ा प्रबल है इसने विश्वामित्र को डिगाया और सारा अभिमान जन्म जितेन्द्रिय ऋषि का घटाया व रक्तगीता बनवाया।

दोहा ।

तुलसी इस संसार में, को ऐसो समरत्थ ।
कंचन और कुचान को, जिन न पसारो हत्थ ॥
जवान योगी वैद्य रोगी, शूर पीठी घाव ।
कीमियागर भीख मांगे, इन्हें ना पतियाव ॥

अर्थात् पृथ्वी निर्वीज तौ नहीं, परन्तु वहुतही कम युवावस्था के योगी और धन स्त्री के निर्मोही संसार में होते हैं। उस युवा साधु से जैसे वना कुछ खाया कुछ न खाया, झट वाहर आया। राजा से आकर प्रश्न किया कि आप प्रथम प्रतिज्ञा कीजिये, भोजन आप ने खिलाया, कुछ दान भी दे सकते हो? आप पर विदित रहे कि पहिले समय में साधु अभ्यागत के वचन की पूर्त्ति का न करना अधर्म समझा जाता था। उसने साधारण प्रश्न समझकर स्वीकार कर लिया। तव उस साधु ने कहा कि अपनी कन्या का मेरे साथ विवाह कर दीजिये। तव राजा वहुत घवराया और उस ने गृह पधार कर सारा हाल अपनी पत्नी और कन्या को सुनाया। कन्या ने राजा को धैर्य वंधाया और कहा कि उससे कह दो कि तीसरे दिन विवाह करने को आवे। कन्या ने उधर उसे विदा किया इधर जमालगोटा मँगाकर खालिया। सैकड़ों दस्त ले डाले। जिस से सारा शरीर पीला पड़ गया, सारी चमक दमक दूर होकर रोगियों की तरह दुर्वल होगई मैला कूड़ों में भरवाकर रखती गई और उस के आने के प्रथमही वढ़िया ऊनी रेशमी ज़री की चादरें उस पर डलादीं आप सूख कर कांटा हो गई। सारा शरीर मैले से लिसपुत गया। जिस समय वह आया, कहला भेजा कि उससे कह दो कि राजा की वेटी विवाह से कुछ थोड़े समय प्रथम वार्त्तालाप करना चाहती है। उसे आज्ञा भीतर जाने की हो गई। वह तैयारही था। झट चल दिया। परन्तु ज्योंही कमरे के भीतर पग रक्खा, दुर्गन्ध से भिन्ना गया और उसकी शकल रोगियों जैसी दुर्वल भयानक दिखाई पड़ी

शरीर मैले से पुता हुआ देखकर वह कुछ देर रुका पश्चात् मन में विचार कर कि यह बिवाह जिसका नाम लेतेही इसकी यह दशा होगई, यह मेरे अभी से जी का जंजाल होगी और आगे चलकर न जाने क्या २ दुःख भोगने पड़ेंगे ।

पहिली मञ्जिल पर भला रोता है क्या ।
आगे चल कर देखना होता है क्या ॥

न जाने जी, वा मरगइ । सारा समय औषधि में ब्यतीत होगा । सम्पूर्ण महात्माओं का सुना सुनाया उपदेश, सम्पूर्ण पुस्तकों की पढ़ी हुई शिक्षाओं पर तत्काल विचार करने लगा और सोचकर आगे पग बढ़ाने के स्थानपर पीछे को लौटपड़ा तब कन्या ने कहा कि क्यों ? आगे आइये ! वह कहता है कि मैं जिसके साथ बिवाह करना चाहता था वह तू नहीं है । इस लिये अब मैं बिवाह नहीं करूंगा । उसने कहा यदि उस के साथ बिवाह करना चाहता था तौ वह भी उपस्थित है कहीं गई नहीं उसी के साथ बिवाह करलो । जो कुछ उस समय था वह सब अब भी है । उसने पूंछा कि वह कहां है ? तब उसने चादरें उठवाकर वह कूंडे मैले के दिखा दिये और कहा कि यहही शरीर से निकल गया और जिस में से निकलगया है, दोनों ही उपस्थित हैं । जी चाहे जिससे बिवाह करले । इस वार्त्तालाप से वह साधु लज्जित हुआ और उस कन्या के हाथ जोड़कर और अपना गुरु बतलाकर वहा से सच्ची शिक्षा पाकर चलदिया और इस पाप का जो मन वचन से किया था प्रायश्चित्त करने का यत्न करने लगा ।

देखिये ब्रह्मचर्य रखने वाले मस्तक ने युक्ति से कामलिया कि अपने ब्रत को नहीं टूटने दिया । पिता की प्रतिज्ञा भी भंग न होने दी और नाम के साधु को सच्चा साधु बनादिया और ब्रह्मचर्य के नष्ट होजाने पर अविद्या अज्ञान में फंसकर कुछ का कुछ समझकर स्त्री पुरुष झूठे स्वादों में फंस इस मनुष्य जीवन को जो मुक्ति तक के लिये मिला है, सत्यानाश मार देते हैं । प्यारे पुरुषार्थ की आवश्यकता है । गिरने के लिये

नहीं। वह स्वतः पृथिवी की आकर्षण शक्ति से गिर पड़ती है। इस लिये मनको इन्द्रियों के विषयों से रोकने के लिये सच्चेज्ञान और प्रथम वैराग्य अभ्यास की आवश्यकता है। नहीं तो वे विषयों की ओर आपही झुक जावेंगी। जैसा आज होरहा है। जो केवल अज्ञान का कारण है। जिस के कारण इस मल मूत्र से भरे हुये अशुद्ध शरीर को शुद्ध समझ रहे हैं स्त्री पुरुष बड़ेही मटक २ कर चलते हैं। युवावस्था में तो उन्मत्त हस्ती की नाईं झूमते, ऐंठते, अकड़ते हुये चलते हैं। मानो दो बोतल का नशा है यह ध्यानही नहीं कि यह शरीर मल मूत्र का थैला जो रजवीर्य अपवित्र वस्तु से बना है वह तो कभी पवित्र होही नहीं सकता। मुझे यहां पर एक हास्य स्मरण होता है। कई एक सभ्य नवयुवक पुरुष वायु सेवनार्थ टहलते २ किसी ऐसे स्थान पर जा पहुँचे जहां पर मैले के ढेर लगाये जाते थे। जब वहां पहुँचकर नासिका दबाने और छी २ करने लगे कि यह स्थान बड़ाही मैला कुचैला बसीला है नाक नहीं दीजाती चलो झट आगे बढ़ो। एक महात्मा वहां आरहे थे यह बातें सुनकर उनसे पुकारकर बोले कि आप सज्जन पुरुषों ने सुना कि यह ढेर * कुछ कहरहा है? उन्होंने कहा, नहीं। महात्माने उत्तर दिया कि सुनो कुछ काल ठहरिए। जो मैंने सुना है वह आप को बताता हूं। ध्यान पूर्वक सुनिये। वह कहता है कि मैं वह वस्तु हूं जो हलवाइयों के खोंचों पर जब लगा हुआ था सम्पूर्ण बाजार मेरी सुगन्धि से महक रहा था, मेरे लिये प्रत्येक की जिह्वा पर पानी भर आता था। जिस समय रसोइयों में बना था—यह जैसे सभ्य पुरुष मुझे खाने और मुँह पेट में रखलेने के लिये पारे की भांति बेचैन थे, अतएव उन्होंने नहीं माना और अपने मुँह पेट में रखही लिया। छः घण्टा तक इनके पेट में रहा। शोक

* ढेर की बात चीत करने में कहीं सम्भव असम्भव का झगड़ा न लगा दीजिये। बस स्मरण रखिये जहां पशु पक्षी वृक्षादिका बोलना पुस्तकों में लिखा है वह उनका नहीं किन्तु उन्हीं पुरुषों का होता है। यहां भी ढेरका बोलना उन्हीं महात्मा का बोलना समझिये।

है कि इनका पेट ऐसा अपवित्र जिसके छः घण्टे साथ रहने से उसके संग के प्रभाव से मेरी यह दशा होगई कि मुझ से आज इतनी घृणा होरही है। अब बतलाइये मैं अधिक अशुद्ध हूँ या इनका पेट ? यह सुनकर वह बहुतही चुपहुए । उसने कहा कि तो देखो तुम्हारे शरीर में कौनसा पवित्र अंग है और जो कुछ उन अंगों से उत्पन्न होता है या निकला है उसमें से किसे पवित्र कहते हो ? नाक कान मुँह मल मूत्र स्थानादि सभी स्थानों से अपवित्रही वस्तु निकलती है । सम्पूर्ण शरीर से पसीना अपवित्रही निकलता है फिर सोचिये कि जिसके सारे अंग उपांग अपवित्र हैं वह कुल कैसे पवित्र जाना जासक्ता है । फिर भी उसी की प्राप्ति के अर्थ नाना ढोंग प्रपंच रच रहे हैं । सुमार्ग से मुँहमोड़ कुमार्ग में जारहे हैं । इस शरीर में एक पवित्र जीव आगया है, जिस के निकल जातेही यह सारा शरीर सड़ने लगता है और यह स्थूल शरीर जीव को कर्मानुसार मिलता है । सम्पूर्ण योनियों में एक मनुष्य योनि ऐसी है जो इस जीव रूपी बन्दी की शरीर रूपी कारागार से अर्थात् जन्म मरणरूप बन्धन से मुक्ति करसकती है । इस लिये इस जीवन के सफलतार्थ ब्रह्मचारी बन कर सन्तानोत्पत्ति निमित्त गर्भाधान करो। बिना आवश्यकता के ऐसे अमूल्यरत्न को व्यर्थ मिट्टी में न मिलादो। सोचो कि तुम सर्व श्रेष्ठ हो । यदि पशुओं से अधिक नहीं तौ उन्हीं के तुल्य जिस प्रयोजन से वह समागम करते हैं, समागम करो । अधिक समागम से वीर्य में सन्तानोत्पत्ति की शक्ति नहीं रहती और बुद्धि का भी नाश हो जाता है । विषय लोलुपता विषयभोग से बढ़ती जाती है, जैसे अग्नि में ईंधन को डालने से और अधिक प्रज्वलित होती जाती है । जो वीर्य को सुरक्षित रखता है उस का विचार बढ़ जाता है, विपरीत दशा में स्मरण शक्ति घट जाती है । देखो पहले समय में सुलभा ने पूर्ण ब्रह्मचर्य धारण कर ब्रह्मचर्य में ही संन्यास ले लिया था । उस ने गृहस्थ किया ही नहीं था, जिसका हाल संक्षेप से वर्णन किया जाता है ।

---

# ❀ सुलभा ❀

यह राजकन्या थी । जब यह राजाजनक के देश को गई थी, इस ने राजा जनक से शास्त्रार्थ किया था । जिसका वर्णन तुमने विद्याधरी के जीवन चरित्र में पढ़ा होगा । यह योगविद्या में इतनी योग्यता रखती थी कि राजाजनक से विदेह योगी को इसने मूर्छावस्था में डाल दिया था और राजा को वह वह योग की सूक्ष्म क्रियायें बतलाई थीं कि राजाजनक चकित रह गये थे । इसने सारी आयु विवाह नहीं किया था । इससे पूछा कि तुम ने विवाह नहीं किया, बतलाया कि लड़कपन में ब्रह्मचर्य के सेवन और पढ़ने लिखने से छुट्टी नहीं मिली । जब युवती हुई, कोई योग्य वर नहीं मिला । अब मैंने संन्यास लिया है । यह जन्म जितेन्द्रिय रही थी । जैसे कि:—

साहं तस्मिन्कुले जाता भर्त्तर्यसति मद्विधे ।
विनीता मोक्षधर्मेषु चराम्येका मुनिव्रतम् ॥

( ८३ महा० शोप०-अ०-३२१ )

प्राचीनकाल में १६ वर्ष तक तौ कन्यायें पुरुष को पहिचानती भी न थीं क्योंकि पाच वर्ष की आयु से ही गुरुकुल में भेज दी जाती थीं । वहा अध्यापिका टहलनिया सब स्त्रियां होती थीं । सुलभा के जीवन-चरित्र से मेरा यह अभिप्राय नहीं है कि सभी ब्रह्मचारिणी बन ब्रह्म-चर्य से ही सन्यास धारण करलें । ऐसी तो लाख में कहीं एक हुआ करती हैं । परमात्मा ने इन्द्रियां प्रदान की हैं इन से यथा योग्य कार्य करते हुये सन्तान भी उत्पन्न करना चाहिये, परन्तु सर्वथा विषयासक्त न होना, क्योंकि गर्भाधान एक संस्कार है यदि इसे सँवार लिया तौ निश्चय जानो, सारे सुधारों का सुधार होजावेगा । बालक की शिक्षा का आरम्भ गर्भाधान से ही हो जाता है । जिसको आज बड़े २ विद्वान् और शिक्षित आश्चर्य की दृष्टि से देखते हैं संस्कारों की फ़िलासफ़ी और उनके लाभों की मीमांसा करना अति कठिन है । देखो आपने

मलिहाबाद आदि प्रसिद्ध नगरों के आम खाये होंगे वहा एक केवड़े की सुगन्धि का आम होता है। बिचारिये आम और केवड़े में क्या सम्बन्ध ? परन्तु आम को आदि में केवड़े के साथ संस्कार करके बोया है, जिसका प्रभाव प्रत्येक आम में पहुँचता है। इसी प्रकार और आमों में सोया, बेल आदिकी सुगन्धियों को पहुँचाया है।

प्राचीन समय में स्त्रियां विदुषी होती थीं। वह संस्कारों के लाभों को भली भांति जानती थीं। इस लिये आप देवियां कहलाती थीं और गर्भाधानादि संस्कारों से संस्कृत कर अपने पुत्रोंको देवता और पुत्रियों को देवी उत्पन्न करती थीं। जैसा गुणयुक्त धर्मात्मा बीर बच्चा चाहती थीं उत्पन्न कर लेती थीं। यह उनके बायें हाथका कर्त्तव्य था। १६ वर्ष से पूर्व कन्या और २५ वर्ष से प्रथम बालक तो इसको जानते ही न थे। यह तो सब से कम श्रेणी का ब्रह्मचर्य था। जैसा कि—

पंचविंशे ततो वर्षे पुमान् नारी तु षोड़शे।
समत्वागतवीर्य्यौ तौ जानीयात्कुशलो भिषक्॥
ऊनषोडशवर्षायामप्राप्तः पञ्चविंशतिम्।
यद्याधत्ते पुमान् गर्भं कुक्षिस्थः स विपद्यते॥
जातो वा न चिरञ्जीवेज्जीवेद्वा दुर्बलेन्द्रियः।
तस्मादत्यन्तबालायां गर्भाधानं न कारयेत्॥

सोलह वर्ष वाली कन्याका २५ वर्षकी आयुवाले पुरुष के साथ विवाह करना योग्य है। यदि इससे प्रथम किया जाता है तो गर्भ ही नहीं रहता। यदि गर्भ रहा भी तो पात हो जाता है यदि पात न हुआ तो उत्पन्न होते ही मर जाता है। यदि न मरा तो सम्पूर्ण आयु दुर्बल और रोगग्रस्त रहता है। आज इस अवस्था से प्रथम विवाह होने वा वीर्य रक्षा न होने से यही दशा हम आपकी देख लीजिये कहा २५ वर्ष

तक ब्रह्मचर्य सेवन से वसु और ३६ वर्ष से रुद्र और ४८ वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचारी बनकर आदित्य की डिगरी पाते थे, कहा आज यह दशा! यदि थोड़े दिनों तक और ऐसेही सोते रहते और देशहितैषी न जगाते तो वह समय दूर नहीं था, जैसी कि कहावत थी कि "बिलन्दिया पैदा होंगे और सीढ़ी से बैंगन तोड़ैंगे" वही उत्पन्न होते। शोक! कि आज प्रत्येक ओर से देशहितैषी जगा रहे हैं, दिन भली भांति रोशन होगया परन्तु हम वह ही बेहोशी की चादर ताने हुए सो रहे हैं। जगाने पर भी नहीं जगाते। करवट नहीं बदलते, आखें नहीं खोलतेः—

सोये हैं शर्त बांध के मुर्दों से ख्वाब में।
करवट नहीं बदलते हैं इस इज्तराब में॥

एक वात यह भी है कि चौकीदार जब जगाता है तो सोने वालों को बुरा मालूम पड़ता है, परन्तु जब जगाने से गठरी, माल, असबाब को चोर छोड़ कर भाग जाते हैं और प्रातःकाल वह माल मिलता है, तब चौकीदार को धन्यवाद दिया जाता है। यदि डाक्टर पीब रुधिर भरे फोड़े के पीब और लहू को अपने ऊपर गिरने और बुरा कहने और उसके रोने और गाली देने की पर्वाह न करके उसी के हित का ध्यान रखने हुए चीर डालता है और जब उसके रोग जाता रहता है तो फिर वही रोगी मिठाइयों की थालियां भरकर डाक्टर के सन्मुख धरता और द्रव्य उसकी भेंट करता है। इस लिये यदि हमें इसी प्रकार पहरवा की नाईं जगाते रहे और डाक्टर के सदृश हमारे ही हित का ध्यान रक्खा तो अवश्य हम एक दिन उस से लाभ ग्रहण कर धन्य-वाद देंगे और मेवे मिठाइयों की थालियां भेंट धरेंगे। यद्यपि आज हम को सुनने से भी घृणा होती है, एक दिन हम अपने प्राण तक अर्पण कर देंगे। इस लिये बहिन भाइयों! मेरी प्रार्थना पर विचार करो और यदि कुछ पूर्व ऋषियों का रुधिर शेष है, भारतवर्ष और आर्यावर्त जो आरत वर्ष हो रहा है, इसके सुधार का किंचित भी ध्यान है तो दोनों

स्त्री पुरुष मिलकर इस गर्भाधान संस्कार को सुधार लो और इस वीर्य रूपी अमृत के संचय करने और उस के लाभ हानि को भले प्रकार समझ के उसके अनुयायी हो जाओ। फिर देखो कि सारे दुःख दूर और सारे रोने बन्द होते हैं वा नहीं। प्राचीन समय की स्त्रियां इसके लाभों को जानती थीं तभी तो गंगा भीष्मपितामह की माता ने इसी संस्कार को विधि पूर्वक कर इतना बड़ा धर्मात्मा पुत्र उत्पन्न किया था जिस को मरेहुए सहस्रों वर्ष व्यतीत हो गये परन्तु क्या कोई कह सकता है कि गंगा मर गई? वह सदैव के लिये अमर हो गई। जिस समय भीष्मपितामह का अन्त समय था, श्रीकृष्ण और युधिष्ठिर यह वार्त्तालाप करके कि आज धर्मका सूर्य डूब रहा है चलो अन्त समय कुछ शिक्षा ग्रहण करलें। (सूर्य इस लिये कहा कि उन्होंने ४८ वर्ष ब्रह्मचर्य सेवन कर आदित्य की डिगरी पाई थी। जिससे उनका प्रकाश सूर्यवत् फैल रहा था और जब तक संसार स्थिर है तब तक प्रकाशित रहेगा) मार्ग में युधिष्ठिर ने कृष्ण से पूछा कि क्या कारण है कि पितामह इतने धर्मात्मा हुए? तब श्रीकृष्ण ने बतलाया है कि:—

**यद्गङ्गा गर्भविधिना धारयामास सुव्रता ॥**

इसकी माता गंगा ने ब्रह्मचारिणी बन कर वैदिक रीतिसे गर्भाधान संस्कार किया था। आज इस संस्कार का नाम तक भूल गये हैं यह संस्कार कौन करे, जब कि रात दिन पशुवत् इस क्रिया में प्रवृत्त हो रहे हों॥

बहिनो! गर्भाधान की दशा फोटूग्राफ के केमरे कीसी है। आपने केमरा उसका देखा होगा। वहा एक गिलास लगा होता है जिस को एक ओर से दूसरी ओर फेर देते हैं उसमें एक ओर शीशा लगा हुआ रहता है, जिस का अक्स (प्रतिबिम्ब) उस पर पड़जाता है झट उस गिलास को फेरने से फोटू उतर आता है। बस ऐसीही दशा गर्भाधान की है। फोटू लेते समय यदि मनुष्य अपने शरीर को झुकाए वा मुँह दात फैलाये या टेढ़ी टोपी धरे वा नेत्र वन्द करे वा नाक टेढ़ा करे वा

सीधा शरीर रक्खे होता है तो वैसाही फोटू में आता है। बस इसी प्रकार गर्भाधान के समय मनुष्य के शरीर की आकृति की नींव पड़ती है। जैसा उस समय विचार काम करता है वैसीही उस के शरीर की दशा होती है। नीचे ऊंचे इधर उधर देखना आदि वैसीही एक क्षण में आकृति बन जाती है। इसी विचार से गर्भाधान का समय रात्रि को बतलाया है और यह भी शिक्षा की है कि गर्भाधान के समय शरीर सीधा सुडौल रहे। दिन में वा जब चांदनी छिटकी हो वा दीपक जलते समय गर्भाधान क्रिया वर्जित है। इस हेतु से कि नेत्र और उसके साथ प्रकाश का सम्बन्ध होते हुए न जाने। किसी वस्तु के देखने में ध्यान न बट जावे। द्वितीय निर्लज्जता न बढ़ जावे। तृतीय कुछ नेत्र खुले कुछ मूंदे हुए देखने में टेढ़ा ऐंचा ताना न हो जावे इसी लिये उस समय विचार ही से काम लेना उचित है। जैसा कि:—

यादृशं भजते हि स्त्री सुतं सूते तथा विधम् ।
तस्मात् प्रजाविशुध्यर्थं स्त्रियं रक्ष्या विशेषतः ॥

स्त्री जिस नज्जारे का उस समय भजन करती है वैसी ही वजह युक्त बच्चा उत्पन्न होता है। सुश्रुत में लिखा है कि यदि स्त्री राजा का दर्शन करती है तो क्षत्रिय पुत्र होता है, ब्राह्मण साधुको देखती है तो ब्राह्मण साधु उत्पन्न होता है, व्यापार सम्बन्धियों को देखती है तो व्यापारी पैदा होता है। इस नियम से हमारे ऋषि मुनि जानकार थे। वेदों में बतलाया है कि जिस प्रकार दर्जी वस्त्र सीता है उसी प्रकार कर्म द्वारा माता बच्चे को सिये, अर्थात् तैयार करे। शारीरिक आत्मिक कर्म से सिये। जैसा कि चतुर कृषक वा माली पेड़ के पत्ते उगने पर और खाद, और फूल आने पर और फल आने पर और प्रकार का खाद पेड़ों में देता है इसी प्रकार इस मनुष्य के जीवन रूपी पेड़ के लिये नाना प्रकार की खाद भिन्न २ समय पर भिन्न २ संस्कार हैं जिन के लाभ अकथनीय हैं। यहां पर ब्योरेवार वर्णन करने से एक पुस्तक

अलग बन सकती है । यहापर उनको छोड़कर हमें यह दिखलाना है कि स्त्री इसी गर्भाधान के यथार्थ तत्व को जानकर जैसी चाहे संतान उत्पन्न कर सकती है । देखो जब स्त्री रजस्वला होने के पश्चात् निवृत्त होकर स्नान करती है उस समय बहुधा घरों में घर की बड़ी बूढ़ी या कोई अन्य स्त्री या वह आपही यदि उसकी कोई सन्तान रूपवान हुई तौ उसे गोद में देदेती हैं या वह लेलेती है या पुरुष रूपवान हुआ तौ उस की शकल देखती है जिससे अभिप्राय यह है कि बालक उसी सूरत का उत्पन्न होवे । यदि वह उसे देख नहीं सकती तो उसका फोटू देखकर उसका ध्यान रखने से वह ही प्रभाव पड़ना है । इस लिये जिस किसी महात्मा ऋषि वा बीर धर्मज्ञ का फोटू देखेगी या बारम्बार देखती रहेगी वा उसका चिन्तवन ध्यान रक्खेगी तौ भी उसी रूप रंग और गुणों से युक्त सन्तान उत्पन्न होगी । इस में कुछ सन्देह नहीं कि मातायें सांचा है । जैसा सांचा होता है वैसी ही ईंट वनती है । या माताएं खेत हैं । जैसा खेत होता है वैसाही बीज जमता है । ऊपर भूमि में बीज भी नष्ट होजाता है और भूमि में बीज जमने की आशा होती है परन्तु खेती करने योग्य भूमि में भी यदि ऋतु का विचार न किया जावे तो बीज जमेगा पर जैसा चाहिये वैसा कदापि नहीं । जैसे मक्का का बीज अगहन फाल्गुण में बोने से पेड़ उगेगा परन्तु बहुत न्यून छोटीसी बाली आवेगी परन्तु अषाढ़ में वोने से हाथ भर का भुट्टा लगेगा । बीज में यदि कुछ बिगाड़ है, घुना, कटा, झुलसा, भुना हुआ है तौ भी नहीं जमता और यदि बीज जमने पर ठीक २ निराया नहीं जाता वा पानी नहीं लगता तौ भी ठीक लाभ नहीं होता । इस उदाहरण से ज्ञात होता है कि क्षेत्ररूपी स्त्री और बीजरूपी पुरुष दोनों ही ब्रह्मचारी हों । वीर्य भी सुरक्षित रक्खा हुआ हो वीर्य में न टाका आया हो न भुना पका हो ( आज कल प्रायः आतिशक सोजाक गर्मी से वीर्य को झुलसा दिया जाता है फिर सन्तान न होने का उलहना दिया जाता है ) समय और ऋतु वह ही ब्रह्मचर्य का काल है जो पूर्ण होगया हो और ऋतु कालही में भोग किया जावे । जब गर्भ रहजावे तौ निराना और पानी देना खाद

डालना समय समय के पुंसवन सीमन्तोन्नयन आदि संस्कार हैं। जितना निराने पानी देने से लाभ पहुँचता है उससे सैकड़ों गुणा अधिक संस्कारों से। बस जैसा क्षेत्रवीर्य ऋतु समय होगा और सींचा निराया जावेगा जैसी २ खाद समय २ पर मिलैगी पेड़रूपी सन्तान उत्पन्न होकर अपनी आयु में फूलै फलैगी। पिता का प्रभाव कुछ आयु अधिक होने पर पड़ता है माता का गर्भाधान सेही आरम्भ होजाता है। जैसा कुछ पहिले वर्णन होचुका है कि माता पर बालक होता है। एक कांति हीन काली कलौंची स्त्री रूपवान सन्तान उत्पन्न करसकती है और एक रूपवान के विपरीत इसके कुरूप काला बच्चा होसकता है। एक दुर्वल स्त्री के उसके पति दुर्वल होते हुवे और पतिव्रत धर्म सुरक्षित रहते हुवे बलवान वीर बच्चा होसकता है और इसके विपरीत भी इसका मुख्य अभिप्राय यह है कि धर्मात्मा वीर दुराचारी जैसा चाहे बच्चा उत्पन्न करलेना स्त्रियों के हाथ में है। आप कहेंगे किस प्रकार? मैं बताऊँगा कि जब कुरूप स्त्री किसी रूपवान पुरुष की सूरत देखेगी और सदा उसका ध्यान रक्खेगी खान पान में दुग्ध दही साहित्व की पदार्थों का भोजन करेगी। मिट्टी, करीला, कड़ी, बुसी हुई तीक्ष्ण, चरपटी, वेस्वाद और अभक्ष्य पदार्थों से बची रहेगी, बच्चा रूपवान उत्पन्न होगा। इस के विपरीत चलने से उलटे गुण युक्त होगा। विलायत में इसकी बावत निश्चय होचुका है। सम्पूर्ण डाक्टर बतलाचुके हैं कि गर्भवती स्त्री जिस का ध्यान रक्खेगी, बच्चा वैसाही उत्पन्न होगा। प्रसिद्ध डाक्टर टिराल साहब अमरीका निवासी की भी यही सम्मति है। विलायत में एक मेम साहब के बच्चा हवशी की सूरत का उत्पन्न हुआ। वह नितांत काला भुजंगा था। उस के पतिने उसको संदिग्ध (मुश्तवह) समझकर दोष आरोपण कर त्याग दिया। वह स्त्री शुभाचारिणी थी। वह अपना अत्याचार और पतिव्रत प्रकट करने के लिये प्रिवीकौंसिल में प्रार्थी हुई कि मैं निरपराधिनी हूं मुझे झूठा दोष लगाकर अपराधी बनाया जाता है। इसपर कई प्रसिद्ध डाक्टरों का कमीशन नियत हुआ। उन्होंने भले प्रकार छानवीन करना आरम्भ किया कि क्यों हवशी जैसा बच्चा

उत्पन्न हुआ । पता लगाते २ उस कमरे में पहुँचे जहां वह रोती थी और हबशी की तस्वीर लगी हुई थी । मेम साहिबा गर्भदशा में बहुधा रोने के समय और वैसे भी उस को देखकर बिचार करती रहती थीं कि इसका श्यामसुन्दर मुखड़ा कैसा मनोहर और घूंघरवाले बाल हैं वह तस्वीर पलंग के सम्मुख थी जहा ज़रा दृष्टि उठी झट उसी पर जा पड़ती थी । उस ध्यान में चुम्बक कैसा प्रभाव उत्पन्न कर दिया । अन्त में मेम साहिबा से पूछ कर सम्पूर्ण बृत्तान्त सुन कर यह डाक्टरों ने फैसला दिया कि मेम साहिबा के पतिव्रता और सदाचारी होने में कुछ संदेह नहीं । यह उसी हबशी के फ़ोटो का ध्यान रखने का कारण है जो कमरे में पलंग के सामने लगा हुआ है । जिन्होंने पूरे तौरपर परीक्षा नहीं की वह नहीं मानते । वहुधा यूनानी बैद्यों की भी यही सम्मति है कि जो प्रभाव माता के विचारों का सन्तान पर पड़ता है उसे कोई दूर नहीं कर सकता यह प्रभाव मनुष्यों तक ही परिमित नहीं रहता वरन पशुओं तक पर पड़ता है । आपने अरब के इतिहास में देखा होगा कि इसहाक का मामू वा चचा लुबान था। उसकी कनिष्ठा कन्या राहहील का विवाह इसहाक के साथ ठहरा था और कहा गया था कि तू बारह वर्ष तक बकरियां चरा। बारह वर्ष पश्चात् बिवाह होगा। और जितने चितकबरे बकरे और बकरियां होंगी वह सब तुम्हें दहेज में मिलेंगी। वह क्या चतुराई करता कि जब बकरी गर्भिणी होती तब झट आंखों पर पट्टी बांध दिया करता और जब प्रथम चितकबरा बकरा उसके सम्मुख खड़ा करलेता तब पट्टी खोलता । जब वह आखें खोलती, देखती कि मेरा समागम चितकबरे बकरे से हुआ है, चितकबरा ही बच्चा उत्पन्न हुआ करता इस समय में सब के सब चितकबरे होगए, और राहीलका विवाह कर सारे बकरे बकरियां दहेज में ले गया काबुल और अन्य स्थानों में भी साधारण घोड़ी से साधारण घोड़े का समागम कराया जाता है। समागम के वक्त पट्टी बांध दीजाती है। समागम होचुकने पर एक बहुत वड़ा ऊंचीरास का घोड़ा उसके सामने खड़ा कियाजाता है घोड़ी जानती है कि मेरा समागम इतने बड़े बलवान् घोडे से हुआ है

वह वलिष्ठ पूरा वच्चा उत्पन्न करता है । एक श्रीमान् ठाकुर....साहव रईस... जिला बुलन्दशहर कहते थे कि मेरी शक्ल जो वन्दर से अधिक मिलती है और नेत्रों में वन्दर के नेत्रों के सदृश हरयाई सी है इस का कारण यह है कि मेरी माता एक साधु के कहने से महावीर हनुमान् की वहुत पूजा करती थीं, महावीर का व्रत रखती थीं, वन्दरों को गुड़-धानी खिलाती थीं । महावीर से सन्तान मांगती थीं । जव मैं गर्भ में आ गया तव और उस के पूर्व पश्चात् उस ने अपना वहुत सा समय महा-वीर की पूजा में व्यतीत किया । सो वह ही उसका ध्यान मेरी आकृति का कारण वन गया । मैं वन्दरों के सदृश खुशी के अवसरों पर हू हू करने लगता हूं । जैसे महावीर के विषय में प्रसिद्ध है कि वह निडर हैं सो उन्हें भी भय नहीं लगता । तात्पर्य इस उदाहरण से यह है कि माता के ध्यान का प्रभाव सन्तान पर अवश्य पड़ता है निर्वल स्त्री वलिष्ट वच्चा उत्पन्न कर सकती है जव वह गर्भ दशा में किसी वीर वलवान् पुष्ट मनुष्य का ध्यान रक्खेगी वह ही उस का चिन्तवन वच्चे की वीरता का कारण वन जावेगा । इस वरताव से उस के पतिव्रत धर्म पर वट्टा नहीं आसक्ता । क्योंकि यदि स्त्री पवित्र विचारों को रखती हुई किसी वीर पुरुष का ध्यान रक्खेगी, लड़ाइयों के चरित्र वीरों की वीरता के समाचार पढ़ती वा सुनती रहेगी वा पति के साथ लड़ाइयों में वा सिंहों के शिकार ( आखेट ) को जावेगी, वच्चा वलिष्ठ वीर पुष्ट उत्पन्न होगा आप को विदित होगा कि नेपोलियन वोनापार्ट क्यों इतना वीर उत्पन्न हुवा ? इसका वाप साधारण सेनापति था, इस की माता गर्भ की दशा में घोड़े पर चढ़कर संग्रामों में जाया करती थी । इस का पिता लड़ाइयों के चरित्र उस की माता को सुनाया करता था । वही विचार वच्चे में प्रवेश करता २ और वैसेही शिक्षा पाते २ उस की वीरता का कारण वन गया । यदि स्त्री को गर्भ की दशा में व्याख्यान सुनाये जावें और वह प्रेम पूर्वक सुनती रहा करे, वच्चा लेकचरार होगा । गर्भ दशा में अधिक गणित स्त्री को सिखाया जावे, लड़का वड़ा गणितज्ञ होगा । यहां तक नैयायिक, शिल्पकार आदि जैसा चाहो वैसी ही शिक्षा गर्भ में

देना चाहिये यदि स्त्री गर्भ दशा में महात्माओं, भले पुरुषों के जीवन चरित्र पढ़ती और सुनती रहेगी, महापुरुषों के संग से लाभ उठावेगी, किसी प्रकार का लड़ाई झगड़ा दंगा फिसाद न करेगी, बच्चा सदाचारी उत्पन्न होगा । गर्भ की दशा में स्त्री को पुरुष के पास सोना और समागम करना वर्जित है । प्रथम तो गर्भपात हो जाने का भय है। यदि न पात हुआ तो माताओं के गर्भ दशा में पति के पास सोने से बच्चों के मन में प्यार का चित्र खिंच जाता है यही कारण है कि उन के विवाह होते ही स्त्री के घर में पैर रखते ही झट माता से पृथक होजाते हैं और इस कार्य की सिद्धि के अर्थ कि विषय कामना प्रज्वलित न होने पाये पृथक् २ कमरों में और अलग २ खाटों पर सदैव शयन करें। यदि माता गर्भदशा में वा दीपक जलते समय वा चान्दनी रात्रि में वा दिन में वा मुँह ढांके विना निर्लज्जता से पति से समागम करेगी और समय असमय जार कर्म में प्रवृत्त रहेगी तो उसका बच्चा महा निर्लज्ज, कामी, लम्पट होगा । यदि माता लड़ाई झगड़ा रक्खेगी, बच्चा लड़ैया उसी स्वभाव का होगा । जिस की माता लड़ाका होती है, उसकी कन्या भी वैसी ही देखी जाती है:—

नींब में हरगिज नहीं लगते अनार ।
नाशपाती में फलें क्योंकर चिनार ॥
आम गूलर में लगें किस तरह से ।
सेव कीकड़ में फलें किस तरह से ॥

यदि माता अपने पति के अतिरिक्त अन्य पुरुष से मेल रक्खेगी वा हँसी मजाक तक करेगी तो निःसन्देह उसकी सन्तान दुराचारिणी होगी । यही कारण है कि वेश्या की कन्या वेश्याही होती है । आपने किसी वेश्या की कन्या पतिव्रता एक भी न देखी होगी । ग्रहण के समय मुसल्मान, ईसाइयों की स्त्रियाँ बराबर गर्भ दशा में चलती फिरती हैं । उन में से भी नहीं निकलती उन पर हमारे यहाँ की स्त्रियों के सत्संग का कारण है।

उनके बच्चे जैसे चाहिये अंगोपांग से सुरक्षित उत्पन्न होते हैं कभी कोई हानि नहीं होती, परन्तु हमारे यहां की कोई स्त्री धोखे से भी यदि ग्रहण पड़ते समय निकल जाती है तो उसको यह ख्याल हो जाता है कि कहीं बच्चा गहनवा न हो जावे । उसके अंगों का ध्यान करके सोचती रहती है कि यह अंग ऐसा न हो जावे, वह अंग न जाता रहे । इसी कारण ऐसाही हो जाता है। एकबार एक स्त्री ग्रहण पड़ते समय निकली, उस के पैर की अंगुलियां कुचल गईं वह अपने घर की स्त्रियों से कहती रहती थी कि कहीं बालक की भी ऐसी ही अंगुली मुड़ी हुई न हो जावें। बहुधा इस प्रकार वार्त्ता करती और ध्यान रखती थी। जब बच्चा उत्पन्न हुआ उसकी भी वैसी ही अंगुलियां झुकी हुई सी थीं। यदि गर्भिणी स्त्री मांस मछली खावेगी तो अवश्य ही बच्चे के स्वभाव में दया के स्थान पर निर्दयता को भरेगी यदि मदिरापान करेगी बच्चे की बुद्धि का नाश करेगी। क्योंकि कहा है।

दीपो भक्षयते ध्वान्तं कज्जलं च प्रसूयते ।
यदन्नं भक्ष्यते नित्यं जायते तादृशी प्रजा ॥

दीपक अन्धेरे को खाता है, इस लिये काजल अन्धेरी वस्तु उत्पन्न होती है। इसी प्रकार जैसा भोजन खाया जाता है वैसी गुणयुक्त संतान होती है। इसका मुख्य तात्पर्य यह है कि मातायें जैसी चाहें सन्तान उत्पन्न करलें, परन्तु यह ज्ञान उन्हें विना विद्या के पढ़े और अच्छी विदुषी स्त्रियों के संग के नहीं हो सकता । यदि किसी समझदार पुरुष ने स्त्री को समझाया बुझाया, कुछ उसकी बुद्धि को ठीक किया परन्तु वह सब समझाया हुआ एक बुड्ढी स्त्री के आ जाने पर उसकी किंचित् समय की थोड़ी सी वार्ता से मिट जाता है । मानों जैसे कोई गोबर से लीप देता है। जहाँ उसने आकर कह दिया कि अरी! क्यों बावली सिड़िन हुई है ? हाथ की लकीरें कहीं मिटती हैं ? यह लीकें टीकें सदा से होती आई हैं। राम की बातें राम ही जाने। कर्म गति

टाले नहीं टलती । देखो उसने वह पुरानी रीति मेटकर नई रीति की थी । खोज जाता रहा । कल जब कोई होगई फिर कुछ न बसावेगी । सब तीन पाँच धरी रहेगी । इतनी सुन बस वह लगीं हां में हां मिलाने और अपने हितैषी को अपशब्द सुनाने । पति और पत्नी में अनबन है घर क्या है, पूरी संग्राम भूमि है । यही कारण है कि बहुधा मनुष्य बतलाते है कि आजकल की स्त्रिया केवल सन्तान उत्पन्न करने की कलें चाइल्ड प्रोड्यसिंग मेशीन ( Child produsing Machine ) वह भी निकम्मी हैं । इन्हें कोई कार्य योग्यता ( तमीज ) के साथ करना ही नहीं आता । न वह स्त्री पुरुष के भेद को जानतीं, न गर्भरक्षा, न सन्तानों का पालन पोषण कर सकतीं, पुरुषों को गालियां मार जूतियां आप सहती हैं और आप उन्हें बुरा भला कहतीं, गालियां देती हैं । कोई उन्हें पैर की जूती बताता है । कोई उनके वास्ते सवारी का शब्द ठीक बताता है । परन्तु हमारे ऋषि मुनि उन्हें न तो सर का ताज ही समझते थे, न पैर की जूती बताते थे, किन्तु उनके लिये अत्यन्त योग्य अर्द्धांगी का शब्द बताया था । जो बर्तावा स्त्रियां पुरुषों से करती थीं, वह ही पुरुष स्त्रियों से । आज अविद्या के कारण उनकी यह दुर्गति हो गई ।

इस लिये हे बहिनों ! शीघ्र अविद्या डाइन को दूर भगाओ । और अपना फिर से पूर्ववत् आदर सत्कार कराओ । इस अविद्या से जैसा तुमने प्रत्येक बिषय को उलटा समझा है, आगे बढ़कर कुछ २ ज्ञातही हो जावेगा । तुम थोड़े से अधिक लाभ उठाना और इन बातों पर अधिक ध्यान देना । गर्भ की दशा में सदैव प्रसन्नचित रहना । दुःखी व उदास रहने से बच्चे पर उसका प्रभाव पड़ता और वह दुर्बल हो जाता है । गर्भिणी स्त्री दो मनुष्यों की सांस लेती है, इस लिये उस को द्विगुण ताजी शुद्ध वायु की आवश्यकता है, सब काल पवित्र वायु और शुद्ध स्थान में रहो, घरको साफ बनाये रहो, शुद्ध वस्त्र धारण करो, गर्भ दशा में एक चारपाई पर न सोओ, न समागम करो, सबके पश्चात् सोओ सब से प्रथम सोकर उठो, गर्भाधान उस समय करो जब शरीर मन

मस्तक पुष्ट और प्रफुल्लित हो और सारी धातु पक गई हो सबसे अधिक ध्यान रखने योग्य यह बात है ऋतुकाल में भी जब समागम करो तो भोजन किये हुए कमसे कम तीन घंटे होगये हों और एक वार से अधिक एक रात्रि में विषय कभी न करो। इस के विरुद्ध करने से अजीर्ण होकर पाचन शक्ति निर्वल पड़े, नाना प्रकार के रोग हो जाते हैं । और सदा रात्रि को भोजन के तीन घंटे पश्चात् शयन करना चाहिये। यह आरोग्यता को वहुत ही लाभदायक है। और पुत्री की इच्छा हो तो ऋतु स्नान के दिन से पहली तीसरी आदि और पुत्र की इच्छा हो तो दूसरी चौथी आदि रात्रियों में सम विषम का ध्यानकर उत्पन्न करलो। पुरुष की शक्ति अधिक होने से पुत्र और स्त्री की अधिक होने से पुत्री होती है और सम रात्रियों दोयज, चौथ, छठ आदि को पुरुष की शक्ति और विषम में स्त्रियों को अधिक होती है। सदैव और विशेषतया गर्भ दशा में ध्यान रखने योग्य है कि कभी भयभीत न हो, कोई स्थान भय का विशेष न जानो। देखो मेमें वस्ती से वाहर वाग वगीचे जंगलों में ऐसी दशा में रहती हैं, उन्हें कोई हानि नहीं पहुँचती न वह डरती हैं।

प्यारी वहनों! इस ऊपर लिखित वार्ता से यह न समझ लेना कि तुम्हें पुरुष वनाने की शिक्षा की गई है। नहीं जो २ वातें तुम में पुरुषों के तुल्य परमात्मा ने दी हैं उनमें समानता के साथ वर्ताव करो, जैसे ब्रह्मचर्य सेवन कर धर्म और गृहस्थ अर्थ और वानप्रस्थ हो कामना और संन्यासी वन मोक्ष प्राप्त करना आदि। परन्तु जो तुम्हारे में कुदरत ने कोमलता आदि अधिक रक्खी है। वेदों में तुम्हें अप—जल से उपमा दी है। इस लिये तुम में और पुरुषों में वल और अंगों की पुष्टता में अन्तर अवश्य है। तुम वेदोक्त रीति से पुरुषों की जायज धर्मानुकूल आज्ञाओं को ग्रहण करती हुई उनकी सेवा अपना परमधर्म समझती हुई आयु व्यतीत करो। यह स्मरण रक्खो कि जहां तुम्हें अर्धांगी वताया है वहां वामांगी भी। इस लिये कृपया धर्म की रस्सी में सोते जागते स्वप्न तक में सदा अपने को वाँधे रहना अपने जीवन का

शिव संकल्प ईश्वर प्राप्ति उसकी आज्ञाओं का यथावत् पालन वेदों का पाठ अपना उद्देश्य रखना जितना बढ़िया उद्देश्य होता है, उतनाही उसकी प्राप्ति के अर्थ परिश्रम किया जाता है। तुम पुरुषार्थ और यत्न सदा करती रहना, यदि यत्न करते भी कार्य सिद्ध न हो तौ बैठ न रहना बरन् यह सोचना कि हमारे यत्न में क्या दोष रहगया जिससे सिद्धि न हुई, यही "यत्ने कृते यदि न सिद्ध्यति कोत्र दोषः" का अर्थ है।

## ❀ सन्तानोत्पत्ति ❀

इसके लिये ऋषियों का सिद्धान्त है कि यह आवश्यक नहीं है कि मनुष्य अधिक सन्तानवालाही हो परन्तु जो सन्तान हो वह धार्मिक और सर्व प्रकार से उत्तम हो। जैसा कि:—

**वरमेको गुणी पुत्रो नच मूर्खशतैरपि।**
**एकश्चन्द्रस्तमो हन्ति नच तारागणैरपि॥**

एक योग्य पुत्र सौ मूर्खों से श्रेष्ठ है। क्योंकि एक चन्द्र सम्पूर्ण अन्धकार को दूर कर देता है सैकड़ों तारों से कुछ भी नहीं हो सकता। किसी ने क्या कहा है:—

**कै जननी तू भक्त जन, कै दाता कै शूर।**
**कै जननी तू बांझ रहु, मत जनि खोवे नूर॥**

हे जननि! तू यदि पुत्र उत्पन्न करे तौ भक्त हाय या दाता या वीर हो नहीं तौ उत्पन्न करने से तेरा बांझ रहना उत्तम है। क्यों अपने मुखड़े की चमक (आब) खोवेगी। गर्भवती स्त्री यदि सर्प जनै तौ भी कुमार्गी बालक उत्पन्न करने से अच्छा है। इस हेतु से बतलाया गया है कि:—

**अजातमृतमूर्खेभ्यो मृताजातौ वरं सुतौ।**
**तौ किञ्चिच्छोकदौ पित्रोर्मूर्खस्त्वत्यन्तशोकदः॥**

यदि बच्चा उत्पन्न न हो तौ कुछ दुःख नहीं । यदि उत्पन्न होकर नष्ट होजावे तौ भी थोड़ा दुःख । यदि उत्पन्न होकर मूर्ख रहा तौ जब तक जीवेगा पग २ पर नाना प्रकार के कष्ट और दुःख पहुंचाता रहेगा । हजारों गिल्ले उलहने सुनने पड़ेंगे । कहीं मार खायगा, कहीं मार आवेगा, दोनों तरह पर दुःख है यदि ज्वारी, शरावी कवावी, विषयी हुआ तौ सम्पूर्ण कुल को कलंकित करेगा । मुख्य अभिप्राय यह है कि यदि उत्पन्न हो तौ योग्य हो । नहीं तौ न उत्पन्न होना बहुत अच्छा है । प्यारी स्त्रियो ! यदि तुम उपरोक्त कथनानुसार वर्त्ताव करोगी तौ अवश्यही सपूत उत्पन्न करोगी । अब वह बातें लिखता हूं कि जिनका बच्चा होते समय या उसके पश्चात् पालन पोषण में काम पड़ेगा ।

## बच्चा उत्पन्न होने की पहिचान और उसका उपाय ।

जिस समय बच्चा उत्पन्न होने के निकट होता है तौ मल मूत्र शीघ्र शीघ्र त्याग होने लगता है । यदि बच्चे के उत्पन्न होने में कठिनाई हो तौ आधपाव घी सेरभर गर्म दुग्ध में मिला कर पिला दिया जावे । इससे बच्चा शीघ्र उत्पन्न होजाता है वा किसी योग्य वैद्य की सम्मति से कार्य करे । बच्चा जनाने का कार्य किसी योग्य दाई से लियाजावे और देख लिया जावे कि उसने पहले बच्चे जनाये भी हैं या नहीं, नातजर्वेकार तौ नहीं है । यह भी देखलेना चाहिये कि उसके नाखून तो बड़े नहीं, उसके हाथ साबुन से धुलवा देना और कपड़े बदलवा देना चाहिये ।

## पालन पोषण संतान वा प्रबंध बच्चा के स्थानादि का ।

जिस समय बच्चा उत्पन्न होजावे तब दाई से बच्चे की नाभी के पास से चार अंगुल के अन्तर पर एक डोरा बांधकर नाल को बहुत साव-धानी के साथ सूतकर किसी पैने शस्त्र से कटवा देना चाहिये । सूतने के समय देखलेना चाहिये कि न अधिक सूतलिया जावे न न्यून । यदि अधिक सूत लिया जावेगा तौ बच्चा दुर्वल बना रहेगा । यदि न्यून सूता गया तौ गर्मी भीतर रह जाने से सीतला और फुंसियां अधिक निकलेंगी ।

बच्चे के उत्पन्न हो जाने के दो घण्टे पश्चात् जच्चा के कुल वस्त्र बदलवा देना चाहिये और स्थान बदलबा देना भी बहुत उचित है क्यों कि बच्चा उत्पन्न होजाने से वह स्थान बहुत अपवित्र हो जाता है। गन्दी वायु बच्चा जच्चा दोनों के लिये हानिकारक है । और जच्चा के वस्त्र आवश्यकतानुसार शीघ्र २ बदलते रहना चाहिये। तबदील किया हुआ कोठा ऋतु अनुसार हवादार होना चाहिये और नामकरण के दिन जो बहुधा दशवें दिन होता है, एक बड़ा हवन होना चाहिये यह ऋषियों की सम्मति है ऐसा करने से गृह का वायु अशुद्ध नहीं होता और बच्चा आरोग्य रहता है।

बच्चे के उत्पन्न होने के थोड़े ही काल पश्चात् उसे नहला कर सूक्ष्म मुलायम वस्त्र से पोछकर रूई के मुलायम पहल पर लिटाना चाहिये। कम से कम तीन दिन तक मा का दुग्ध न पिलाया जावे । इन दिनों में माता का दुग्ध बिकारी होने से बच्चे को पचता नहीं है । और बहुधा डाक्टरों की सम्मति है कि मा का दुग्ध ही पिलाया जावे । पशुओं के रोग बच्चे में प्रभावित हो जाते हैं।

बच्चे के पैदा होतेही सोने की सलाई से शहद लेकर उसकी जिह्वा पर "ओ३म्" लिखदेना और कान में यह कहदेना कि तेरा नाम वेद है, सोने की सलाई से शहद लगाने से बच्चे के जीभ और पेट का मल दूर हो जाता है और दस्त होजाने से ( मल त्याग होने से ) बच्चे को जमोखा आदि रोग नहीं होते । द्वितीय यह शिक्षा बच्चें को जन्मही से दी जाती है कि संसार में सब से बहु मूल्य बस्तु सोना और मिष्ट शहद है। इस लिये महान् ऐश्वर्य्य पाकर भी मधुरभाषा को न त्यागना तृतीय और जैसे तेरी आवश्यकताओं के लिये सोना और जिह्वा के स्वाद के लिये मधु-मीठा है वैसे ही तेरी आत्मा के लिये परमात्मा का जानना आवश्यक है जिसका मुख्य नाम ओ३म् है । वहाँ तक पहुँचना ही तेरी आयु का उद्देश्य है । यदि यह समझना है कि किस प्रकार ईश्वर प्राप्ति हो वह ओ३म् जाना जाय । इस लिये बतला दिया है कि तेरा नाम

वेद है। वेद के अर्थ सत्य ज्ञान अर्थ लाभ के हैं । वेद मुझे सत् प्रकृति से लेकर ज्ञानमय परमात्मा तक का लाभ प्राप्त करादेंगे । यदि जानता है कि वेद कैसे आयेगा तो बतलाया है कि अब "अर्थकामेष्वसक्तानाम्" जब अर्थ काम में नहीं फंसेगा और यह कि "मातृमान् पितृमानाचार्यवान् पुरुषो वेद" तेरा नाम तब वेद यथार्थ होगा जब कि माता पिता गुरु से यथावत् रीति से शिक्षा ग्रहण करेगा। हमारे यहांही उत्पन्न होने से (मंज़िलमक़सूद) जीवन का मुख्य उद्देश्य बतला दिया जाता था। पांच वर्ष तक माता, आठ तक पिता, पश्चात् गुरुकुल में भेज दिया जाता था वहां जाकर उसका दूसरा जन्म होता था । अर्थात् पहला उसका जन्म माता पिता के घर हुआ। दूसरा गुरु और विद्या से होता था। गुरुकुल में जाकर गुरु की सन्तान कहाते थे। गुरु उनका सारा पालन पोषण अपने पुत्रों के सदृश करते थे। पुत्र पुत्रियों के गुरुकुल अलग २ होते थे। कन्याओं के गुरुकुल में अध्यापिका आदि स्त्रियां ही होती थीं वहां पांच वर्ष तक का बच्चा भी न जाने पाता था। उस समय विद्या में परिश्रम का फल मुक्ति होती थी जिसकी अवस्था ३६००० कल्प की होती थी। आज नौकरी है जो इसी जन्म में समाप्त होजाती है ब्रह्मचर्य में शारीरिक, गृहस्थ में सामाजिक, वानप्रस्थ संन्यास में आत्मिक उन्नति करते थे । बच्चे पर सबसे अधिक इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि उसको अजीर्ण न होने पावे इस लिये तीसरे चौथे दिन घूंटी देते रहना चाहिये, और दवायें घूंटी की पूरी डलवाना चाहिये। आज जो बंधी बंधाई पुड़िया एक पैसे में पंसारी के यहां से लाई जाती है उसमें आधी औषधियां नहीं होतीं । इस कारण निम्नलिखित औषधियां पृथक् २ लेकर पिलाना चाहिये।

## ❀ नुसखा ❀

सोंठ २ रत्ती, सौंफ ४ रत्ती, पोदीना ४ रत्ती, अमलतास ४ रत्ती, मुसव्बर २ रत्ती, पित्तपापरा ४ रत्ती, पलाशपापड़ा ४ रत्ती, उन्नाव १ दाना जीरा सफ़ेद ४ रत्ती, नरकचूर २ रत्ती, सनाय ४ रत्ती, सुहागा २ रत्ती कालानोन ४ रत्ती ।

बच्चों को सदा साफ़ सुथरा वस्त्र पहिनना चाहिये और जो बच्चों को कपड़े पहिनाये जावें वह ठीक हों। न अधिक ढीले हों कि उसके कारण हाथ पांव उलझ जावें न इतने तंग हों कि उसके बढ़ने में अन्तर पड़े।

बच्चे को सदा नहलाते रहना चाहिये जिससे शरीर पर मैल न जमने पावे। मैला रहने से एक तो बच्चा घिनौना रहता है द्वितीय फुंसी निकल आती हैं। जब तक बच्चा बातें नहीं करने लगता है तब तक उसके पालन पोषण का समय बहुत कठिन होता है इस लिये कि जो उसको दुःख होता है उसे वह बता नहीं सक्ता। हा बुद्धिमती मातायें उसके शरीर को हिलाते जुलाते ऐंठते समिटते हाथों से पकड़ते हुवे अंग को देखकर अनुमान कर लेती हैं। जब बच्चा रोता है कभी हंसली देखकर टालती हैं पेट तुंगा हुआ देखकर कभी हींग का फाया बनाकर नाभि पर रखती हैं। कभी अजवायन औटाकर गुड़ में मिलाकर पिलाती हैं। कहीं सुहागा मुसव्वर की गोलियां बनाकर खिलाती हैं। कभी काला जीरा, पीपल, काला नोन इसका छौंक बनाकर चटाती हैं। कभी चौघुजियां शहद में चटाती हैं। इस लिये जब बच्चे को किसी प्रकार की पीड़ा हो तुम सदैव किसी योग्य वैद्य की सम्मति से औषधादि करना। भूल से भी गंडे तावीज टोने धागे के निकट न जाना यह केवल धोखे और ठगई की बातें हैं। जब दांत निकलने में मसूढ़े वरम कर आते हैं, माता का दूध नहीं दबता, राल टपकती है बच्चा भूख के मारे रोता है, उस समय मुलेठी की चूसनी बनाकर बच्चे को थमा देना चाहिये जिसके चूसने से मसूढ़े नरम होजावेंगे या शहद में सुहागा मिलाकर मसूढ़ों पर लगाना उचित है परन्तु शहद बच्चे के मुँह में से पेट में न जाने पावे क्योंकि एक तो उस समय वैसे ही दस्त आते हैं शहद पेट में जाने से अधिक आने लगैंगे।

बच्चे के शरीर पर पांच छः महीने तक नित्यप्रति आटा तेल पानी से बनी हुई सुपई मलना चाहिये। कभी २ निरा तेल लगाना चाहिये। इससे खाल पुष्ट हो जाती है और मैल भी जमने नहीं पाता। पश्चात्

भी कम से कम प्रति सप्ताह उबटन लगाते रहना चाहिये इससे शरीर की पुष्टि होती है, मन हर्षित रहता है। जो स्त्रिया बच्चों को स्नान कराने से सरदी का होजाना समझती हैं यह उनका विचार ठीक नहीं। यदि अधिक जाड़े के दिन हों तो गुनगुने पानी से नहलावे वा धूप में नहलाने से चित्त बहुत प्रसन्न होता है। बुखार आदि की दशा में वैद्य की आज्ञानुसार कार्य करें परन्तु शिर पर गर्म पानी कभी न डालैं। बच्चे की शुद्धि के साथ माता को अपने तन और वस्त्र की शुद्धि भी आवश्यक है। बच्चे को माता अपना दूध एक वर्ष से अधिक न पिलावे यदि उसके पश्चात् पिलाती रहेगी तो वह मा बहुत निर्बल होजायगी। यदि दाया का प्रबन्ध होसके तो बहुत अच्छा है। यदि दाया रक्खी जावे तो उसके खान पानादि समस्त बातों को माता के सदृश निरीक्षण करना चाहिये। माता दाया को पुरुष के निकट जब तक दूध पिलावे न जाना चाहिये। विपरीत दशा में बच्चा जच्चा दोनों दुर्बल होजाते हैं।

पुत्रोत्पत्ति पर हर्ष और पुत्री पर शोक करना उचित नहीं। आज कल प्रायः ऐसाही देखा जाता है कि पुत्र के उत्पन्न होने पर हर्ष के बाजे बजते हैं व्यय भी अधिक किया जाता है। परन्तु पुत्री के होने पर हर्ष के स्थान कोनों में छिप २ रोया जाता है और जच्चा को निष्प्रयोजन दुर्वचन सुनाये जाते हैं।

जो स्त्री अड़ोस पड़ोस टोला मुहल्ला की आती हैं वह उसकी सासु आदि की तुल्य उसे कठोर वचनों, हृदय विदीर्ण करने वाले शब्दों से याद करतीं और उसकी कोख को दोष देती हैं। गृह में उसके खान पान में भी सेवा आदि का पुत्र के तुल्य प्रबन्ध नहीं होता। एक तो वह वैसेही घरवालों और आये गये की बातों और अपनी मूर्खता से कुढ़ती रहती है। जिससे उसके दिल की कली मुरझा जाती है। दूसरे खान पान का उत्तम प्रबन्ध न होने से उसकी दशा थोड़ेही काल में बिगड़ जाती है। परीक्षा करके देख लीजिये कि जिन स्त्रियों के पुत्र हुआ करते

हैं वे स्त्रियां नीरोग रहती हैं किसी को प्रसूति आदि रोग नहीं होते और जिनके पुत्री अधिक होती हैं उन्हीं के प्रसूति आदि का रोग होजाया करता है । हर्ष से दिल की कली खिल जाती है और शोक से बन्द होजाती है । इस लिये दोनों की सदैव एक सी खुशी मानना और सुश्रूषा करनी चाहिये ।

जब बच्चा पैदा होता है उसके दो चार दस पांच दिवस के अन्दर कभी माता का दुग्ध पालेने से या किसी रुग्ण गाय बकरी का दुग्ध पीने से और घुट्टी आदि न मिलने से उसके पेट में सुद्दा पड़जाता है और उसकी पीड़ा के मारे ऐंठता और चिल्लाता है जैसा कि किसी युवा पुरुष के कुलञ्जादि रोग होने से वह सारी खाटपर लोटता है और चिल्लाता फिरता है उस समय औषधि द्वारा दस्त कराना उचित है । जबतक एक सुद्दा पड़ता है साध्य, और दो पड़ते हैं तो कष्ट साध्य रोग रहता है । तीन सुद्दे पड़जाने पर असाध्य रोग होजाते हैं । मूर्ख स्त्रियां उसे भूत और चाल समझ कर गण्डे और ताबीज़ कराती फिरती हैं और बच्चे को और अधिक हानि पहुंचाती हैं इस रोग में देखा गया है कि हवन की सुगन्धि के स्थान पर जूतियां तक जलाई जाती हैं या सड़ा गला बन्दर का शिर लाकर रक्खा जाता है और ऐसी दुर्दशाओं से औषधि न करके बच्चे को अपने हाथ से खोया जाता है । बच्चे के हित की सबसे अधिक बात यह है कि उसे अजीर्ण न होने पावे ।

बच्चे को अफ़ीम न खिलाना चाहिये । कभी न कभी अधिक दे देने से मृत्यु को प्राप्त होजाता है । न मरने पर खुशकी बढ़जाती है ।

बच्चे का नाम जब रक्खा जावे तो पुराने पुरुषों के तुल्य अर्थ सहित हो । आज स्त्रियां अपनी मूर्खता से किसी का घसीटा, किसी का कढेरा, किसी का बुगरे, किसी का अंगनुआ, किसी का छदम्मी, किसी का डोरी, किसी का नथुआ, किसी का मंगला, आदि बहुधा रखती हैं ऐसे नाम रखने का अभिप्राय यह होता है कि इस तरह नाम रखने

से बच्चा जी जायगा । इस कारण डलिया (पलरिया) में कढेर कर घसीटा, कढेरा, किसी को छदाम में बेंचकर छदम्मी, गोबर खिलाकर गुबरे आंगन में होने से अंगने, नाक छिदवाकर नथुआ, सकट या मंगल बुधको पैदा होने से सकटुआ, मंगलुआ, बुधुआ नाम रखती हैं । जो स्त्रियां बहुधा मुर्दों, मदारों, सलारों से पुत्र मांगती हैं वे पैदा होने पर मदार बख्श व सलारबख्श भी नाम रखती हैं । जिनकी वजह से वह लड़के युवा होने पर उन्हीं नामों से पुकारे जाने पर माता पिता के रक्खे हुवे नाम से लज्जित होते हैं । जैसे कि—(यथा नाम तथा गुणः) कहावत प्रसिद्ध है । इस लिये पुराने पुरुषों ऋषि मुनियों के अनुसार शुभ लक्षण-युक्त नाम रक्खो । इस कारण कि यदि उसमें वह गुण न हों तो अपने में धारण करने का यत्न करे ।

जब बच्चा पांच छः मासका होजावे तब खीर आदि अत्यन्त हलके मुलायम भोजनों से अन्नप्राशन संस्कार करे । पुनः प्रतिदिन थोड़ी २ खिलाये जाय और माता दूध भी पिलाती रहे । एक वर्ष के पश्चात् माता का दूध निरन्तर छुड़ा देना चाहिये । ऊपर के दूध और भोजन पर निर्भर रखना योग्य है, परन्तु बच्चे के भोजन में खान पान का अन्दाजा और समय विभाग ऐसा होना चाहिये कि न तो बच्चा भूखा रहे और न अधिक खा जावे । समय २ पर भोजन खिलाने और सुलाने आदि प्रत्येक कार्यों के समय पर करने के निमित्त अमेरिका यूरूप देश की स्त्रिया जिनके कुल कार्य समय पर होते हैं, जिन को समय ही सब से प्यारी वस्तु है, रिस्ट वाच घड़ी हाथपर बांधे रहती हैं । परन्तु हमारे यहां की स्त्रियां घड़ी न होने पर धूप सेही घड़ी का काम लेसकती हैं और जो घड़ी से काम ले सकें उन्हें घड़ी रखना वर्जित नहीं है ।

## ❀ काजल ❀

बच्चे की पांच वर्ष की आयु तक उस के काजल हाथ के पोरे से लगाना उचित है । इस प्रकार लगाने से उसकी आंखों का कोया बढ़

जाता है, पश्चात् पुत्र के पच्चीस और पुत्री के सोलह वर्ष पर्यंत अर्थात् गृहस्थ बनने के पूर्व किसी प्रकार का काजल वा सुरमा अंजन लगाना उचित नहीं। सिवाय उस दशा के कि आंखों में कोई पीड़ा होजावे।

जब से बच्चा कुछ २ बोलना प्रारम्भ करे, माता को उचित है कि उसको जो शब्द बतावे वह उसके सामने जिह्वा को अपने अपने स्थानों में लगाकर उसे बताकर शुद्ध शुद्ध बतावे। पहिले (प, त) आदि सहल सहल शब्द बताकर और कहलाकर पुनः धीरे २ बढ़ाती जावे। स्मरण रहे कि बालक प्रत्येक बस्तु को देख देख कर कुछ समय पर्यंत देखता रहता है। जिसका तात्पर्य्य यह होता है कि वह उस बस्तुको जानना चाहता है, योग्य बुद्धिमान् पिता माता उस बस्तु को बतादेते हैं पर मूर्ख चलते समय तो उसकी अंगुली थामे उसे घसीटते लिये जाते हैं वा इस ओर ध्यान नहीं देते।

बालक में जब समझने की शक्ति उत्पन्न होजावे तो उसके मस्तक पर बल देकर उससे अर्थ निकलवाया जावे यह न करे कि आगे २ आप बढ़ता जाय और पीछे २ बच्चा। यह ढंग उच्चारण कराने या पढ़ाने का बहुत बुरा है। ५ वर्ष तक माता पढ़ावे। ८ वर्ष तक पिता। पश्चात् गुरुकुल में भेज दिया जावे। गुरुकुल में धनाढ्य कंगाल के पालन पोषण में न्यूनता अधिकता न होने के कारण विद्यार्थियों में ईर्षा द्वेष उत्पन्न नहीं होते और गृह कार्य न होने से केवल विद्याध्ययन में ही तत्पर रहने के कारण शीघ्र पढ़जाते हैं और दुःख सुख की मर्यादा को जान जाते हैं पिता माता को चाहिये कि लाड़ प्यार में उससे अशुद्ध वा अनुचित असभ्य शब्द न कहलावे। कभी भी बच्चे से न आप झूठ बोले न उसे झूठ बोलना सिखावे। जब झूठ बोले तो उसे उसी समय यथोचित दण्ड दिया जावे। किसी प्रकार की हंसी ठठोली बच्चों के सम्मुख न की जावे, और वाहियात किस्से कहानी की किताबें न आप पढ़ें न बच्चे को पढ़ने दें। दुराचारी बच्चों के पास जाने से रोकें यदि कभी बच्चे की जिह्वा से भूलकर भी दुर्वचन गाली आदि निकल जावे,

तुरन्त उसे दण्ड दिया जावे इस हेतु से कि उसका स्वभाव न बिगड़ जावे । यदि घर की वा किसी और की कोई वस्तु बच्चा चुरा ले आवे तो उसे चोरी के दोष बतलाकर वह वस्तु उससे ही जिस की हो उसे दिलवाई जावे और दण्ड भी दिया जावे । कभी स्वप्न में भी छिपाना व टाल जाना उचित नहीं ऐसा करने से बालक दुराचारी नहीं होता ।

दोहा । हरे वृक्ष की ज्यों छड़ी, मन मानी चल जाय ।
सूखे से नहिं लचत है, कोटिन करो उपाय ॥

बच्चा जितने अवगुण सीखता है उसके मुख्य कारण उसके रक्षक माता पिता आदिही होते हैं । जो लाड़ प्यार में इस ओर कुछ ध्यान नहीं करते । मैंने देखा है कि कोई २ माता पिता छोटे २ बच्चों से एक दूसरे के धौलें लगवाते हैं फिर पुरानी बातों का स्मरण होजाने पर जब बड़ा होकर माता पिता से लडता है या मारता पीटता है तब रोते हैं । बहुतसी मातायें अपने बच्चों की टोपी जो उनके पिता लाते हैं, शिर से उतार पीछे की ओर छिपाकर कहती हैं कि टोपी कौआ लेगया फिर वही टोपी कुछ काल पश्चात् उसे मिल जाती है तब वह उसी समय माता की चाल जान जाता है । वह आप अपने शिर से टोपी उतार पीठ पीछे छिपाकर माता से कहता है देखो टोपी कौआ लेगया । ऐसी ही सैकड़ों कुवार्त्तायें मातायें सिखा देती हैं । अन्त को वही दुर्गुण जो माताने सिखाये थे, उन्नति कर जाते हैं । और उसको प्रथम कक्षा का झूठा बना देते हैं, और उस से वे मिथ्याभाषणादि में कारागर तक भोगते हैं और संसार में अपयश को प्राप्त होते हैं । कोई २ मातायें प्रायः ऐसी भी देखने में आती हैं कि उन का बच्चा यदि किसी अन्य पुरुष की कोई वस्तु चुराकर अपने गृह में ले आता है तौ उसे स्वीकार कर लेती हैं वा उसे साधारण वार्त्ता समझ कर उस ओर कुछ ध्यान नहीं देतीं । वह उस का स्वभाव बढ़ते २ उसको उच्चश्रेणी का चोर बना देता है । यदि उस समय उपाय कर लेती तो साधारण परिश्रम से उसकी रोक हो जाती और

भविष्यत् कालको उसकी आदत न बिगड़ती जैसे कि किसी मास भक्षी का बालक एक बार एक अण्डा प्रथमही बार चुराकर लाया था, उस ने वह अण्डा अपनी माता को दिया । माता ने भली भांति पका कर स्वयं खाया और बच्चे को खिलाया जिस से उसको स्वाद पड़ गया। फिर क्या था, वह बहुत २ अंडे और अन्य वस्तुयें चुरा लाने लगा और अन्त को बड़ा भारी चोर बन गया । ज्यों २ उसकी आयु बढ़ती गई उतनाही उसका चोरी का स्वभाव उन्नति पाता गया और वह प्रसिद्ध चोर बन गया । एक दिन पकड़ा गया, दोनों हाथ उसके काट डाले गये तब उसने अपने दोनों कटे हुए हाथ आकर अपनी माता के शिर पर देमारे और कहा कि अरी दुष्टा माता ! मेरे हाथ कटने का कारण तूही है । यदि तू प्रथम दिवसही जब मैं अंडा चुराकर लाया था, फिक वा देती वा मुझे दंड देती वा अंडे सहित जिस का था वहीं मुझे ले जाकर दिलवा आती तो आज मेरे हाथ क्यों कटते ? सच है कि प्रथम ही कुरीतियों को रोक देना चाहिये नहीं तो फिर दूर होना अति कठिन हो जाता है । हा ! बहुधा देखा गया है कि किसी को बाहर किसी ने पुकारा माता पिता ने बालक से कह दिया कि कहदो घर में नहीं हैं । उस ने जाकर कह दिया कि उन्हों ने कहा है कि कहदो घर में नहीं हैं इस पर उस बालक को मारा कि यह क्यों कहा कि उन्हों ने कहा है, शोक कैसा पाप सिखाया जाता है । नौशेरवां कि जो बड़ा न्यायाधीश प्रसिद्ध है, उसकी बाबत गुलिस्तां की एक हिकायत में लिखा है कि नौशे-रवां जंगल में एक दिन भोजन बनवा रहा था, किंचित् लवण की आव-श्यकता हुई । एक भृत्य को गांव की ओर लवण लाने को दौड़ाया और सूचना दी कि मूल्य देकर लाना । इस लिये कि रीति न पड़ जावे और गांव नष्ट भ्रष्ट न हो जावे । तब उस से कहा गया कि इतने किंचित् लवण से क्या गांव नष्ट हो सकता है ? तब बादशाह ने फर्माया कि प्रथम ज़ुल्म ( पाप ) की जड़ संसार में बहुत नहीं पड़ी । पश्चात् जो कोई आया उस पर राह रखता गया, यहां तक कि वह पाप आज इस दशा को पहुँच गया कि जिसकी कोई सीमा नहीं रही और यह भी

समझाया कि राजा यदि किंचित् दुराचारी हो तो प्रजा पर अधिक प्रभाव पड़ता है और राजा यदि थोड़ा भी अधर्म करे तो उस के नौकर चाकर उसे अन्त को पहुंचा देते हैं ।

यदि राजा प्रजा की वाटिका से एक सेव खा लेवे तो भृत्य उसे मूल सहित विनाश कर डालते हैं । इस लेख से अभिप्राय यह है कि बच्चों को थोड़े से कुसंस्कारों से रोकने के लिये बहुत बड़ा यत्न करना चाहिये क्योंकि जो रँग न्यून अवस्था में रँग गया: वह बहुत पक्का हो जाता है । यदि बच्चा कहीं से लड़कर आवे, माता को चाहिये कि उस का उलहना देने के लिये दूसरे के यहां कभी न पहुंचे, न उसके कारण अन्य से लड़ाई झगड़ा करे, वरन् अपने बच्चे को ही चाहे उसका अपराध हो वा न हो, थोड़ा शिक्षार्थ दंड देवे ऐसा करने से बच्चे में दुर्व्यसन दुराचरण न उत्पन्न होंगे । आज की स्त्रियां अपने बच्चे की बात पर विश्वास करके दूसरे के यहां लड़ने को पहुंचती हैं, जिस से बालक साहस पाकर और अधिक निडर होकर बिगड़ जाता है जब बालक गुरुकुल में प्रविष्ट न हो, अपने घरों परही पठन पाठन करता हो और पढ़ने से जी चुरावे, बिना किसी विशेष कारण पठनार्थ न जावे, कदापि उसका लाड़ प्यार न करो । वरन् उसे उस समय भोजन न दो और दंड देकर उसी समय पाठशाला में अवश्यमेव पहुंचा दो । आज कल की स्त्रियां जहां बाप ने घुड़का और दो एक थप्पड़ मारे कि जा पढ़ने को, अब लगीं वहीं से बकने और पिता को अनाप शनाप सुनाने और अनुचित प्यार करने, उसे गोद में उठा, चुमकार पुचकार कर कहती हैं कि मेरा कन्हैया बे पढ़ाही अच्छा है मैं ऐसे पढ़ने को चूल्हे में डालूं जिस का फल यह होता है कि वह कदापि पढ़ नहीं सकता और लाड़ में उस का सत्यानाश हो जाता है । दो मुद्रा मासिक तक नहीं कमा सकता और सांसारिक और पारमार्थिक लाभों से वंचित रह जाता है । विपरीत इसके जिसके माता पिता योग्य दूरदर्शी विद्वान् होते हैं, जहां बालक जरा पढ़ने से रुका और कोई किसी प्रकार का बहाना पाठशाला

जाने में किया, उधर तो बापने ललकारा, उधर मा के पास गया उस ने उस से अधिक फटकारा, अन्त में वह अपने बचने का कोई उपाय न पाता हुआ सीधा पाठशाला पहुंचा । वह अति योग्य सराहनीय बनकर विद्वान् हो कर आप और औरों को लाभ पहुंचायेगा ।

माता, भगिनी आदि को उसके सामने अयोग्य बातें करना, भ्रष्ट गीत गाना, गालियां गाना, बालकों के सम्मुख स्वप्न में भी उचित नहीं, वरन् उन्हे ऐसे स्थानों पर भी कदापि न जाने देना चाहिये । परन्तु यह सब तभी हो सकता है जब माता आदि स्वतः उसपर ध्यान कर कटिबद्ध हों, नहीं तो यह सारा माता का परिश्रम व्यर्थ होगा जैसा कि एक डाक्टर ने जाना था कि हुक्का तम्बाकू पीने से पांच वर्ष आयु घट जाती है और भी बहुतसी हानियां है । वह अपने पुत्रको उसके दोष बताकर समझाता रहता था । उसे ज्ञात था कि मेरा पुत्र मेरे कथनानुसार तम्बाकू नहीं पीता है । एक दिवस अपने मित्र से कहने लगा कि मित्र क्या कहें मुझ से हुक्का नहीं छूटता । बहुतेरा चाहता हूं, परन्तु मेरा जी नहीं मानता । मैंने साधारण रीति से नहीं, वरन् भली भांति से इसके दोषों को जाना है । इससे पांच वर्ष तो आयु घट जाती है और भी अनेक दोष हैं । प्रथम यह कि तमाकू आत्मा के विरुद्ध है, यह तीन प्रकार से बर्ती जाती है । कोई खाता, कोई पीता, कोई सूंघता है । परन्तु तीनों आत्मा के विरुद्ध । इधर खाया उधर थूका, इधर पिया उधर फूंका, इधर सूंघा उधर छींका, आत्मा स्वीकार नहीं करता । परन्तु मार २ कर सच्ची बनाई जाती हैं । पहले पहल आदि दशा में पीने वालों से पूछिये, कैसा वह मुँह बिगाड़ते हैं, दूसरों का धुआं यदि उनकी ओर छोड़ दिया जाता तो बड़ाही कष्ट होता था । पर बारम्बार उसके विरुद्ध पिया करके उस को इतना अभ्यासी बना दिया जाता है कि बिना उस के एक दिन चैन नहीं पड़ती । कहीं परदेश जाते समय चाहे और सामग्री रह जावे, परन्तु तम्बाकू का थैला अवश्य साथ होना चाहिये । यह न व्रत में रुकती न तीर्थयात्रा में बन्द होती । प-

हले हवन सामग्री के थैले साथ जाते थे । आज उस की जगह तम्बाकू के जाते हैं । जो अकेले खान पानादि पर ही धर्म मानते हैं उन से पूछना चाहिये कि जब तुम चमारों धानुकों तक की जूठी चिलम पीते हो जिस में एक दूसरे का झाग और थूक लगा रहता है तौ तुम्हारा धर्म बना रहता है ? तम्बाकू पीने से सीना ( दिल ) काला पड़ जाता है, मैल आंतों में जम जाता है ।

हुक्का पीनेवालों के गृह तम्बाकू की गुल और राख प्रत्येक स्थान पर पड़े रहने से बड़े मैले रहते हैं । अमेरिका जो तम्बाकू का मुख्य स्थान है वहा के रहने वाले इण्डियन अपने तीर की नोक को इस के पानी में बुझाते थे । जो उस के पत्तों से बनाया जाता था । जब कभी वह वैरी के लगता, त्वचा में चुभता तौ वह घायल होकर तड़प २ कर चन्द मिनटों में प्राण त्याग देता था । वह ही लोग चूहे, बिल्ली, कीड़े आदि की नाक कान में दो एक बूंद टपका कर मार डालते थे । तम्बाकू से जो दवा बेहोशी की बनाई जाती है उस का प्रभाव क्लोरोफार्म की तरह तुरन्त होजाता है । इस से दवा बनाकर दीवारों पर छिड़कने से मक्खी, पतंगे, मच्छर, मकरी दूर होजाते हैं । नेत्रों के लिये वैसे ही धुआं हानि कारक है । तम्बाकू का जहरीला धुआं बहुत ही हानि पहुँचाता है । यूरुप में सब से अधिक तम्बाकू जर्मन में पीजाती है । वहाँ वाले ऐनक अधिकांश लगाने लगे और ऐनक लगाने वाली कौम से प्रसिद्ध होगये । पीते २ यह तम्बाकू यह दशा कर देती है कि जब तक हुक्का न पीवें शौच ही नहीं होता, यदि घर में अग्नि नहीं रहती तो हुक्का तम्बाकू पीने वाले स्त्री पर अति क्रोधित होते हैं और चिलम लिये हुये घर २ ढूढ़ते फिरते हैं । जिस से कोई लाभ नहीं । आज इस का लेक्चरार लेक्चरों में खाका उड़ाते हैं कि:—

## चौपाई ।

होतहि प्रात उठे अकुलाई । बिन हुक्का जनु नींद न आई
निजस्नान कीन्ह नहिं पावा । प्रथमहि तिन हुक्कहि अन्हवावा

अग्नि हेत लै चिलम सिधाये । इत उत फिरत मनहु बौराये
यहि प्रकार अग्नी लै आये । हवन तमाकू केर मचाये
प्रथम श्वास भीतर लै जाई । पुनि भीतर से बाहर लाई
प्राणायामयहि विधि ठहराई । हरषित मनहु महानिधि पाई
शब्द गुड़गुड़ा देत सुनाई । वेदध्वनीसम खलन सोहाई
यह नित कर्म सदा दुखदाई । छाड़ौ याहि जो चहौ भलाई

दो०--कफ़ खांसी यह करत है, सकल रोग को मूल ।
ताते याहि बिसारिये, कबहुँ न पीजै भूल ॥

प्रातःकाल अपने स्नान के स्थान पर यह हुक्का को नहलाते हैं। जहां उस का उल्हन फेंकते हैं तो बहुत दूर के बैठेहुओं पर उस दुर्गन्धित जल का प्रभाव पड़ता है । यदि हुक्का का पानी दो एक दिन का होगया हो तब तो मलमूत्र से अधिक बास आती है और जो कपड़ा चुंगलियों पर लपेटा जाता है वह उन्हीं लहंगे पाजामों का होता है जिन में पुरुष को स्वप्न और स्त्रियां रजस्वला हुई हैं । महाशोक की बात है कि तम्बाकू पीनेवाले छूत छात मानते हुये उसी का निचोड़ पीते और धर्म में तत्पर समझे जाते हैं । फिर भी न जाने क्या लाभ समझ कर पीते हैं। इस के ऐसे वशीभूत होजाते हैं कि किसी हानि लाभ का ध्यान नहीं । किसी कवि का क्या झूठा बचन है ? कि--

हाथ जरै और मुँह जरै, जरै पेट की आंत ।
तनिक धुआं के कारणे, फिरत निकारे दांत ॥

यहां कहूं आगी है । आज हजारों लाखों बीघों भूमि में इन तम्बाकू पीनेवालों के कारण से गेहूं उर्द के स्थान पर यह जहरीली वस्तु बोई जाती है और सैकड़ों रुपये की तम्बाकू एक २ मनुष्य अपनी आयु में पी जाता है । यह तीन सौ साल के अन्दर इतनी प्रचलित होगई।

अकवरशाह के सनय में पोर्च्यूगीज अमेरिका से लाये थे। अकवर ने कुछ ध्यान न दिया परन्तु जहांगीरने "कतलुल्मूजी कवलुल्ईजा" समझकर वहुत कठिन दंड नियत किया था। नाक कान काटने की सजा दीजाती थी, दश वारह मनुष्यों को लाहौर के कुछ दिनों के निवास में यह दण्ड दिया था। परन्तु आलमगीर के समय में आलमगीरी होगई। इसमें दांत मसूढ़े नाक कान स्वर और पाचन शक्ति आदि सभी को हानि पहुंचती है। डाक्टर टिराल साहव अमेरिका निवासी इसको शराव की नाईं शहवतअंगेज अर्थात् कामादिक को उत्तेजित करनेवाली वताते हैं। और देखो मलकारूसने अपने दरवार में हुका पीकर आनेवालों को आज्ञा देदी थी कि यदि वह अपना स्वभाव नहीं छोड़ सक्के तौ दरवार से अलग रहें। मैं नहीं चाहती कि नाजुक मिजाज लेडियों को उसके धुआं और उसके मुंह की गंदगी से पीड़ा पहुँचाऊं। परन्तु शोक है कि आज तो स्त्रियां भी वहुधा इसे पीने लगी हैं। इस लिये मैं यह सारे दोष जानता हुआ भी इसका इतने दर्जे आदी होगया हूँ कि छोड़ नहीं सक्ता। मैं अपने पुत्र को कदापि पीने नहीं दूंगा। मैंने यह सारी वातें उसे समझा दी हैं। यह दोनों में वातें होकर दोनों वाहर वाजार चल दिये। थोड़ी दूर पहुँचकर खयाल हुआ कि छतरी छड़ी भूलआये हैं, लौट कर लेतेचलें, पहुँचकर क्या देखते हैं कि वहीं उनके शिक्षित पुत्र चारपाई पर लम्वे २ वही हुक्का जो पीकर छोड़गये थे मुँह में लगाये गुड़ २ कर रहे हैं। डाक्टर साहव वहुत लज्जित हुये, तव मित्रने कहा, कहो तौ कारण वता दूं कि आपने साधारण रीति से जिह्वाग्र उपदेश किया। कथनानुसार अमल करके नहीं दिखलाया था, लड़के ने जाना कि यदि हुक्का कोई वुरा पदार्थ होता तो पिताजी क्यों पीते ? खर्च वचाने के अर्थ मुझ से न पीने को कहते हैं। तव तौ आज देखा देखी जिसे हुक्का दवाये फिरते हैं जिसका अन्तिम फल वह निकला कि यदि कर्त्तव्य करके न दिखाया जावे और केवल शिक्षा करते जावें तो ऐसी शिक्षा निष्फल होजाती है।

जो आपही राह नहीं जानता वह औरों को क्या वतासकता है।

न उस के कथन का उस समय तक विश्वास होता है जब तक कर्त्तव्य और वक्तव्य एक नहीं होता ।

बहुधा स्त्रियां अपने बच्चों के सम्मुख वाहियात राग गातीं या पुरुष स्त्रिया बालक को नाच तमाशे में जाने की आज्ञा देतीं हैं वा पिता ताऊ स्वयं अपने साथ लेजाकर नाच दिखाते और उस के हाथों से रुपया दिलवाते वा बिरह के गीत और गालिया सुनवाते हैं । वह अपनी सन्तानों का यथार्थ में नाश करते हैं । सच तो यह है कि अपने सन्तान को ऊंचे पेड़ पर चढ़ाकर उस की अपने हाथों से जड़ काटते हैं । बालक को ऊँचे पहाड़ पर खड़ा कर के हर्ष पूर्वक नीचे गहरी नदी में ढकेल रहे हैं । जिस के कारण वह बालक सराय, चकले आदि में जहां इन का निवासस्थान होता है, अपने सम्बन्धियों के आते हुये भी लज्जा के मारे नहीं जाते कि कहीं मुख्य प्रयोजन न जानकर उलटा समझकर माता पिता से जाकर कहदे उस समय लज्जित होना पड़े । उन्हीं को जब नाच देखने के अर्थ लेजाकर बिठलाया जाता है तब वह निर्लज्ज होजाता है । बहुधा बाप चचा उसी के हाथ से रुपया दिलवाते हैं, इतर लगवाते हैं । मानो आप लड़के को कुमार्गी और कुटिल बनानेवाली पाठशाला में प्रथम पाठ पढ़ाते हैं । वह देखता है कि एक स्थान पर बाप दादे चचा भतीजे मामा भानजे साले बहनोई सभी बैठे हैं और सब निर्लज्जता की चादर मुँहपर डाले हुये रहस्य बिलास की बार्त्ता सब के सम्मुख करते हैं कुछ किसी की किसी को रोक नहीं है । पूरी भैरवी चक्र की सी लीला है । इस कारण उन को भी साहस होजाता है और वह निर्लज्जता का सारटीफिकट पाकर फिर भली प्रकार लज्जा को तिलाजली दे खुल खेलते हैं । फिर क्या नहीं वह बड़े २ सारटीफिकट प्रमेह, गर्मी, आतशक उपदंश, सुजाक को प्राप्त करते है । और घर से धन दौलत छीन झपट चुरा उन्हीं रण्डियों की भेंट चढ़ाया करते हैं । और अपनी पत्नी और माता पिता की बात तक नहीं पूछते । इस लिये बच्चों को ऐसे स्थान पर जाने से प्रथम ही रोकना चाहिये, ताकि यह दुःख भविष्यत् में न सहना पड़े ।

# गहना पाता ।

गहना किसी प्रकार का बच्चों को पहनाना हर तरह उनके लिये हानि कारक है परन्तु आज मूर्खा स्त्रियों की बातें हैं, निराली अनोखी, यदि कोई योग्य ज्ञानी बुद्धिमान पुरुष बच्चों को गहना पहनाने को रोके तो उसके गृह की स्त्रियां उसे अपना वैरी समझती हैं । जो अविद्या अज्ञान का कारण बच्चों से माताओं का लाड़ प्यार आज ऐसा है जैसा कि एक चूहे और मेंढक में परम मित्रता थी मेंढक चूहे के बिल के पास फिरा करता, कभी भीतर जाता दोनों परम मित्र थे ।

एक दिन चूहे ने मेंढक से कहा कि अपना गृह मुझे दिखादो, मुझे अपने पैर में लपेट कर वा बांधकर लेचलो । उसने कहा बहुत अच्छा ज्योंही मेंढक चूहे को लेकर पानी में घुसा और चूहे ने प्राण त्यागे ।

ऐसेही आज स्त्रियां प्यार से बच्चों को गहना पहनाकर अन्त को उस के कारण प्राण लेती हैं अर्थात् स्त्रिया सैकड़ों मामले मुकद्दमे नित्य सुनती हैं कि आज अमुक बालक के गहने के कारण मारा गये, अमुक वन में माल उतार कर छोड़ दिया गया, आज अमुक लड़के के कान की बाली खींचकर उचक्का भाग गया, कान से लहू बह रहा है, कल अमुक कन्या की उस के झपट्टे से नाक छी गई । परन्तु फिर भी वही दशा । नहीं सूझ ता कि बच्चों को क्या गहना पहिनावें, मनुष्य का भूषण विद्या है, न कि गहना । बालकों को गहना विष से न्यून नहीं है । वह नहीं जानतीं कि इस से कितनी हानि है । देखो प्रथम तो गहने से उन बच्चों को घमण्ड हो जाता है जिस से पठन पाठन में पूर्ण रुचि नहीं रहती द्वितीय उन बच्चों को जो माल ताल नहीं पहिने होते हैं, वे तुच्छ दृष्टि से देखते हैं तृतीय हाथ पाव में कड़ों से जो हथकड़ियों और बेड़ियों से कम नहीं हैं, अन्तर पड़ जाता है, चतुर्थ मैले कुचैले रहते हैं, पंचम आरोग्यता बिगड़ जाती है, षष्ट मारे कूटे भी जाते हैं !

यदि माताओं को बच्चों का सच्चा लाड़ प्यार करना आता तो क्या वह आज रुपया के आठ आने कर उन की जान की प्यासी बनजातीं ?

आभूषणों के अस्थान पर सच्ची विद्या के गहनों को धारण कराकर उनकी आत्मा को भूषित न करतीं और बढ़िया पदार्थों को खिलातीं पिलातीं ? स्वच्छ सुथरे वस्त्र पहिनातीं । इस लिये मेरी प्रार्थना को स्वीकार करके इन झूठे भूषणों को कदापि न पहनाओ । आगे तुम्हारे लिये सच्चे भूषण बताए हैं । उन्हीं को आप पहनो और सन्तानों को पहनाओ ।

## ❀ शीतला ❀

इसी को विस्फोटक चेचक वा शीतला कहते हैं। यह एक महारोग है आज स्त्रियां अपनी मूर्खता से इसे कुछ और ही समझे हुये बैठी हैं। कहती हैं कि बच्चे के माता निकली हैं। जिन्हें इतना भी विवेक नहीं रहा कि माता के बच्चा निकलता है वा बच्चे के माता निकलती हैं, वह तो यथार्थ में माता वाता कोई नहीं, चतुर पुरुषों ने मूर्खों को ठगा है। जैसे बना अपना टका सीधा किया। बहिनो ! यह एक रोग है जो बच्चे की पेटकी गर्मी ( उष्णता ) से हुआ करता है इस के लिये टीका बहुत लाभदायक समझा गया है । इस कारण तुम कुछ भी भय न कर के बच्चों के टीका लगवाओ । हा जब दाना उभर आवे थोड़े दिन रगड़ आदि से बचाये रहो । टीका लगाने से जो बुखार आता है वह किंचित समय के लिये होता है । जो २ वैद्य डाक्टर बतलावे उन पर आरूढ़ रहो । जब चेचक शीतला निकल आवे तो नीम के हरे पत्ते मकान के द्वारपर जहा बच्चा रहे, लटका दिये जावें और चारपाई पर चारों ओर रक्खे जावें मुरझा जानें पर बदलते रहना चाहिये। जो वायु नीम के पत्तों से लगकर चलती है, उस से बच्चे के शरीर में लगने से जल्द आरोग्य होजाता है । जहां बालक हो वहां आग जलाना, यज्ञ, हवन करने तक का निषेध है। इस पर आरूढ़ हो और झाड़ फूँक की ओर कभी स्वप्न में भी विचार न करे।

बच्चों को बड़ों की सेवा शुश्रूषा करने की विधि और अपने बैठने उठने की भी यथायोग्य बतलाई जावे। सदैव अपने बड़ों के सम्मुख

आते हुये सब से नम्रता पूर्वक शीश नवाये हुये दोनों हाथ जोड़ के नमस्ते किया करें। जब किसी बड़े के घर जावें, उनकी आज्ञा से बैठना और जाते समय आज्ञा लेकर और नमस्ते करके जाना। जब कोई बड़ा उन के यहां आवे, उठकर उसे उच्चासन पर बिठावें, आप नीचे बैठें, प्रातःकाल उठकर माता पिता आदि से नमस्ते करें और उनके पैर छुवें और ऐसी शिक्षा दी जावे कि वे बड़े होने पर अपने घर किसी नातेदार वा अतिथि के आने पर उनको और पिता माता आदि सम्बन्धियों को खिलाकर भोजन किया करें। कोई पदार्थ आपही बाहर न खा लेवें, न गृह में ला किसी को कदापि एकान्त में खिलावें, किसी को दें, किसी को न दें, जो बड़ा अधर्म है। रास्ते में सीधे चलें और चलते हुए कुछ खाते जाना असभ्य बात है। जिस बात को न जानें उसमें आप बीच में न बोलें, न बिना पूछी बात का उत्तर दें। सदा सोच विचार कर बात किया करें। जिस बात को भले प्रकार जाना हो, आज्ञा लेकर कहें, बड़ों के घर जाकर उनकी आज्ञा लेकर बैठें, यदि न जानते हों तो नम्रता से पूछें। पाठ कंठाग्र अधिक करायाजावे। अधिक सोचने से विचारशक्ति और कंठाग्र करने से स्मरण शक्ति बढ़ जाती है। बच्चों को नित्यकर्म सन्ध्या हवन आदि सिखा कर उसके करने का उन्हें अभ्यासी बना दिया जावे। आदत न होने पर बहुत नागा हो जाती है। मनुजी ने बतलाया है कि यदि दो काल की सन्ध्या छूट जावे तो वह पतित होकर शूद्र वर्ण को प्राप्त होजाता है।

बच्चों को ऐसी शिक्षा दे कि मुंह से फूंक कर दीपक न बुझाओ, उसका धूम्र श्वास के साथ भीतर जाकर आरोग्यता को बिगाड़ता है वा सायंकाल पेड़ को न छुओ, उस समय से प्राण वायु के स्थान अपान वायु निकलने लगती है।

भोजन खूब चबा २ कर खाना भोजन के पश्चात् लघुशंका अवश्य करना दिन में कुछ देर लेटना रात्रि को टहलना चाहिये।

ओ३म्

# तृतीयाध्यायारम्भः

तृतीयाध्याय वह है जिस में पति के साथ रह कर गृहस्थाश्रम व्यतीत करना होगा। इस अध्याय से सम्बन्ध रखने वाला बहुत सा विषय गर्भाधान और सन्तान की उत्पत्ति पालन पोषणादि दूसरे अध्याय में आगया है। उस को वहीं से देखलेना। यह गृहस्थाश्रम यदि विचार दृष्टि से देखा जाय तो सब आश्रमों से कठिन है क्योंकि इस में प्रथम तो दूसरे आश्रमवालों से यथावत् वर्ताव करना पड़ता है, द्वितीय गृहस्थी के अन्तर्गत बखेड़े झमेले नाना प्रकार की रुकावटों और कठिनाइयों का सामान करना पड़ता है ब्रह्मचर्य में धर्म की और इस गृहस्थ से अर्थ की, और आगे वाणप्रस्थ से कामना तथा संन्यास से मोक्ष की प्राप्ति करनी होती है। इस हेतु इस गृहस्थी रूपी बोझ को उठाने के लिये स्त्री पुरुष को बहुत ही हृष्ट पुष्ट ज्ञानी बुद्धिमान बलवान होना चाहिये। इसी वास्ते बतलाया है कि गृहस्थी करने का अधिकारी वह है जो युवावस्था को प्राप्त होकर ब्रह्मचर्य सेवन कर चुका हो, वह सुन्दर वस्त्र धारण कर समावर्त्तन संस्कार कर घर आया हो और धर्म से धन कमाता हो तो विवाह करै-नहीं तो न करै। जिस से ज्ञात होता है कि पूर्ण विद्वान् जितेन्द्रिय आरोग्य कमाऊ को ही विवाह की आज्ञा है अन्य को नहीं। परन्तु शोक का स्थान है कि पूर्व लेखानुसार छोटे २ बच्चों का बिवाह करदिया जाता है जिस के कारण वह दिल दिमाग निर्बल हो जाने से विद्याध्ययन और पुरुषार्थ दोनों से हाथ धो बैठते हैं। विवाह के अर्थ सप्त प्रतिज्ञा करके पाणिग्रहण करना अर्थात् सात प्रकार की प्रतिज्ञा करके विवाह करना है आज उस की यह दशा है कि बच्चे को विवाह समय सोते से जगाया जाता है कि बच्चा उठो

फेरे खालो। वह कहता है कि मैं पेड़े नहीं खाऊँगा तुमही खालो। उस समय उसे इतनी भी बुद्धि नहीं तो विवाह से क्या लाभ ? पूर्वकाल में स्त्री पुरुष का जोड़ा मुकम्मिल और सुधरा हुआ आपस के झगड़ों से पृथक् होता था न आज की तरह जिसे देखो ऐंठा हुआ दिखाई पड़ता है जिस का फल यह होता है कि जब पढ़ने लिखने का समय आता है तब तक वह माता पिता बच्चों के बन जाते हैं फिर बतलाइये कैसी विद्या और कैसा पुरुषार्थ। स्त्री पुरुष में प्रतिज्ञा हुई नहीं, वकील द्वारा प्रतिज्ञा कराई जाती है। मुवक्किल को खबर तक नहीं, मुकदमा फैसल होजाता है यही कारण है कि आज घर सुखस्थान नहीं रहा, वरन् दुःखस्थान हो रहा है। इधर तरह २ के झगड़े, उधर निर्बल पुरुषार्थहीन देश प्रति दिन रसातल को चला जा रहा है। सच तो यह है कि इस बालविवाह ने इस कदर देश को नुकसान पहुँचाया है उतना दूसरों ने नहीं। इस के कारण स्त्री पुरुष हाड़ों की माला बने हुए हैं पर इस निर्बलता पर भी अधिक क्रोधी दिखलाई दे रहे हैं। क्रोध बाहरवालों पर नहीं आता, बाहर देखो तो बड़े सुशील सीधे हैं। घरवालों के लिये शेरबबर हैं। माता भगिनी स्त्री से सीधी बात नहीं करते। स्त्रियां भी पतियों का क्रोध बच्चों पर बुझाती हैं। जरा जरासी बातों में जैसी २ तू तकार धितकार फटकार मचती है उसका वर्णन नहीं होसक्ता। बच्चा उत्पन्न होगया उस की शिक्षा और पालन पोषण का ध्यान नहीं परन्तु उसके व्याह की घर में प्रति दिन वार्त्ता रहती है। वे क्या जानें कि मनुष्य जन्म किन २ साधनों की प्राप्ति को मिला है। कारण क्या है कि मुख्य तत्व ब्रह्मचर्य्य का नाश मारा है, अब सुख कहां, सुख के तो स्वप्न में दर्शन नहीं हो सकते। कहा भी है कि ( मूले नष्टे नैवपत्रं न पुष्पम् ) यदि जड़ नष्ट होजावे तो फिर न फल आसक्ता है न पत्ते लगसक्ते हैं।

जब पहले ब्रह्मचारी बनकर स्त्री पुरुष गृहस्थी करते थे तब स्त्रिया अपने पतिव्रत धर्म और पुरुष स्त्रीव्रत को पूर्णतया शास्त्रों की आज्ञानुसार सखा सखी इष्ट मित्र समझकर निभाते थे। ये जो आनन्द मंगल रहत थे,

उनका वारापार न था । वह कौनसा सुख था जो उन्हें नसीब न था। देखो राजा अज अकेला विवाह करने को जाता है, सेना साथ चलती है, वह उसे रोककर कहता है कि यदि मैं अपनी रक्षा नहीं कर सक्ता तो मुझे विवाह करने की आवश्यकता नहीं। सेना साथ नहीं छोड़ती मार्ग में खूनी हाथी आता है। सारी सेना भागती है। राजा से कहती है कि मुझे बचाइये। वह कहता है कि तुम तो हमारी रक्षा को आये थे। राजा गांसी निकालकर तार मारता है इस हेतु से कि हाथी मर न जावे, मगर हाथी के प्राण हवा होजाते हैं। राजा पूछता है कि देखो हाथी मर तो नहीं गया। सेना उत्तर देती है कि मर गया। तब वह सेना से कहता है कि आपने एक हत्या मुझ से कराई, अब तो लौट जाओ आखिर सेना लौट जाती है आप तनहा इन्दुमती को विवाह कर के लाता है। राजों ने अकेला जानकर उस पर धावा कर दिया, उसने मोह अस्त्र वा विषास्त्रों से सारी सेना को राजों सहित मूर्छित कर के और यह एक तख्ती पर लिखकर कि यदि मैं चाहता तो तुम सब के प्राण वियोग कर के चला जाता परन्तु मैं तुम्हें प्राणों का दान देकर जाता हूं--इस प्रकार विवाह कर के घर चला आया। इस वर्णन का तात्पर्य्य यह है कि जब तक कि ब्रह्मचारी और पूर्ण बलधारी नहीं होते थे विवाह नहीं करते थे।

इस लिये हे बहिनो! चाहे तुम स्वयंबर की रीति से विवाह करो, चाहे पिता माता और अपनी बुद्धि की परीक्षा से, दोनों दशाओं में पति सेवा सब से बड़ा धर्म जानो। गृहस्थी में इस से मीठा मेवा दूसरा कोई नहीं है। पतिव्रता स्त्री के वास्ते पतिसेवा ही बड़ा यज्ञ व्रत तीर्थ है इसी से स्वर्ग मिल सक्ता है। बिना इस के सुख और शान्ति प्राप्त नहीं होती। यदि गृहस्थी में कोई सुख और आनन्द है तो पति और स्त्री का प्रसन्नता पूर्वक रहना है, नहीं तो बिना प्राण के शरीर की और बिना जल के मछली की जो दशा होजाती है, ऐसेही बिना पुरुष के स्त्री की दशा होती है। स्त्री के सारे सुख पति के साथ हैं। मैके सासुरे आये गये

इधर उधर अड़ोरा पड़ोस जो कुछ भाव और आदर रात्कार होता है, सव पति के दम तक है। उस के पश्चात् कोई वात नहीं पूछता। अपने वेगाने वनजाते हैं। इस कारण तुम्हें उचित है कि चाहे जितना कष्ट क्यों न हो, दुःख पर दुःख क्यों न सहने पड़ें परन्तु कदापि कटु वाक्य उस के लिये प्रदान मत करो। हर समय वह कार्य करती रहो जो पति के हर्ष और प्रसन्नता के कारण हों। गृह के आय और व्यय का विचार रक्खो। व्यर्थ व्यय न करो। व्यर्थ व्यय और यथार्थ व्यय की मीमांरा करना दुस्तर जान पड़ता है। एक लखपती को हजार दो हज़ार किसी कार्य में व्यय कर देना वहुधा मनुष्य व्यर्थव्यय नहीं कहते परन्तु दरिद्री को दरा रुपये उसी कार्य में व्यय करना व्यर्थव्यय कहाजाता है। मैंने जहां तक विचार किया है तो यदि कोई व्यर्थ व्यय का यथार्थ लक्षण हो सकता है तौ यह है कि उस कार्य को जिस में व्यय करना स्वीकार है, विचारना चाहिये। यदि वह कार्य उत्तम धर्म सम्वन्धी है तो यदि दस मुद्रा आय रखनेवाला पुरुष कुछ आय उस कार्य में व्यय कर कर दे तो मैं व्यर्थ व्यय नहीं कहूंगा और यदि वह कार्य धर्म विरुद्ध सांसारिक पारमार्थिक सुख का नाश करनेवाला है तौ मैं कहूंगा कि यदि लखपती एक पैसा तक उस में व्यय करेगा तो निःसन्देह व्यर्थ व्यय है। पस व्यय करने रो प्रथम ही सोचो और समझो कि वह कार्य किस लक्षण युक्त है। इस के अतिरिक्त गृहस्थी में कभी आय अधिक होजाती है, कभी व्यय। तुम कभी व्यय के पश्चात् शोक न करो। धन रक्खा रहने से कोई काम नहीं निकलता यह जव अपने से पृथक् होता है तभी कार्य चलता है। हर समय प्रफुल्लित और गृह के सारे कार्यों को अपनी दृष्टि में रक्खो और सारे पदार्थों को देखती भालती रहो। सव ठीक ठिकाने रहैं। प्रीति से प्राप्ति के अनुसार व्यय करो। जैरा किः—

सदाप्रहृष्टयाभाव्यं गृहकार्येषुदक्षया।
सुसंस्कृतोपस्करया व्ययेचामुक्तहस्तया॥

और देखो मनुजी ने और भी वतलाया है कि स्त्रियों के लिये

यज्ञ व्रत उपवास अलग नहीं हैं, अकेली पति सेवा से ही स्वर्ग प्राप्त होता है । जैसा कि:—

**नास्ति स्त्रीणां पृथग्यज्ञो न व्रतन्नाप्युपोषिनम् ।**
**पतिं शुश्रूषते येन तेन स्वर्गे महीयते ॥**

यही नहीं वरन् बतलाया है चाहे पति गुणहीन हो वा अंगहीन, चाहे और बहुत से दोषों से भरपूर हो तौ भी पतिव्रता स्त्री को उचित है कि उस की निन्दा न करे । यदि वह स्वयं योग्य है तो अपने पति को नम्रता सुशीलता मधुर भाषण से उस के दोषों को छुड़ाकर गुण युक्त बना लेवे । जैसा कि विद्योत्तमा ने कालिदास जैसे मूर्ख को महा विद्वान् बनालिया था । आगे विदित होगा कि एक पतिव्रता स्त्री ने पतिसेवा कर के दरिद्रता से महा ऐश्वर्य पाया था । यह भी तुम्हें विदित हो जावेगा कि सुन्दर से सुन्दर भोजन करने पर भी दुष्ट स्त्री के संग से और उस के कठोर बचनों से पति सदा दुर्बल रहता है और सूखी और रूखी खुराक मिलने पर पतिव्रता स्त्री और उस के मधुर वचनों और सेवा से वह बलिष्ठ और आरोग्य रहता है । इस लिये बतलाया है कि जो पति शीलवान् नहीं, अन्य स्त्री से प्यार रखता हो वा निर्गुणी हो तौ भी जो स्त्री पतिव्रता है तो वह उसे देवता के तुल्य समझ कर जैसे गुणवान अधिक प्यार करने वाले स्त्रीव्रतधारी पति की सेवा करती वैसी ही किया करे । जैसा कि:—

**विशीलःकामवृत्तो वा गुणैर्वा परिवर्जितः ।**
**उपचर्यः स्त्रिया साध्व्या सततन्देववत्पतिः ॥**

इस के अतिरिक्त यह भी बतलाया है कि पतिव्रता स्त्री अपने पति के जीवन और मरण पश्चात् कोई कार्य ऐसा न करे जो उस के पति की आज्ञा के प्रतिकूल हो, धर्म विरुद्ध हो पति की आज्ञापालन करना अभीष्ट है । जैसा कि:—

पाणिग्राहस्यसाध्वीस्त्री जीवतोवामृतस्य वा ।
पतिलोकमभीप्सन्ती नाचरेत्किञ्चिदप्रियम् ॥

और भी सुनिये कहा है कि:-

वृद्ध रोगवश जड़ धनहीना, अन्ध बधिर क्रोधी अतिदीना॥
ऐसेहु पतिकर करै अपमाना, नारिपाव यमपुर दुखनाना॥
एकै धर्म एक व्रतनेमा, काय वचन मन पति पद प्रेमा॥

देखो मनु जीने वतलाया है कि यदि कोई स्त्री अपने पति के अतिरिक्त किसी अन्य पुरुष से भोग करे तो उसे वहुत स्त्रियों के सामने कुत्तों से कटवा के मारडाले और जो पुरुष अपनी स्त्री के अतिरिक्त किसी अन्य स्त्री से भोग करे तो उसे वहुत पुरुषों के सामने लोहे के गर्म तख्ते पर लिटाकर झुलसाकर राजा मारडाले । जैसा कि:-

भर्तारं लङ्घयेद्य स्त्री स्वज्ञाति गुणदर्पिता ।
तां श्वभिः खादयेद्राजा संस्थ ने वहुसंस्थिते ॥
पुमांसंदहेत्पापं शयनेतप्त आयसे ।
अभ्यादध्युश्च काष्ठानि तत्र दह्येत पापकृत् ॥

इस गृहस्थ में पति के अतिरिक्त सास, ससुर, ननंद, जिठानी, द्यौरानी, अड़ोसन, पड़ोसन, नायन, वारिन, धोविन, भंगन आदि से काम पड़ता है तुमको उचित है कि सव से प्रियभाषण करना, कड़ुवे वचन न वोलना, आप से न्यून पदवाली धोविन, भंगन से न कभी अधिक रंग रखना, न उनसे कभी हंसना, न अधिक मुँह लगाना, न कठोर उत्तर देना । इस कारण कि तुम्हारे में दुर्व्यसन न आजावें और फिर वह यथार्थ कार्य न करें । देखो तुम्हारे सास ससुर आदि तुम से अप्रसन्न न होने पावें, सव से अमूल्य औषधि यह है कि तुम कभी कठोर वाणी न वोलना, सदा क्रोध आने पर भी, कठिन पीड़ा देने पर भी उनकी

बातों को सहन करना परन्तु उत्तर न देना, सदा चार बजे प्रातःकाल सब से पहले उठना ।

देखो जब हनुमान जी महाराज लंका में सारे रनिवासों और प्रसिद्ध स्थानों में जानकी जी को खोजते २ एक नदी के समीप सन्ध्या समय पहुँचे उस समय हनुमान् जी किस पूर्ण विश्वास से सीता जी के विषय में कहते हैं कि यदि सीता राजा जनक की कन्या अभी तक जीवित है तौ अवश्य ऐसे दुःख के समय में भी इस सुन्दर स्थान पर सन्ध्या करने के लिये आवेगी जैसा कि बाल्मीकीय रामायण से प्रकट होता है:—

सन्ध्याकालमनःश्यामा ध्रुवमेष्यति जानकी ।
नदींचेमांशुभजलां सन्ध्यार्थेवरवर्णिनी ॥ १ ॥
यदिजीवतिसादेवी ताराधिपनिभानना ।
आगमिष्यति सावश्यमिमांशीतजलांनदीम् ॥ २ ॥

अर्थ नं० १ जनक की कन्या सन्ध्या के समय का ध्यान कर के अवश्य सन्ध्या करने के निमित्त इस पवित्र निर्मल जल वाली नदी पर आवेगी ।

अर्थ नं० २ यदि वह चन्द्रमुखी देवी जानकी जीती है तौ अवश्य इस शीतल जल वाली नदी पर आवेगी ।

इस लिये सन्ध्या करने का स्वयम् अभ्यास करो, बच्चों को उठावो, सन्ध्या करावो । यह नहीं कि जीते जी तौ सन्ध्या न करेंगी, मरण पश्चात् चाहे कोई यज्ञोपवीत तक करादेवे । बालकों को प्रातः काल उठाकर नमस्ते कराना सिखाओ । देखो रामायण में लिखा है कि बाल्मीकि वशिष्ठ को नमस्ते करके गये ( नमस्तेऽस्तुगमिष्यामि ) सन्ध्या के बहुत अधिक लाभ हैं । यहां अधिक वर्णन करने से पुस्तक बढ़ी जाती है । इस कारण इतनाही बताता हूं कि इस संसार में रात दिन बहुत प्रकार के संसारी जनों के साथ रहना पड़ता है । नाना प्रकार के काम करने से

ईर्षा द्वेष छल कपट ( मक्र फरेब ) से हृदय मलीन होजाता है। जब संध्या की जाती है तो नित्य प्रति प्रातः सायंकाल अपने हृदय की नाली को सन्ध्यारूपी ईश्वरीय ध्यान के अमृतरूपी जल से ईर्षा द्वेष छल कपट रूपी मल को धोया जाता है, तो हृदय शुद्ध होजाता है। जिस प्रकार इस संसार में नाली और सड़कों की नित्य प्रति सफ़ाई की जाती है स्नान भोजन की भी नित्य ही आवश्यक्ता पड़ती है। यदि प्रति दिन सफाई न की जावे तो सड़कें व शरीर मैले होजाते हैं, बस इसी प्रकार इस संसार में रहने से सांसारिक जनों से उत्पन्न हुई मलीनताओं को धोने के लिये नित्य प्रति संध्या की आवश्यक्ता है। रहा हवन, उस के बराबर संसार में दूसरा कोई परोपकारी कार्य नहीं है। क्योंकि कोई भी अपने वैरी के साथ भलाई नहीं करता, परन्तु हवन यज्ञ से जो जल वायु शुद्ध होता है उस से शत्रु का शत्रु भी लाभ उठाता है। यह न समझें कि हवन में डाला हुआ पदार्थ नष्ट होगया। वरन् वह सहस्र गुणा होकर सहस्रों भाग अधिक लाभ पहुँचाता है। एक मनुष्य दश मिर्च खाजाता है। परन्तु एक मिर्च अग्नि में पड़ने से उस का सैकड़ों वैठे हुये पुरुषों पर प्रभाव पड़जाता है। सब के सब खांसने और ठों २ करने लगते हैं। वा एक रत्ती कस्तूरी अग्नि में पड़कर सैकड़ों के मस्तकों को सुगन्धित बना देती है। जैसे सैकड़ों मन दुग्ध को पावभर कांजी जमाकर दही बना देती है ऐसे ही हवन में डाला हुआ घृत जब मेघमण्डल में पहुँचता है वह भाप को जमाकर बादल बना देता है। इसी से सब शुद्धियां होजाती हैं। इस की बड़ी महिमा वेदों में बतलाई है। जहां अग्नि से काम लेना बन्द होजाता है उस में मलीनता और अशुद्धता आजाती है। जो अपवित्र वस्तु होती है चाहे मिट्टी वा पीतल आदि धातु की हो वा जल वायु की किस्म से हो सब अग्नि से ही शुद्ध होती है। अग्नि में डालने से सुगन्धित वा दुर्गन्धित पदार्थ का ज्ञान होजाता है। इस लिये इस की सामग्री में दुर्गन्धित पदार्थ वर्जित है। श्रीरामचन्द्र ने यज्ञ की, दुर्गन्धित पदार्थ मांसादि डाले जाने से रक्षा, बचपन में जाकर की थी। ( आग्नेयंयज्ञमध्वरम् ) मंत्र में बतलाया है कि हिंसा रहित यज्ञ तेरह देवतों को पहुँचता है। इन्हीं लाभों पर दृष्टि कर के बतलाया थाः—

**न विप्रपादोदकपंकितानि नवेदशास्त्रध्वनिगर्जतानि ।**
**स्वाहास्वधाकारविवर्जितानि श्मशानतुल्यानिगृहाणितानि ॥**

अर्थ—जिन घरों में वेदपाठी ब्राह्मणों के पैर नहीं धोयेगए, जिन घरों में स्वाहा स्वधा शब्द का उच्चारण होकर हवन यज्ञ नहीं हुये, वेदपाठ नहीं हुआ, वे घर श्मशान के तुल्य हैं । उन घरों की वायु अशुद्ध हो जाती है । जो हवन यज्ञ को आतिशपरस्ती बतलाते हैं यह उन की भूल है । उन से पूछना चाहिये कि हवन का करनेवाला तौ कोई हाथ नहीं जोड़ता । इस पर भी यदि तुम आतिशपरस्ती कहते हो तौ जब तुम उस आग से रोटी बनाते हो तौ हम तुम्हें आतिशपरस्त क्यों न कहैं । यह पदार्थ-विद्या न जानने का कारण है, उनकी भूल नहीं । आग पर मांस रखते ही चिरायँद फैल जावेगी इस लिये ऐसी दुर्गन्धित वस्तुओं का त्याग और सुगन्धित रोगनाशक मिष्टकारक और पुष्टिकारक पदार्थों से हवन यज्ञ किया जाता है, इस लिये सन्ध्या हवन वलिवैश्व नित्य प्रति ही करना चाहिये । वलिवैश्व में छः ग्रास चीटी कुत्ते कौवे भंगी रोगी पतितों को निकाले जाते हैं और अग्नि में डालने से वही लाभ है जो हवन यज्ञ से हैं । एक अधिक लाभ यह है कि यदि शत्रु खाने में विष मिलादे तौ खाने से प्रथम अग्नि पर डालने से उस की चिरायँद आने पर उस के प्राण की रक्षा होजाती है । आपने प्रयोग वा घात का मामला वा नाम सुना होगा । वह यही था कि विष खिलाकर मार देते थे परन्तु जो ऐसा करते थे उन्हें भी भय रहता था इस लिये अपनी रक्षा के लिये बिना लवण का भोजन बनवाते थे । उस की वलिवैश्व कर जब परीक्षा कर लेते थे तब ऊपर से लवण डालकर खाते थे । एक २ बात में अनेकानेक लाभ हैं । ज्यों २ खोजते जाइए नये २ पदार्थ हाथ लगते जावेंगे । इस लिये उक्त यज्ञ आप करो और बच्चों से कराओ । यदि पहले से भले स्वभाव नहीं पड़ते तौ बुढ़ापे में कदापि परमात्मा का स्मरण शुभ कर्म सन्ध्या हवन नहीं होसक्ते । यह चंचल मन जब तक वर्षों के वैराग्य और अभ्यास से वश में नहीं किया जाता क्या कभी मानसक्ता है ?

कदापि नहीं । अब न करना और बुढ़ापे पर छोड़ना ऐसा है जैसा कि किसी के घर में आग लगजावे तब उस अग्नि के बुझाने के अर्थ कुआं खोदना । जब तक कुआं खोदकर पानी निकाला जावेगा क्या तब तक गृह सुरक्षित रह सक्ता है।

इस प्रकार जब तक कि शरीर और इन्द्रिय बलिष्ट हैं तब तक तौ किया नहीं । जब हाथ पांव जवाब देगये, स्मरण शक्ति विस्मरण होने लगी, इन्द्रियों ने जवाब देदिया फिर उस समय क्या आशा होसक्ती है ।

प्रातः उठने से एक तौ आलस्य नहीं घेरता । द्वितीय शौच साफ होता है । जैसे कि बोतल में गन्दा पानी भरा होता है जब उसको कुछ देर रक्खा रहने दिया जाता है तो तली में तल्छट बैठजाती है । ऐसे ही जो प्रातःकाल शौच जाते हैं तौ उन्हें रात्रि में शयन करने से पेट रूपी बोतल में मलरूपी तल्छट नीचे बैठी हुई त्यागने में बड़ी सुगमता होती है । दिन चढ़ने पर जैसे बोतल को हिला देने से तली का बैठा हुआ मल ऊपर को चलता है ऐसे ही सूर्य निकलने पर शौच न जाने से मल के दुर्गन्धित परमाणु मस्तक की ओर चढ़ने लगते हैं, और मस्तक जो बुद्धि और विचार करने और सोचने समझने का केन्द्र है, अपवित्र होकर मैला होजाता है । और प्रातःसमय मल मूत्र एकत्रित न होने से स्वप्न भी नहीं दिखते । इस के अतिरिक्त गृहस्थ में भोजनों के बनाने वा बनवाने की आवश्यकता पड़ती है । इस लिये अधिक विचार वा चतुराई से समय और ऋतु का विचार रखते हुवे, शीत उष्ण, हलके भारी, तीखे खारी पदार्थों वा अपनी और पति और गृहवाली की स्वस्थता शारीरिक दशा और रुचिपर ध्यान रखते हुवे भोजन बनवाना उचित है । प्रथमही विचार लेना चाहिये कि कौन वस्तु लाभदायक है और कौन हानिकारक ? नाना प्रकार के भोजन बनाओ । और मसाले लवणादि का अटकल ठीक रक्खो न कभी न्यून पड़े, न अधिक, जलने और कच्चा रहने का विचार रहना चाहिये ।

इनसे छुट्टी पानेपर कपड़े सीना, कसीदा काढ़ना, गृहस्थ सम्बन्धी

अनेक कार्य हैं, उनको करती रहना । अपना अमूल्य समय सोने में ही न गवाँ देना चाहिये । जिन्हों ने समय को अमूल्य समझ कर उससे यथावत् काम ले लिया वही संसार में कुछ कार्य कर नाम छोड़ गये । इस कारण समय को सबसे प्यारा जान कर इस का मान करो । आज कल की मूर्ख स्त्रियां अपना समय आपस के लड़ाई झगड़ों निकम्मी और निठल्ली बातों वा सोने में वा अन्य झगड़ों में गवाँ देती हैं । यदि उनसे कोई एक पैसा मांगे तो कुछ न कुछ वार अवश्य होगी, परन्तु समय जो लौकिक पारलौकिक साधनों की पूंजी है जिससे सम्पूर्ण कार्य सिद्ध हो सकते हैं उसके व्यय की ओर किंचित् विचार नहीं है ।

शोक ! मूर्ख स्त्रियां अपनों से लड़ती हैं और अड़ौसिन पड़ौसिन से मेल जोल रखती हैं । उन्हें अपना घर काट काट कर देती रहती हैं । अन्त को अपना नाम बुराई और बदनामी के साथ छोड़ जाती हैं । उन्हें अपना अवगुण ज्ञात नहीं होता परन्तु घर बाहर वाले उन्हें डायन, चंडी, कंकाला, कलजुगहाई, जुल्हाला, लड़ाका, खैहारा, बड़ी बोलता, भोचाली आदि नामों से निर्धारित करते हैं । इस लिये प्यारी बहिनो ! तुम सारे मेवे खाओ, एक फूट को बचा देना । यह वह फूट नहीं है जिस से मीठा स्वाद हो । वरन् यह जिस घर में उपजती है या इस की बेल फैलती है उसे सत्यानाश किये बिना नहीं रहती । देखो यह एक समय रावण विभीषण में फैली, लंका और रावण को धूल में मिला दिया । फिर दुर्योधन और युधिष्ठिर में फैली, महाभारत रचाकर देश रसातल को पहुँचा दिया । पश्चात् पृथ्वीराज जयचन्द्र में इसका पेड़ उगा, उसके परिवार तक को सत्यानाश कर दिया और महा विपत्तियों का सामना कराया । आज वही फूट घर घर फैली हुई है, जिसका हाल सब पर विदित है, कि सुख और शान्ति के स्वप्न में भी दर्शन नहीं होते । भाई भाई के, बेटा पिता के, बेटी माता के लुगाई पति के विरुद्ध हो रही है । सच कहा है किः—

**खेत में उपजे सब कोई खाय । घर में उपजे घर बहजाय ।**

इस लिये तुम इसे खाकर अपने पितामह सास ससुर पति के नाम पर बट्टा कदापि न लगाना यह खूब स्मरण रखना कि जैसा बर्ताव तुम आज अपने सास श्वसुर के साथ करोगी कल वैसाही तुम्हारे आगे आने वाला है। जो किसी को दुःख देता है उसको सुख कदापि नहीं मिलता।

जो और के मारे छुरी, उस के भी लगता है छुरा।
जो और का चीतै बुरा, उसका का भी होता है बुरा॥

## ❃ कहानी ❃

एक बाप के चार बेटे थे। बड़े भारी सेठ साहूकार थे। उन चारों में केवल एकके एक लड़का था, वह घर भरका बड़ा प्यारा दुलारा था। बारह चौदह वर्ष की आयु हो आई थी। उस के पिता ताऊ अपने बूढ़े पिता को एक मिट्टी की रकाबी में भोजन परोसकर खिलाया करते थे। टूटी चारपाई शयनार्थ दे रक्खी थी। स्वयं सोने चांदी के पात्रों में खाते मसहरी, बढ़िया खाटों पर सोते थे। यह रोज देखता कि पितामह का बड़ा अपमान कर रक्खा है। लोग उसे ताना भी देते। एक दिन उस लड़के ने वह रकाबी उठाकर कहीं छिपा कर रखदी। जब भोजन का समय आया तब उस रकाबी की ढूंढ़ पड़ी ढूँढ़ते २ उस बालक से भी पूछा तब इसने कहा कि मुझे मालूम है, उठाकर मैंने ही रख छोड़ी है। परन्तु मैं दूंगा नहीं, मुझे तो अभी तीन की और आवश्यकता है। तब बाप चचाने पूछा कि तुम क्या करोगे। कहा कि जब तुम बूढ़े होगे तो इसी प्रकार तुम्हारे लिये भी रकाबियों की आवश्यकता होगी। मैं तो वही करूंगा जैसा आप को करते देखूंगा। तब इन्हें ज्ञान प्राप्त हुआ और नेत्र खुले और अपने वृद्ध पिता का यथावत् सत्कार करने लगे। जान गये कि इसमें संदेह नहीं जैसा बर्त्ताव हम करेंगे वह ही कल आगे आने वाला है। इसी पुष्टि में एक और कथा है। चार मनुष्य साथ साथ जा रहे थे। उन में दो हिन्दू दो म्लेच्छ थे। मार्ग में एक मुहरों की थैली पाई जिस में चार सौ मुहरें थीं। हिन्दुओं ने कहा कि पहले

भोजन कर लेना चाहिये पश्चात् आगे चलकर सौ सौ मुहरें बाट लेंगे। उधर दोनों हिन्दू खाना लेने गये। आपने वहीं खा लिया, उन दोनों के खाने में विष मिलाकर ले आये, यह सोचकर कि तनहा हमीं तुम बांट लें, क्यों उन्हें मिले। इधर इन दोनों ने सलाह करके छुरे पैने कर रक्खे कि जबही खाना लावें, दोनों को मारदो और सम्पूर्ण मुहरें हम तुम बांट लें। चुनाचे उन्हों ने ऐसाही किया। इधर दोनों हिन्दू मर गये, उधर उन्होंने कहा कि प्रथम भोजन खालो तब आगे चलेंगे। जहाँ भोजन किया और वह दोनों भी वहीं रहे। मुहरें वैसी की वैसी ही पड़ी रह गईं। सच है कि "नतीजा कारबद का कारबद है"। चारों ने हिन्दूपन और म्लेच्छपन किया उसका फल भुगता। बहनों! तुम कभी दूसरों का बुरा मत चीतो, न दुःख भोगो। बहनों! अब तुम्हें मैं इसके आगे स्त्रियों की वह प्रसिद्ध बातें सुनाता हूं जिन से ज्ञात हो जायगा कि वह कैसे कैसे शुभ कर्म कठिन २ विपत्तियों का सहन कर धर्म की रक्षा कर अपना नाम प्रसिद्ध कर गई हैं। कैसी २ पतिव्रता—वीरनारी—प्रबन्धकर्त्ता—पुत्रों को धर्मात्मा बनाने वाली बुद्धिमती होगई हैं कि जिन के वृत्तांत पढ़कर धर्म का महत्व और सचाई पर मर मिटने का साहस उत्पन्न हो जाता है। अब मैं स्त्रियों के वृत्तान्त को चार कांडों में बांटता हूं। पहले काण्ड में पतिव्रता स्त्रियों के वृत्तांत हैं जिन को तीन पादों में बांटा है। प्रथम पाद में जिन्हों ने पतियों की सेवा की और पातिव्रत धर्म को निबाहा। दूसरे पाद में केवल दो स्त्रियों का वर्णन है जिन में से एकने पतिसेवा के आश्रय दरिद्रता से महा ऐश्वर्य पाया। तृतीय पाद में दो स्त्रियों का चरित्र है। एक पतिव्रता सुशीला नारी जिस के आश्रय से पति आरोग्य और बलिष्ठ रहता था, दूसरी दुष्ट कुटिल खल जिसके कारण पति दुर्बल निर्बल होगया। द्वितीय काण्ड में उन स्त्रियों के वृत्तांत हैं जिन्हों ने पुत्रों को धर्मात्मा बनाया और अपने धर्मको बचाया। तृतीय काण्ड में बीर नारियों के और चतुर्थ काण्ड में बुद्धिमती और प्रबन्धकर्त्ता रानियों के वृत्तांत हैं।

नोट—बहुत संक्षेप से केवल आवश्यक बातें दिखाई गई हैं।

# प्रथम कांड ।

## पाद १

## ❀ (१) सीता अर्थात् जानकी ❀

इन के विदुषी और धर्मात्मा होने के विषय में प्रथम वर्णन हो चुका है । अब आप किंचित् उन के पतिव्रत धर्म, पतिसेवा, पति प्रेम की ओर ध्यान दीजिये । जिस समय रावण सीता को हरे लिये जा रहा था उस समय सैकड़ों प्रकार के लोभ और नाना प्रकार की धमकी दे दे कर समझाता जाता था कि तू विलाप मत कर । उस समय सीता रावण से यह कहती जाती थी कि हे दुष्ट ! तू मुझे निष्कारण दुःख देता है और अपनी दुष्टता को प्रकट करता है, परन्तु स्मरण रहे कि जैसे कोई पागल दहकते हुए आग के अंगारे को रुईदार कपड़े के पल्लू में छिपाये लिये जाता हो, विदित है कि जब वह चिनगारी प्रज्वलित उत्तेजित हुई उस समय उस के शरीर की उस के लपेटों से स्वस्थता की स्वप्न में भी आशा नहीं हो सकती । ऐसे ही तू उस पागल के तुल्य है । अरे ! क्यों अपने जीवन के पीछे पड़ा है मुझे तेरी कुशल दिखाई नहीं पड़ती । अरे ! तू तो पंडित है । नहीं जानता कि अन्त को अधर्मी का जड़ पेड़ से नाश हो जाता है ।

अधर्मेणैधते तावत्ततो भद्राणि पश्यति ।
ततःसपत्नाञ्जयति समूलस्तु विनश्यति ॥

अधर्म का परिणाम शुभ कभी नहीं हुआ है । लंका में पहुँच कर एक दिन रावण आकर सीता को बहुत समझाता है कि अरी सीता ! तू मेरी पत्नी बनना स्वीकार कर ले । मैं तुझे पांच सहस्र रानियों में पटरानी बनाऊंगा । वे सारी रानियां तेरी सेवकाई करेंगी । वह उत्तर

देती है कि हे मूर्ख! खबरदार, जीभ मुँह में दाब। अब कभी यह बात मुँह से न निकालना। पतिव्रता स्त्री स्वप्न में भी अन्य पुरुष का ध्यान नहीं करती क्यों मुझे तू झूठा लोभ दिखाता है। अरे! इसे तो मैं स्वतः ही छोड़ आई हूं। यदि यही इच्छा होती तो रंगमहलों में टहलनियों की सेवा अयोध्या ही में क्यों छोड़ती। यह बात भली प्रकार जान ले कि मेरी गर्दन या तो श्रीरामचन्द्र आर्यसुत का हाथ ही छू सक्ता है वा तेरी तलवार। सो शिर हाज़िर है, चाहे इसी समय धड़ से अलग कर दे या जब तेरी इच्छा हो। परन्तु यह कदापि अर्मान तेरे पूरे नहीं हो सकते। और कहती है कि तुझ में और रामचन्द्र में उतना अन्तर है जिसे मैं जानती हूँ, जितना समुद्र और परनाले में वा सियार और सिंह में वा कौवा और हंस में वा रात और दिन में। तेरी वीरता भली भांति विदित है, तभी तो चुरा कर छिपा कर मुझे लाया। जब चींटी के मौत के दिन निकट आते हैं तब पर निकलते हैं। तेरी मौत निकट आ गई है, जो ऐसे महापाप की ओर तेरी दृष्टि है।

इस से अधिक एक दिन वह समय था, जब श्रीरामचन्द्र जी रात को सोये थे इन अभिलाषाओं को लेकर कि प्रातः राज्यतिलक होगा। सुबह आज्ञा होती है कि राजतिलक नहीं है वरन चौदह वर्ष का वन वास है। महाराज अपनी माता से आज्ञा मांगने जाते हैं, उस समय सीता भी साथ चलने को तैयार होती है। श्रीरामचन्द्र और माता कौशल्या समझाती हैं कि अरी सीते! तू महलों की रहने वाली है, तेरे कोमल तलवे बनों के कांटे खुबड़ों से घायल हो अत्यन्त पीड़ा सहेंगे। कभी घर से बाहर पग भर चलना नहीं पड़ा वहां कोसों पैदल चलना पड़ेगा। घर में नाना प्रकार के भोजन खाती रही हो। वहां बनों में कन्द मूल फलों पर निर्वाह करना होगा। किसी समय पानी तक न प्राप्त होगा, धूप की लुयें, सूर्य की तपिशें, तुम्हारा कोमल मुख सह न सकेगा, यहां टहलनियां तेरी सेवा करती हैं, वहां स्वयं ही सब कार्य करने पड़ेंगे। कठिन दुःखों का सामना होगा। इस लिये तुम यहां ही रहो, साथ

जाने का नाम भी न लो । माता कहती है कि मैं तुझे प्राणों से प्रिय रक्खूंगी शीघ्र राम तुझे आ मिलेंगे । सीता उत्तर देती है कि मैंने आप का कथन और राम जी की शिक्षा सब सुनी, मैं धन्यवाद देती हूं, परन्तु आप यह बतलाइये कि आप जैसे राजा के पुत्र रात्रि को सोये थे तो यह खयाल था कि प्रातः चक्रवर्ती राजा होंगे । सारे राज्य में आप के राज्याभिषेक की धूम मच रही थी, इस समय वन यात्रा को तैयार हैं । आप की कांति में किंचित् भी अन्तर मुझे दिखाई नहीं देता । आप महाराजों के पुत्र क्या वनों के दुःखों के उठाने के योग्य हैं । जिन दुःखों को आप मुझे बताते हैं, वे आप को भी तो हैं । मेरे को दुःख आप को सुख तो नहीं है, परन्तु आप पिता की आज्ञा पालन करने के लिये धार्मिक खयाल से उन सारे दुःख और कष्टों को दुःख नहीं समझते वरन् यह खयाल है कि यह दैविक ताप है, हो ही जाते हैं । यह आप का विचार धार्मिक पुत्र के लिये सब से अधिक आवश्यकीय और सराहनीय है परन्तु आप का यह क्या विचार है कि आप जैसे धर्मात्मा स्वयं पिता की आज्ञा पालन में तत्पर होते हुये मुझे अपने पिता की आज्ञा पालन से वंचित कर रहे हो । आप को मैं नहीं रोकती धर्मात्मा बनिये, मुझेभी सतवन्ती और धर्मपत्नी बनने दीजिये । यदि आप पर पिता की आज्ञा मानना योग्य है, तो मुझे भी अपने पिता की आज्ञा मानना श्रेष्ठ ही है, अनुचित नहीं । मेरे पिता की आज्ञा थी कि दुःख पर दुःख पड़ने नाना प्रकार के कष्ट, अनेक विपत्तियां के शिर पर आजाने पर भी पति का संग न छोड़ना, स्वप्न में भी उस की सेवा से मुँह न मोड़ना सो यही समय तो मेरी परीक्षा का आज आया है । हर्ष के समय सुख में तो सब ही साथी और हितैषी बन जाते हैं । कहा भी है:—

**धीरज धर्म मित्र अरु नारी । आपतिकाल परखिये चारी ॥**

भर्तृहरि शतक में लिखा है कि ( विपदि धैर्यमथाभ्युदये क्षमा ) अर्थात् विपत्ति में यदि धैर्य धारण करे तो धैर्य कहाता है । इस लिये प्राणनाथ! मेरी प्रार्थना स्वीकार कर आप मुझे साथ चलने की आज्ञा दीजिये आप मेरे

दुःख का लेशमात्र भी विचार न कीजिये । आप के साथ में सारे दुःख मुझे सुख प्रतीत होते हैं । क्या अच्छा कहा है:—

श्रीराम वन के चलने को तैयार जब हुये ।
रानी ने सर को क़दमों पै रख यह बचन कहे ॥
आज्ञा से अपने बाप की अब आप बन चले ।
सेवा पति का हुक्म सो मा बाप का मुझे ॥
माता पिता के हुक्म से मुँह कैसे मोड़दूं ।
पतिब्रत धर्म अपना भला कैसे छोड़ दूँ ॥
बनबास राह बाट में साथी रहूँगी मैं ।
चलने के वक्त राह के कांटे चुनूंगी मैं ॥
इस जिस्मोजां से आप की सेवा करूंगी मैं ।
पीने को आप के लिये पानी भरूंगी मैं ॥
पहिले खिला के आप को पीछे मैं खाऊंगी ।
जिस दम थकोगे पैर तुम्हारे दबाऊँगी ॥

एक दिन वनबास की दशा में श्रीरामचन्द्र जी सीता की जंघाओं पर शिर रक्खे हुये सो रहे थे कि एक कौआ आया और ऐसी चोंच मारी कि लोहू निकलने लगा । परन्तु सीता जी.ने रामचन्द्र को नहीं जगाया, न शिर जंघाओं से सरकाया । जब लोहू वह २ कर उन की गर्दन के पास पहुँचा तब आंख खुलगई, तब सीता का प्रेम और पति सेवा का हाल ज्ञात हुआ। कितनी भक्ति पति की थी ।

## ❀ नं० २ दमयन्ती ❀

जब राजा नल जुएँ में अपना राजपाट सब हार गये और अपनी पत्नी दमयन्ती सहित वन में जा पहुँचे । तब नल दमयन्ती के दुःखों को

देखकर जो उस निरपराधिनी पर पड़े थे, अति दुःखित होता था और अपने किये हुये पापों का स्मरण कर लज्जित हो उस को महा दुःख सहते हुये देख कर राजा नल ने समझाया कि अब दमयन्ती ! तू मेरा कहा मान तेरे कोमल २ तलवे कांटों से घायल होगये, तेरा फूल सा चेहरा सूर्य की कड़ी धूप से मुरझा गया। तू अपने माता पिता के यहां चली जा, मुझे अपना दुःख कुछ नहीं है परन्तु मुझ से तेरा क्लेश देखा नहीं जाता। तब दमयन्ती अधिक प्रीति से नम्रता पूर्वक उत्तर देती है कि आप का ध्यान इस समय कहा है ? मुझे काँटे आप के साथ में फूल के समान और धूप चांदनी के तुल्य प्रतीत होती है। इन दुःखों को मैं हर्ष—विनोद सुख समझती हूं। जो मन की वृत्ति पर स्थिर है। आप तनक ध्यान तो दें। किसी ने कहा है:—

रिहा कब दामने शौहर हो जन से।
कहीं साया जुदा होता है तन से॥

आप मेरे दुःखों का कुछ भी विचार न करें। क्योंकि मुझे आप के साथ में सर्व सुख प्राप्त होते हैं। जैसा कि:—

जब राजा नलने हारदिया अपना मालोज़र।
रानी से बोले जाओ तुम अपने पिता के घर॥
कुछ दिन करूंगा वन में औक़ात अब बसर।
रानी ने यह जवाब दिया होके चश्मतर॥
बे आप के वतन मुझे मिस्ले पहाड़ है।
माता पिता का घर मुझे बिल्कुल उजाड़ है॥
दिन रात साथ आपके मुझ को बहार है।
बादे नसीम रह का गर्दो ग़ुबार है॥
गुलज़ार दश्त क़सरे शही कोसनार हैं।

फूलों की पत्तियां मुझे ख़ारों के ख़ार हैं॥
रस्ने क दर्द दुख मुझे मिसले शफ़ीक़ हैं।
जंगल के शेर सांप मेरे सब रफ़ीक़ हैं॥

इस पर भी राजा नल सोते हुये उसे छोड़कर चलेगये। जब रानी सोकर उठी, उस समय रानी की दशा अकथनीय थी। जैसी दशा मछली की विना जल के वा चकोर की विना चांद के होती है उसी प्रकार तड़पती थी। अन्त को ज्यों त्यों मरती खपती पिता के स्थान पर पहुंची परन्तु उसे उसी का ध्यान था, बहुत ढुँढाया अन्त को अपनी युक्ति में सफलता प्राप्त की। पति का पता फिर उसे प्राप्त हुआ। पूरा हाल "नलदमन" पुस्तक से विदित होसक्ता है।

## ❀ नं० ३ गान्धारी ❀

यह राजा धृतराष्ट्र की पत्नी थीं। इनका पति अन्धा था। यह पति सेवा सुश्रूषाको परमधर्म जानती थीं। इन्हों ने जाना था कि पति सेवा से बढ़कर कोई धर्म नहीं। इस कारण सदा तन मन से पति सेवा में तत्पर रहती थीं। इन्होंने यह सोचकर कि स्त्री अर्धांगिनी है जो सुख पतिको प्राप्त नहीं, स्त्री को भी उससे लाभ उठाना उचित नहीं। अपनी आंखों पर हर समय पट्टी बांधे रहती थीं। इनका विचार था कि आधे अंग को यदि पीड़ा हो तो सारे अंग को क्लेश होजाता है। जैसे कि:—

गान्धारी धृतराष्ट्र की चिन्ता में रहती थी।
अन्धा पती को देखके नित दुःख सहती थी॥
आंखों पै पट्टी बांधे वह हर वक्त रहती थी।
और तख़लिये में अपने पती से वह कहती थी॥
अर्धांगी हूँ शरीक तुम्हारी रहूंगी मैं।
हालत है जैसी आप की वैसी रखूंगी मैं॥

यह अपने पतिव्रत और धार्मिकता में प्रसिद्ध थीं । इन की बावत प्रसिद्ध है कि दुर्योधन बहुधा इन से कहता था कि हे माता ! तू बड़ी पतिव्रता धर्मशीला है, पतिवृता स्त्री का वचन निष्फल निरर्थक नहीं जाता । इस लिये एकबार अपने मुँह से कह दे 'तेरी जय हो' । यदि तूने कह दिया तो मैं अवश्यमेव विजय प्राप्त करूँगा, परन्तु वह सदा यही उत्तर देती थी कि:—"यतो धर्मस्ततो जयः" जहां धर्म होता है, वहीं जय होती है । क्योंकि इसने जाना था कि,—" धर्मोरक्षति रक्षितः" जब दुर्योधन ने पाण्डवों को पांच गांव तक नहीं दिये तो फिर कैसे जय हो सकती है । वह नहीं रही, पर आज तक बड़ाई जीवित है ।

## ❋ नं० ४ एक साहूकार की स्त्री ❋

एक दिन राजा भोज की सवारी निकली, उस साहूकार की स्त्री से एक अन्य स्त्री ने कहा कि चलो छत से राजा की सवारी देखें, उस ने उत्तर दिया कि पतिवृता स्त्री दूसरे पुरुष को नहीं देखतीं, तब उस ने कहा कि राजा को पिता के तुल्य बताया है क्या पिता को देखना वर्जित है ? तब उसने स्वीकार कर लिया और छतपर चढ़ी, वह इतनी सुन्दर थी कि राजा की दृष्टि जब उस पर पड़ी तो वह विकल हो गया और दूर तक टकटकी लगाये उसी की ओर देखता गया, रात भर चैन न आया । प्रातः होतेही राजा साहूकार के घर पर आया और कहा कि अपनी स्त्री से भोजन बनवाकर मुझे खिला, उसने शीघ्रही भोजन तैयार करवाया । ज्यों ही थाली परसकर साहूकार और राजा के सामने रक्खी तो राजा की हालत देखकर कुछ और ही होगई हाथ थाली में डालता तो औरही जगह पड़ता, यह दशा देख कर साहूकारनी भाप गई और जाकर एक आम उठा लाई और निचोड़ने लगी और कहने लगी कि:—

रे रे रसाल फलमुञ्चमि किं रसन्नो ।
नाहम् परेण पुरुषेण रतिं कदाचित् ॥

नास्मत्पतिस्तु परदार रतः कदाचित् ।
जानाति भोज नृपतिः परदार कन्या ॥

हे आम, मैंने अपनी आयु में पर पुरुष और मेरे पति ने पराई स्त्री की कभी इच्छा नहीं की, और राजा भोज भी पराई स्त्री को अपनी कन्या के समान जानता है फिर क्या कारण है जो तू अपने रसको नहीं त्यागता । साहूकार की स्त्री के इस प्रकार के वाक्यों को सुनते ही राजा भोज की आंखें खुलगईं और शीघ्र उठ कर उस स्त्री के चरणों में दूरसे प्रणाम करके कहा कि इस समय मैं ही पाप की ओर जारहा था धन्य है जो तूने मुझे बचा लिया ।

पाद २

## ❀ दो कन्या लड़ैती वा भक्तिन का वर्णन ❀

एक साहूकार की दो कन्या थीं, बड़ी लड़की पढ़ी हुई धर्मात्मा थी । उस की रुचि धर्म की ओर अधिक आकर्षित रहती थी, उस ने विद्या ग्रहण कर तथा पण्डितों और पंडिता स्त्रियों के सत्संग से जाना था कि मनुष्य को सुख धर्म से मिलता है, अधर्मी को सुख कदापि नहीं मिल सकता है । गोकि धर्म का मार्ग पैनी छुरी के सदृश दुस्तर वरन् अत्यन्त कठिन है । इस पर चलते समय मनुष्य को बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है । मूर्खों और आक्षेप करने वालों के कठोर वाक्य हृदय को विदीर्ण करनेवाले होते हैं । उस पर लोग हास्य उड़ाते हैं, धैर्य धारण किये रहने पर फिर वही उसके प्रशंसक हो जाते हैं । परमात्मा धर्मात्माओं की सदा सहायता करता है, इस कारण जिनको परमात्मा पर विश्वास है और धर्म का ध्यान है उनका यह कथन है कि "बाल न बाका हो सके, जो प्रभु सीधा होय" । सारा संसार एक ओर परमात्मा की दया एक ओर । इसी विचार को दृढ़ निश्चय किये वह बड़ी कन्या सदा चार बजे प्रातःकाल सन्ध्या हवन करती । किसी से हंसी न करती, न कभी झूंठ बोलती, समय व्यर्थ कभी न खोती, जो

कुछ सामने भोजन खाने को आजाता उसे परमात्मा का धन्यवाद देकर हर्ष पूर्वक खालेती । कहीं धर्मचर्चा होती, अवश्यमेव सुनने को जाती, जहां कहीं नाच कूद अनुचित गान होता उस से वह घृणा करती, न अधिक पिता से लल्लो पत्तो करती, न अधिक माता से प्यार-प्रेम रखती, ज्यों ज्यों युवा होती जाती, अधिकांश धर्म और परमात्मा की ओर झुकती जाती । बाप से जब कभी बात चीत होती और वह पूजा पाठ को मना करता, धमकाता, डराता तो कहती कि पिता जी ! सर्व सुखों की ताली परमात्मा के हाथ है, मैं सदा अपने भाग्य का खाती हूँ । यह वार्त्ता उस के अज्ञानी पिता को अप्रिय जान पड़ती और कहता कि मुझे तेरा भाग्य देखना है ।

उस की दूसरी छोटी लड़की बड़ी चंचला और झूठी मक्कारन थी । वह इधर उधर की झूंठी गप्प शप्प मिलाती रहती थी, बाप से प्यार में हर समय लिपटती चिपटती, गोद में से रुपया पैसा निकाल लेती, माता पिता की हां में हां मिलाती रहती थी, कभी पूजा पाठ के निकट न जाती थी, बाप उसे अधिक प्यार करता था, उस का नाम भी लड़ैती बदल कर रख छोड़ा था, वह कहता था, कि मैं अपनी लड़ैती का विवाह किसी ऐसे बड़े धनाढ्य के यहां करूंगा जिस के द्वार पर हाथी झूम रहे हों और इतना गहना पाता आवे जो नीचे से ऊपर तक पीली हो जावे और बड़ी लड़की का नाम भगतिन रख छोड़ा था । कहता था कि इस भगतिन का विवाह ऐसे दरिद्री के साथ करूंगा जिस के यहां रोटी तक को तरसे, इसे भी मालूम हो कि कैसे अपने भाग्य से खाते हैं । यहां तक कि नित्य प्रति का कहना उस अधर्मी पिता के मन में इतना घर कर गया कि उस ने वैसा ही किया । प्रथम उस ने अपनी कनिष्ठा कन्या का विवाह एक बड़े साहूकार के नवयुवा स्वरूपवान् बालक से किया, बड़ी बढ़िया बरात आई, गहना भी अधिक आया, इस ने भी खूब दान दहेज दिया, हजारों रुपया बँटा किया, सारे नगर में धूम मच गई और लड़ैती की विदा बड़ी धूम धाम से हो गई । उस के पश्चात् दूसरी

ज्येष्ठा कन्या का विवाह एक रुग्ण बालक से जिसे जलन्धर का रोग था, जिस के कारण पेट निकला हुआ बुरी भांति का प्रतीत होता था, गृह में रुपया पैसा धन दौलत का भी अभाव था, महा कंगाल और रोगी के साथ विवाह करके विदा कर किया, न किंचित् दान और दहेज दिया । नगर निवासियों और सभ्य पुरुषों को यह बात बहुत अनुचित जान पड़ी और कहा कि पिता को अपनी स्ववीर्य कन्याओं से ऐसा वर्त्ताव करना अनुचित था, परन्तु दोनों विदा होकर अपने अपने गृहों में पहुँचीं । संयोग से कनिष्ठा कन्या का पति शराबी और कुकर्मी था । धनाढ्य साहूकार का बालक था ।

विवाह के थोड़े ही दिन पश्चात् पिता का देहांत हो गया और वह सम्पूर्ण उसकी गद्दी का स्वामी बन गया, फिर क्या कहनाः—

जो जाको पड़ो स्वभाव जाय ना जीसे ।
नीम न मीठी होय सींचे गुड़ घी से ॥

अपने पूर्व स्वभाओं में जो कुसंस्कारों से उस में प्रभावित हो चुके थे, स्वतन्त्रता के साथ धन व्यय करना प्रारम्भ कर दिया । सारा व्यवहार लेना देना बन्द हो गया । अब आय न होने और व्यय बराबर होते रहने से थोड़े ही दिनों में दिवाला निकल गया । जुआ, जिस ने पाण्डु और नल को राजपाट छुड़ा कर वन वन फिराया, मद्य व्यभिचार जिस ने रावण जैसे अभिमानी को नीचा दिखाया । भला इस का क्या पता लगा रख सक्ती थी । थोड़े ही काल में कौड़ी २ को मुहताज हो गया । उस की लड़ैती चक्की पीसने चर्खा कातकर आयु व्यतीत करने लगी सब गहना पाता बिक गया । छल्ला तक न रहा । द्वितीय ज्येष्ठा कन्या जो परमेश्वर और धर्म पर विश्वास रखती थी । पतिव्रत जैसा उसने पढ़ा था और सुना था किः—

एकहि धर्म एक व्रत नेमा ।
काय वचन मन पतिपद प्रेमा ॥

वह अपने पति की जो कोई जैसी औषधि वताता, करती रहती थी, कभी पैर सहलाती, कभी बीजना डुलाती, जो आज्ञा करता, तुर्त उस का पालन करती, रातों जागती, पति को दुःख न होने देती, जो कुछ माल टाल गहना पाता उस के पास था और जो कुछ उस के परिश्रम से वन सक्ता उस की औषधि और खानपान में व्यय करती। एक दिन उस का पति भोजन करके उठा, आंगन में वकरी का खूंटा गड़ा हुआ था, उस की ठेस लगने से गिरपड़ा, वह खूंटा पेट में लग जाने से पेट का विकारी पानी वह गया। यह रोटी छोड़कर दौड़ी और उठा कर पति को खाट पर विठाया और पेट का घाव देखकर अति क्लेशित हुई और दौड़ी कि इस खूंटा को उखाड़ डालूं। हाथ से नहीं उखड़ा इस कारण फावड़ा लेकर उसे उखाड़ना चाहा, ज्योंही पहिला फावड़ा मारा कि वहां पर "खन" का शब्द सुनाई दिया। इस ने और खोदा तो वहां पर दो तोड़े मुहरों के निकले जिन को उठा कर उस ने भीतर रक्खा। उधर खूंटी के लगने से जलन्धर का रोग भी उस के साथ वह गया। पति ने कहा कि गो मेरे यह खूंटी लगी है परन्तु मेरा चित्त इस समय अति प्रसन्न है। न जाने परमात्मा का क्या अनुग्रह है। उधर मुहरों के तोड़े मिले, जिस के हर्ष में और भी रोग काफूर होगया। फिर क्या था, उस का पति भी निरोग हो गया और उस से सभी कुछ सामान धनाढ्यों के सदृश हो गये आर वह वहुत ही न्यून समय में वड़ा साहूकार प्रसिद्ध हो गया। कुछ दिन पश्चात् उसके छोटे भाई का विवाह ठहरा। उस के यहां भी निमन्त्रण आया। वही लड़की वड़े सामान से सुखपाल में और उसका पति वहुतही आरोग्य दशा में हाथी पर चढ़ा हुआ पहुँचा और कनिष्ठा कन्या अपने पति सहित पैदल पहुँची। उस समय वह दोनों की उल्टी दशा देखकर वहुतही लज्जित हुआ और नगर निवासियों पर प्रकट हो गया कि यदि धर्म से सुख न प्राप्त होता और सारे सुखों की कुंजी परमात्मा के हाथ न होती तो क्यों इतनी धर्म की कीर्त्ति आज गाई जाती। इस से वहिनो! शिक्षा ग्रहण करो और सदा परमात्मा और पाप से डरती हुई धर्म करती हुई अपना जीवन व्यतीत करो। सव सुखों का कोष परमात्माही को जानो।

## पाद ३

## ❀ दो स्त्रियाँ-प्रियंवदा व दुःखदा का वर्णन ❀

एक नगर में दो पंडित रहते थे, एक दरिद्र, दूसरे सामान्य भोजन वस्त्र से सुखी थे। परन्तु इन दोनों में जो अधिक कंगाल थे, उनकी स्त्री बड़ी ही पतिव्रता सुशीला मधुरभाषिणी थी। इस लिये जो कुछ रूखा सूखा इन्हें मिल जाता था वह खाकर अति आरोग्य मोटे ताजे थे। दूसरे पंडित जिन को साधारण खान पान का दुःख न था परन्तु स्त्री अतिदुर्भाषिणी कटुवादिनी कठोर वाणी बोलनेवाली थी कि जहां यह भोजनार्थ बैठे कि वह अपना दुखड़ा ले बैठी। संसार भर की निकम्मी निठल्ली बातें सम्मुख धर दिया करै। कहीं वस्त्र कहीं भूषण का झमेला लगादे। इन की नाक में दमकर देती थी। इन्हें भोजन करना दुस्तर हो जाता। कभी यह क्रोधित भी हो जाते परन्तु वह एक न मानती। इन से कुछ खाया जावे कुछ न खाया जावे। प्रति दिन दुर्वल होते जाते थे। एक दिन दोनों ने विचार करके परदेश जाने की तैयारी करदी और जाकर एक धनाढ्य के यहां चाकरी की। दोनों का सम वेतन ठहरा। एकही स्थान पर एकही सा भोजनाच्छादन सारा सामान एक जैसा मिला, कई मास के पश्चात् उन के स्वामी ने देखा तो विदित हुआ कि जो पंडित शरीर से पुष्ट मोटे ताजे थे वह तो अत्यन्त निर्वल हो गये और जो दुर्वल थे वह बलिष्ट और नीरोग हो गये। तब उन दोनों पंडितों से बुलाकर कारण पूछा कि बतलाइये, इस का क्या सबब है कि दोनों का एक वेतन सारे सलूक दोनों के साथ एक से बर्ते जाते हैं। काम भी एक सा है परन्तु हालत दोनों की उलटी हो गई। तो जो पंडित प्रथम दुबले थे अब पुष्ट हो गये थे, प्रथम उन्हों ने बतलाया कि मैं आप से क्या निवेदन करूं। सच कहने में मुझे लज्जा आती है तब स्वामी ने कहा कि आप से अधिक कहना क्या है। आप स्वयं ही पढ़े लिखे हैं। सच कह दीजिये। सब जानते हैं कि:-

## सच्च बराबर तप नहीं, और झूठ बराबर पाप ।

यह साधारण बात नहीं है । जैसा कि साधारण पुरुष कह दिया करते हैं । अमल उस पर कुछ नहीं करते । सत्य को इतनी पदवी क्यों दी गई है । वास्तव में सत्यवादी सब पापों से छूट जाता है । एक कहानी है कि–

एक महापापी को कोई चेला नहीं बनाता था । एक महात्मा ने कहा कि यदि तू मुझे एक वस्तु अर्थात् झूठ देदे, तो मैं तुझे अपना चेला बना सकता हूं । जा इसे प्रथम खूब सोच विचार ले अन्त को उस ने विचार कर कि कोई बड़ी चीज नहीं मांगता । न किसी बात को मना करता है झूठ दे दिया और उस झूठ के छोड़ने से सारे पापों से बच गया । जिस समय किसी पाप जुआ, चोरी, जारी आदि करने को जाता, सोचता कि सच कहने से दण्ड मिलेगा और झूठ कहना नहीं, बस वहीं छोड़ देता । अन्त में वहही एक बड़ा सत्यवादी धर्मात्मा बन गया । और भी देखो–माता के झूठ बोलने से सोहराब अपने पिता रुस्तम के हाथ से मारागया । और बहुधा इस सत्य की बदौलत बालक और पुरुषों के चोर डाकुओं * से जान व माल बचे । इस लिये एक महात्मा का वचन है–

* नोट–एक सच्चा समाचार क़सबे तिलहरका ( जहां मेरी जन्मभूमि है ) यहां पर लिखता हूं । गुलाबराय भक्त क़ौम सुनार साकिन तिलहर मुहल्ले चौहट्टियान सत्यवादी प्रसिद्ध थे । उनकी सचाई की कीर्ति तिलहरही में नहीं वरन् आस पास दूर दूर तक फैलगई थी । एक दिन चार उन्हें रात्रि को गांव से आते हुये मिले और उनकी थैली छीनली । उस मे सोने चांदी के आभूषण और कुछ नक़दी थी । भक्तजी बहुत सीधे सादे सच्चे भले मनुष्य थ । इन्हों ने चोरो से कहा कि दूर से मेरी एक बात सुनलो । मै तुम्हें यह बताये देता हूँ–कि जिस समय यह आपस में बांटो तो देखलेना कि एक कपड़े में अलग एक सोने का टुकड़ा बँधा हुआ है उसे भी देखकर बांट लेना मैंने इस लिये बता दिया है कि–कहीं वह जल्दी में पृथ्वी पर न गिर पडे और किसी का न हो । तब चोरो ने पहिचान कर कहा कि मालूम हुआ कि आप गुलाबराय भक्त हैं, लो अपनी गठरी. क्योंकि आप का परिश्रम और सत्य कमाई का धन है । इसे लेकर हम पचा नहीं सकते । भक्त ने कहा कि तुम्हारी नीयत इस पर

शत धेनु हतो विप्रो शत विप्रः हत स्त्रिया ।
शत स्त्री हता कन्या शत कन्या हतो मृषा ॥

सौ गाय मारे का जो पाप है, वह एक ब्राह्मण के मारने से होता है। और जो सौ ब्राह्मणों के मारे की हत्या है वह एक स्त्री के बध से होती है और जो सौ स्त्रियों के मारने का पाप है वह एक कन्या के बध से होता है। जो सौ कन्याओं के बध का पाप है, वह एक झूठ से होता है। सच है, यदि इतना पाप न होता और साधारण बात होती तो ऐसी आज्ञा अधिक बल के साथ सत्यशास्त्रों में न होती कि-

नास्तिसत्यात् परोधर्मो नानृतात् पातकं परम् ।

इस कारण आप यथार्थ सत्य २ कह दीजिये। तब पंडित ने उत्तर दिया कि:--

मेरी स्त्री अत्यन्त मूर्ख और बड़ी फूहर है । जब भोजन करने को मैं जाता, वह ऐसी रोषभरी कथा लेबैठती थी कि जिसके कारण मुझे भोजन करना दुस्तर होजाता था। उस के कठोर वचनों से जी यह चाहता था कि ऐसे ही भोजन छोड़ दिया जावे, कुछ खाता कुछ न खाता, योंही क्रोधित और शोकातुर होकर उठ आता । इस कारण

आगई इस तुमही लेजाओ । अब मै अपने घर नहीं लेजाऊँगा । मुख्य अभिप्राय इस कथन का यह है कि वह चोर हारकर भक्त के पहुँचने से प्रथम ही दूसरे मार्ग से उनकी स्त्री को वह थैली देआये और कहा कि यह भक्तने दी है। इतने में भक्त भी मकान पर आपहुंचे । उन चोरों का भोजन बनावाकर खिलाया और साधारण समझाकर कहा कि मैं तुम्हारा नाम ठांव कुछ नहीं पूंछता, अब तुम चले जाओ, कोई आकर यह न पूछने लगे कि ये कौन हैं तौ मेरे सत्य कहने से तुम्हें हानि पहुंचे । वह नहीं रहे। बड़ाई जीवित है।

सदा निर्बल और दुर्बल रहता था। अब विना चिंता निःसन्देह खाता हूं इस लिये हे स्वामिन्! मैं दिन दूना रात चौगुना होता चला जाता हूं और आप को धन्यवाद देता हूं। दूसरे पण्डित से पूछा, उसने उत्तर दिया। कि हे राजन्! मेरी दशा इन पंडितजी के नितान्त प्रतिकूल है।

मैं आप से क्या निवेदन करूं—मेरी स्त्री ऐसी कोमल वाणी वोलती और मधुर भाषण करती थी, उसके हाथ व उसकी अँगुलियां ऐसी ललित थीं जिनको देख यह विदित होता था कि न जाने इसने कितने दान इन हाथों से किये हैं वड़े प्यार से भोजन कराती थी, सो भोजन पाते समय उसकी मीठी २ वातों और रुचि से प्रीतिपूर्वक भोजन कराने की जव मुझे खाते समय याद आजाती है तव मुझ से भोजन नहीं किया जाता। यही कारण मेरे दुर्वल होजाने का है।

प्रतिफल यह निकला कि अनेक प्रकार के ऐश्वर्य प्राप्त होने पर दुर्बुद्धि स्त्री के संग से दुःखही मिलता और जो भोजन किया जाता है वह अंग देह में नहीं लगता।

---

# काण्ड २।

---

## ❀ १ मन्दोदरी ❀

लंकाका राजा रावण जैसा अत्याचारी निर्दयी और मांसाहारी था वह सव पर सूर्य की नाईं प्रकाशित है। उसके विषय में अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं है। देखो संसार का नियम है कि जो जिस में गुण होता है उसकी प्रशंसा और अवगुण की निन्दा हुआ करती है। रावण भी विद्वान् और वेदों का पण्डित था इस कारण उसको कोई मूर्ख अथवा कुपढ़। नहीं कहसक्ता, परन्तु वह विद्वान् और वेदों का ज्ञाता होने पर भी उनके अनुसार कार्य नहीं करता था। किन्तु चार वेद छः शास्त्र जानने

पर भी पराई स्त्रियों को चुराता, मांस खाता, मदिरा पीता था । इस लिये उसको राक्षस और गधा जैसा कि गधे पर पुस्तकें लदी होती हैं तो भी वह नहीं जानता कि उसपर पुस्तकों का भार है अथवा काष्ठ मृत्तिका वा शिला का, इसी अनुसार उसकी दशा थी । यही कारण है कि आज उस के शिरपर एक गधे का शिर लगाया जाता है ।

यह दशा उसकी स्त्री मन्दोदरी को भले प्रकार विदित थी । वह बहुधा उसको समझाती रहती थी कि पापाचरण से सारी कला भंग हो जाती हैं, वह न मानता था तो उसने उसको उन घोर पापों से बचाने का यह उपाय सोचा था कि ऐसा खेल रचा जावे कि जिस में यह प्रवृत्त रहकर उतने समय तो पापकर्म करने से बचै और संसारी जन इस के हाथ से जो अनुचित सताये जाते हैं मुक्ति पावें । इस लिये उसने इसके लिये शतरंज बनाया था जितने समय उस खेल में लगा रहता था, प्रजा उसके हाथों से बची रहती थी जैसा किः-

रावण जो पहले वक्त में लंका का शाह था ।
उस के मिज़ाज में था बड़ा जोर और जफा ॥
रानी थी उसकी अकलो ख़िरद में जिवस जुका ।
शतरंज उसने वास्ते उसके बनाया था ॥
इस खेल में पती के वह दिल को लगाती थी ।
खूंरेज़ियों से अपने पती को बचाती थी ॥

## ❀ (२) यशवन्तसिंह राठौर चित्तौड़ की रानी ❀

यशवन्तसिंह रठौर वालीये चित्तौड़ जब कि औरंगजेब की लड़ाई से भाग आया था तब उसकी रानी ने द्वार बन्द कर दिया था कि मैं ऐसे कायर राजा की रानी नहीं रहना चाहती । क्षत्रिय का काम रण से भाग आने वैरी को पीठ दिखाने का नहीं है । जिस काम के वास्ते क्षत्रिय बीड़ा चबाये, वह काम पूरा करदे वा प्राण देदे । यदि मैं ऐसे

नपुंसक राजा की रानी बनी तो उससे सन्तान डरपोक उत्पन्न होकर कुल कलंकित करेगी। पस ऐसे अयोग्य और डरपोक सन्तान से असन्तान रहना श्रेष्ठ है।

## ❀ (३) तारामती ❀

यह राजा हरिश्चन्द्र की स्त्री बड़ी ही धर्मात्मा प्रसिद्ध थी। कौन नहीं जानता कि पतिव्रत धर्म को निबाहते हुवे उन्हों ने कैसी कठिनाइयां सहीं। अपने सच्चे पति के वचन निबाहने के लिये उसका सत्य व्रत पूर्ण करने के अर्थ काशी में जाकर पति के साथ आप बिक गईं, जिसका प्रभाव बच्चे पर क्यों न पड़ता। मैं बतला चुका हूं कि बच्चे का दिल पिघली हुई धातु के तुल्य है। माता पिता के कर्त्तव्य का प्रभाव सन्तान पर पड़कर मुहर छाप लगकर अमिट हो जाता है। यही कारण है कि इसका सातवर्ष का बालक रोहिताश्व काशी के हाट में खड़ा हुआ अपनी तोतली जिह्वा से चिल्लाता था कि धर्म के लिये मुझे अपने सत्यवादी पिता का ऋण चुकाना है। क्या एक राजपुत्र का इस प्रकार बिकना माता पिता का प्रभाव नहीं कहा जाता। जब कि राजा हरिश्चन्द्र ने अपनी पत्नी पर भी बल न दिया हो कि तुझे बिकना होगा वा मैं तुझे बेचूंगा वरन् उससे कह दिया था कि जहां जी चाहे वहां जाओ, तो पुत्र का बेचना कैसा? जब प्रथम माता पिता बिक गये और ऋण न चुका तो वह भी बिक गया और पितृऋण चुकाया। काशी जाते समय मार्ग में राजा हरिश्चन्द्र से कहा, पानी पीलो, वह बहाना करता है, रानी से कहा जाता है कि राजा ने जल पान कर लिया, तुम भी पीलो, वह कहती है नहीं राजा ने यदि धर्म छोड़ दिया तो मैं अर्धांगिनी हूँ आधे धर्म की रक्षा हो, यहही सही। बालक से कहा जाता है कि माता पिता ने पानी पी लिया तुम भी पीलो। वह उत्तर देता है—यदि माता पिता ने धर्म छोड़ दिया तो मैं नहीं छोड़ सकता। बिना ऋण चुकाये अब पानी कहां। जैसा कि:—

इस धर्म ही पै राजा हरिश्चन्द्र थे डटे ।
दानी थे इन्तहा के सखावत में मर मिटे ॥
दिन उनके गो तमाम ग़मो रंज में कटे ।
पर कर लिया जो अहद न उससे ज़रा हटे ॥
कितने ही उनके धर्म का अहवाल लिख गये ।
रानी बिकी कुँवर भी बिका आप बिक गये ॥
याचक को जब कि राज हरिश्चन्द्र ने दिया ।
और साठ हज़ार अशर्फ़ियों का वादा भी किया ॥
रानी से अपनी आपने उस वक्त यह कहा ।
तुम जाओ जिस जगह कि तुम्हारा हो आसरा ॥
याचक का यह सवाल न जब तक हो मुझ से हल ।
तब तक करूंगा मैं नहीं हरगिज भी अन्नोजल ॥
रानी ने यह कहा मैं कहीं भी न जाऊँगी ।
अर्धांगी हूँ आप की क़र्ज़ा बटाऊँगी ॥
इस जिस्मोजाँ को आप के अर्पण लगाऊँगी ।
पतिब्रत धर्म अपना मैं सारा निभाऊँगी ॥
काशी में चल के आप से पहले बिकूंगी मैं ।
इस जिस्मोजाँ से आप की सेवा करूंगी मैं ॥

## ❋ ४ दशवें गुरु गोविंदसिंहजी की स्त्री ❋

विदित हो कि गोविंदसिंहजी दसवें सिक्खों के गुरु की माता माई गूजरी अपने दो पोतों ( फतहबहादुर सिंह और जोरावरसिंह ) सहित भागकर रसोइयां के यहां ठहरी थीं । ब्राह्मण रोटी बनानेवाले ने किसी प्रकार से आंख बचाकर ज़ेवर चुरा लिया, मार्ग में जहां आकर छिपे थे

गोविन्दसिंह की माताने ब्राह्मण से कहा कि थैली में जो माल था वह नहीं मालूम होता यहां तेरे सिवा और कोई अन्य नहीं था, यह सुनकर वह अत्यन्त क्रोधित होकर कहने लगा कि तू मुझे चोरी लगाती है । मैं अभी जाकर बादशाह से खबर किये देता हूं । अन्त को जो नोन पानी उसने वर्षों खाया था, उसकी परवाह न करके जाकर खबर ही करदी । माता तो निकल गई, परन्तु दोनों बच्चे पकड़े गए । औरंगजेब ने यह समझकर कि ये एक बड़े बहादुर के लड़के हैं, यदि मुसल्मान होजावें तो इन्हें बड़ी सेनाओं का सेनापति बना दिया जावे, इस लिये उन बालकों से कहा कि तुम मुसल्मान हो जाओ । तुम्हें बड़ा पद मिलेगा, फौजों के अफ़सर बना दिये जावोगे परन्तु स्वीकार न किया । फिर कहा गया कि यदि मुसल्मान न होगे तो जीते हुए दीवार में चुना दिये जाओगे । बच्चों ने इसे स्वीकार किया । क्योंकि इन्हों ने माता के गर्भ और गोद से ही धार्मिक शिक्षा पाई थी माता महाघोर विकराल युद्ध में पति के साथ रहती थी वीरता का चित्र बच्चों के हृदयों में खींच चुकी थी, दीवार में चुना जाना स्वीकार किया परन्तु सब प्रकार समझाने और अनेक प्रकार के लालच देने पर, जिस के मोह में पड़कर मनुष्य क्या नहीं कर गुजरता, मुसल्मान होने पर राजी नहीं हुये क्योंकि वह वीर बच्चे अपने दो बड़े भाइयों का धर्म पर बलिदान होजाना प्रथम ही देख चुके थे। अन्त में दीवार में चुने जाने की आज्ञा होगई । दीवार में बड़ा भाई पहले चुना जारहा था, छोटा खड़ा हुआ देखता था, जब कमर तक छाती तक चुना जा चुका, तब फिर पूछा कि अब भी मुसल्मान होजाओ, वह उत्तर देता है--कदापि नहीं:—

आत्मा मरती नहीं जिस्म को चाहे मारो ।
आगकी लोहे की पानी की यहां मार नहीं ॥

जब गर्दन तक चुना जा चुका, कनिष्ठ भ्राता रोया, यह समझा कि कदाचित् छोटा भाई दीवार में न चुना जावे, घबड़ा गया है, इस लिये रोता है । कहा कि तू क्यों रोता है ? वह उत्तर देता है कि भ्राता ! यह

न समझो कि मैं चुने जाने से डर कर रोता हूँ, मरने से घबराता हूँ, वरन् इस हेतु से रुदित और शोकातुर हूँ कि धर्म जैसी अमूल्य वस्तु को पहले तू लिये जाता है, पहले मुझे चुनना चाहिये था, क्या कभी ऐसा हो सकता है ? कि धर्म जो मरने पर भी साथ जावेगा, उसे संसारी सुख के पलटे बेच सकता हूँ। क्या इतना भी नहीं जानता कि—धर्म ईश्वर की अमानत है।

धर्म ईश्वर की अमानत है वह बेचूँ क्यों कर।
धर्म के बदले में दुनिया का ख़रीदार नहीं॥

जब दोनों दीवार में चुना दिये गये—माता पिता के पास ख़बर पहुँची। माता अलग थी, पिता अलग था। मां ने मिठाई बांटी कि आज मैं कोखवती हुई क्योंकि वह समझती थी कि यदि बच्चा उत्पन्न हो तो धर्मात्मा हो नहीं तो उसका बांझ रहना भला है। चाहे एकही योग्य पुत्र हो, वह अयोग्य सैकड़ों से श्रेष्ठ है। एक चन्द्र सम्पूर्ण अन्धकार को भगा देता है, सहस्रों तारों से कुछ नहीं होसक्ता। जब माता का ऐसा उत्तम विचार हो, बच्चा क्यों न ऐसा वीर हो।

पिता ने यह ख़बर सुनकर नक्क़ारे बजवाये और कहा कि आज गोविन्दसिंह सपूता हुआ। जब माता मिठाई बटवावे पिता नक्क़ारे बजवावे उसके बच्चे क्यों न धर्म पर प्राण निछावर करनेवाले हों।

गोविन्दसिंह जी के जो दो नौनिहाल थे।
खुशखू थे खूबरू थे वह ज़ेबा जमाल थे॥
साबितक़दम थे धर्म पै साहिब कमाल थे।
दिल उनके थे जवान वह गो खुर्दसाल थे॥
दीवार में चुने गये परवाह भी न की।
जां देदी अपनी धर्म पै और आह भी न की॥

## ❀ (५) मन्दालसा ❀

इस ने अपने पुत्र को ब्रह्मज्ञान की शिक्षा दी थी। इन का वर्णन प्रथम पण्डिता स्त्रियों में आचुका है।

## ❀ (६) गोपीचन्द्र रावकी माता ❀

राव गोपीचन्द्र जो राज्य छोड़ कर योगी बने उस का कारण उन की माताही थीं। माता ने संसार की असारता और धर्म की स्थिरता और सत्यता सिखाई थी। जिन्हों ने वैराग्य की शिक्षाओं से उसे वैरागी बना दिया था। जैसा कि:—

मा गोपीचन्द राव की मुंह उन का देखकर।
बोली वह अपने बेटे से हो करके चश्मतर॥
दुनिया यह बेसबात है दो दिन का करोंफर।
दे छोड़ राज्य योग ले हो जावे तू अमर॥
कुछ भी न मा के हुक्म में चूंचोचरा किया।
सब राजपाट छोड़ दिया योग ले लिया॥

## ❀ (७) सुभद्रा ❀

इन के विषय में प्रसिद्ध है कि इन्हों ने अपने पुत्र अभिमन्यु को गर्भही से शूरवीर बनाने का प्रयत्न किया और कई प्रकार की लड़ाइयों के ज्ञान का चित्र गर्भ में ही पुस्तकों को पढ़कर और अपने भाई कृष्ण से सुनकर और ध्यान रखकर उसके हृदय में खींच दिया था। प्रसिद्ध है कि इसने छः प्रकार के चक्रव्यूह की लड़ाई का हाल गर्भ में जाना था अर्थात् उसका अंकुर उसी समय से उसके हृदय में स्थापित होगया था।

## ❀ (८) गंगा ❀

भीष्मपितामह की माता का हाल पहले ही वर्णन होचुका है कि उस

के वैदिक रीति से गर्भाधान करने के कारण भीष्म इतने धर्मात्मा उत्पन्न हुए ।

# काण्ड ३ ।

## जिस में वीर नारियों के वृत्तांत हैं ।

## ❋ नं १ राजा दाहर वालियेसिन्ध की रानी ❋

राजा दाहर वालियेसिन्ध पर जब तुर्कों ने चढ़ाई की और राजा दाहर लड़ाई में मारा गया, राजा के मारे जाने के पश्चात् तीन दिन तक उसकी रानी लड़ती रही, अन्त में रसद की कमी से फौज कटगई, तब रानियां अपने परिवार सहित चिता में जलने को इस निमित्त से तत्पर हुईं कि यदि हम जीवित रहीं और हमारे शरीर तुर्कों के हाथ लगे तो लोक परलोक दोनों भ्रष्ट होजावेंगे। हमारे पतिव्रत धर्म नष्ट हो जावेंगे। पुत्रों को गुरुकुल से बुलाया, इस लिये कि ये धर्म्म छोड़कर मुसलमान न होजावें वा तलवार के बल से ज़बरदस्ती न बनाये जावें। आठ दश वर्ष की आयु के बालक गुरुकुल में शस्त्र विद्या सीख रहे थे। रानी ने बच्चों से कहा कि पिता तुम्हारे रणभूमि में काम आये तुम अपने प्राण बचाकर ऐसी विपत् काल में भाग जाओ। बालकों ने उत्तर दिया—क्या कहीं शास्त्र में लिखा है कि क्षत्री के बालक भाग कर जान बचावें, तब उन से कहा गया, अच्छा आओ हमारे साथ चिता में जल जाओ, ताकि तुम्हारा धर्म बचजावे। उत्तर दिया कि आत्महत्या महा पाप है, ऐसा नहीं होसक्ता, फिर कहा, तुम क्या चाहते हो, क्या अपना धर्म छोड़ कर मुसलमान बनोगे ? यह स्मरण रहे कि तुम पकड़ कर बलातकार से मुसलमान किये जावोगे। उत्तर दिया कि नहीं,

हम वही करेंगे जो क्षत्रियों के धर्म हैं । रण में जाकर शत्रुओं को मारकर मरेंगे क्या तुम जानती नहीं किः—

इतै पुकारैं शत्रु उतै धौंसा घहराहीं ।
धिक् क्षत्री के पुत्र रहैं जो घर के माहीं ॥

तब रानी ने कहा, बहुत अच्छा परन्तु कहीं भागकर पीठ न दिखाना शत्रु के सम्मुख हथियार न रख देना, कि जिससे कुल कलंकित हो । सब बालकों ने उत्तर दिया किः—

यद्यपि हिमाचल संग होहिं भूतल पर आड़े ।
यद्यपि सूर शशि बसैं जो नभपर ठाड़े ॥
यदपि सिन्धु एक बिन्दु होय सूखै क्षण माहीं ।
तदपि क्षत्री के पुत्र तजें रण में असि नाहीं ॥

अर्थ—चाहे हिमालय की चोटियां टेढ़ी होकर धरती पर आजावें, चाहे सूर्य चन्द्र धरती में धँस जावें, चाहे समुद्र एक बिन्दु होकर सूख जावे, यह सारी असम्भव बातें चाहे सम्भव होजावें, परन्तु क्षत्री के बालक रण में हथियार न छोड़ेंगे । रण से मुख न मोड़ेंगे । फिर वहीं तलवार के क़बज़े पर हाथ रखकर अपने भुजदण्ड ठोक कर इस तरह प्रण करते हैं । अन्त में समर भूमि में जाकर सैकड़ों को मार कर आप भी मारे जाते हैं ।

काढ़े धर असि हाथ करे भुज ठोक यही प्रण ।
कै नाशैं रण माहिं शत्रु कै नाशहिं जीवन ॥
जौन मन्त्र हम लियो जौन हम पायो दीक्षा ।
आज युद्ध कर गवन तौन हम करें परीक्षा ॥

जो पुर रचा हेतु सतु जीवन का टूटै ।
तो कुछ चिन्ता नाहिं धर्मको पंथ न छूटै ॥
विदत सकल संसार वीर माता के जाये ।
रखैं देश को मान आपने प्राण गँवाये ॥

रानी अन्त को पुत्रों को वीरता के साथ वलिदान कर धर्म रक्षार्थ और पतिव्रत धर्म्म सफलतार्थ अपने कुटुम्ब और परिवार सहित जल कर राख का ढेर होगई ।

## ❋ नं० २ कैकेयी ❋

यह भरत की माता राजा दशरथ की पत्नी थीं । पति के साथ रथ में सवार होकर लड़ाई में गई थीं । संग्राम समय में रथ का घोड़ा मरगया, उस समय राजा दशरथ पर कठिन विपत्ति का समय था, निकट था कि मारा जावे, परन्तु उसकी वीर रानी कैकेयी ने रथ से कूदकर और स्वयं घोड़े के स्थान दूसरे घोड़े के साथ मचकर रथको चलाया था और अपने पति से कहा कि तू वरावर युद्ध किये जा, जिस से अन्तको दशरथ की विजय हुई और रानी ने ऐसे तंग हाल में राजाकी जान वचाई । उसी समय पर राजा ने वर देने की प्रतिज्ञा की थी, जो कैकेयी ने मन्थरा चेरी के वहकाने ❋ से रामचन्द्र जी की राजगद्दी के समय मांगे थे । जैसा कि निम्नलिखित पद से प्रकट होता है:—

❋ नोट-प्यारी वहिनो ! स्मरण रक्खो कि नीच का संग सदा हानिकारक होता है । देखो कैकेयी जैसी योग्य बुद्धिमती रानी ने मन्थरा के वहकाने से भरत के लिये राज्य मांगा और रामचन्द्र को चौदह वर्ष को वन भिजवाया जिस का फल यह हुआ कि अपना सुहाग नष्ट किया, संसार में कलंक का टीका अपने माथे लिया । जिस भरत के लिये यह अपयश लिया, जब वह कश्मीर से आकर पूछता है कि पिता जी व श्री रामचन्द्र जी कहां हैं ? बहुत कुछ वातों में टाला जाता है । अन्त में बताया कि रामचन्द्र जी वन गये, राजगद्दी तुम्हारे लिये मैंने मांगली । यह सुनकर भरत का विलाप हृदय विदीर्ण करता है, आंसुओं की धारा नेत्रों से जारी है. कहता है कि कठिन वाणों से

दशरथ अवध के राव थे मसरूफ जंग में ।
मैदान कार जार में रानी थी संग में ॥
करती मदद पती की थी वह वक्त तंग में ।
एक घोड़ा जब कि मारा गया रथका जंग में ॥
घोड़े के साथ मचके रथ उसने चलाया था ।
अपने पती को युद्ध में उसने बचाया था ॥

घायल होकर मरना, सर्व प्रकार की व्याधियां सहना मुझे स्वीकार है परन्तु रामचन्द्र जी का वियोग मुझ से सहा और सुना नहीं जाता। जब विदित होता है कि माता ने मेरे अर्थ राम को वनवास दिया है, माता से कहता है कि माता ! तेरी जिह्वा ऐसे कटु शब्द कहते समय क्यों न गिर पड़ी । जब मैं गर्भ में आया था हाय ! वह गर्भ ही क्यो न पात हो गया, और मैं अभागा. जिस के कारण बड़े भ्राता को यह दुःख मिला, जन्मते ही क्यों न मर गया। अरे ! मौत ! तू अभी आजा । वह कहती है कि पुत्र ! मैंने तेरे लिये राज्य मांग दिया है । तू राज्य कर। और भी राजमन्त्री आदि सम्बन्धी समझाते हैं। भरत कहता है कि मेरा अधिकार नहीं है जब मुझे ईश्वर ने राज्य नहीं दिया तौ तेरे दिलाने से कैसे राज्य पा सकता हूं ! वह कहती है कि परमात्मा ने ही तो तुझे राज्य दिलाने के लिये मेरे हृदय में यह बात पैदा की, तुझे कैसे राज्य नहीं दिया ? वह कहता है कि यदि इश्वर मुझे राज्य देता तो मुझे ज्येष्ठ पुत्र क्यों न उत्पन्न करता । तूने मेरे अर्थ राज्य नहीं मांगा, किन्तु न जाने किस जन्म का बदला लिया। जैसे रामचन्द्र जी जटाजूट रखाये तपस्वी के भेष में वन को गये, भरत भी इसी समय से प्रण करता है कि मैं भी अपनी वही दशा रक्खूंगा। वह पृथिवी पर सोते होंगे । मैं दो तीन हाथ नीचा पृथिवी से गढ़ा खोद सोऊंगा। माता ! तूने श्रीरामचन्द्र को वनवास नहीं दिया, किन्तु मेरे लियेही वनवास का सामान किया । बड़ा भाई दुःख उठावे और मैं सुख । यह कब सम्भव है ? मैं सन्मार्ग से गिरी हुई अधर्म युक्त बातें तेरी स्वीकार नहीं कर सकता। फल यह है कि बहिनो ! सदा सुन्दर गुणवाली स्त्रियों के पास बैठो । और किसी का अधिकार मिटाने वा दूर करने वा दूसरों को दिलाने का यत्न न करो।

## ❀ नं० २ पद्मावती ❀

यह हमीरसिंह चौहान सिंगलद्वीप की कन्या थी। महाराजा रत्नसेन चित्तौड़ को ब्याही थी। इस के अतिरूपवती होने की प्रशंसा संसार में फैल रही थी। अलाउद्दीन खिलजी ने राजा रत्नसेन से कहा कि आप की रानी की सुन्दरता और सुघरता की अधिक बड़ाई है। आप मुझे दिखला दीजिये और यह भी समझ लीजिये कि हमारी धर्म पुस्तक में दूसरे की विवाहिता स्त्री की ओर कुदृष्टि से देखना महा पाप है। राजा ने वहीं दरबार में बुलाकर दिखला दिया। विदित होता है कि उस समय परदे की रस्म न थी। पहले समय में आज जैसे पापी मन मलिन अशुद्धाचारी पुरुष न थे। अपनी विवाहिता स्त्री के अतिरिक्त पराई स्त्रियों को माता, भगिनी, कन्या के सदृश जानते और मानते थे। यह नहीं था कि अपनी सुरूपवती कन्या को और दृष्टि से देखें और अन्य की कुरूपवती कन्या को और दृष्टि से। समझते थे कि आंखें परमात्मा ने इस लिये नहीं दी हैं कि किसी को पाप की दृष्टि से देखें। आज संसार में अन्धों की आंखें इसी लिये छीन ली गई हैं कि उन्हों ने पूर्व जन्म में पराई स्त्रियों को कुदृष्टि से देखा था। इन विचारों से संयुक्त पवित्र शुद्ध मन वाले मनुष्य थे। इस लिये सत्य को सब से श्रेष्ठ जानते थे।

सात्विकी भोजन करते थे। पृथ्वीराज के समय तक आल्हखण्ड से विदित है कि अपनी स्त्रियों के पास विवाह से प्रथम बहुकाल पर्यन्त रहे, परन्तु जब तक उन्हें विवाह नहीं लिया तब तक उनकी उँगली तक का स्पर्श नहीं किया। यही कारण परदा न होने का था। परन्तु अलाउद्दीन अपनी इन्द्रियों को वश में न रखकर उस का वशीभूत हो गया और अपनी प्रतिज्ञा का कुछ ध्यान न रहा अर्थात् अपने कथन के प्रतिकूल दूसरे की विवाहिता स्त्री लेने के लिये दिल्ली आकर चढ़ाई करदी। राजा रत्नसेन क़ैद होगया उस समय इस वीर रानी ने भ्राता को बुला भेजा और उस से सहायता लेकर कुछ सेना तैयारकर अलाउद्दीन को पत्र लिखा

कि मैं आती हूँ आप मेरी सखी सहेलियों के लिये पांच सौ डोलियां भेजदें इस न उन में जवानों को बिठलाया और सब से टूटी डोली में आप बैठी और ले जाकर राजा को कैद से छुड़ा लाई द्वितीय वार जब फिर बादशाह ने चढ़ाई की, राजा रत्नसेन मारा गया, रानी ने अपने पतिव्रत धर्म पर बट्टा न लगने के विचार से चिता जलाकर सहेलियों सहित अपने को भस्म कर दिया। जब अलाउद्दीन रनवारा में इस अभिलाषा से गया कि पद्मावती को गले लगाकर अपनी छाती ठण्डी करे, हर कोठे महल में दीवानों के तुल्य ढूँढता फिरता था परन्तु कहीं पता न लगा। एक बांदी, जो बच रही थी, उस से पता पूछा कि पद्मावती कहां है? रंज के कारण उसके मुँह से शुद्ध बात नहीं निकली थी, मुट्ठी भर राख उठाकर लौंडी ने चिता की ओर इशारा करके बतलाया कि यह धूल अपने सर में डाल, वह तो जलकर भस्म हो गई। अब खाक नहीं मिल सक्ती। अन्त में अलाउद्दीन अपने भ्रष्ट होने से बहुत ही लज्जित हुआ और सर्वदा के लिये संसार में बुरा उदाहरण छोड़ गया। देखो रानी ने धर्म के पीछे प्राणों तक की परवाह न की क्या कोई कह सकता है कि पद्मवती मर गई! नहीं २ वह इस वीरता और साहस के साथ सदैव को जीवित होगई।

## ❀ नं० ४ जयचन्द्र वालिये कन्नौज की रानी ❀

कन्नौज का राजा जयचन्द्र जिस समय शहाबुद्दीन से लड़ रहा था, रानी उसकी क़िले पर चढ़ी हुई देख रही थी कि राजा पर अब बहुत तंग समय है। लाखन सिंह इस का बड़ा बहादुर बेटा प्रथम ही पृथ्वीराज की लड़ाई में मारा जा चुका था, पति पर कठिन समय देखकर इस वीर रानी से नहीं रहा गया। अपने गोद के बच्चे की परवाह न करके लालन पालन का कुछ भी प्रबन्ध न कर घोड़े पर चढ़ पति के साथ लड़ाई में मारी गई। नाम आज तक जीवित है। जैसा कि-

कन्नौज गढ़ के राव थे जयचन्द्र दिल चले।

जब गोरियों से उन के हुये आ मुक़ाबिले ॥
रानी भी उन की देख रही थी चढ़ी क़िले ।
वह क्षत्रियों का धर्म वह खू कब भला टले ॥
छोड़ा कुँवर को कूद के घोड़े पै चढ़ गई ।
मैदां में लड़के साथ पती के वह मर गई ॥

## नं० ५ राजा रणधीरसिंह वालिये गढ़ मुन्दरा

राजा रणधीर सिंह वालिये गढ़ मुन्दरा जब लड़ाई में मारे जा चुके थे और रानी पकड़कर क़ैद करली गई थी, क़तलूखां चाहता था कि रानी पर क़ाबू पाजावे और किसी प्रकार इस के धर्म को नष्टकर उस के पतिव्रत और पतिव्रता को भ्रष्ट करदे । परन्तु वह वीर रानी हर समय कटार अपने निकट रखती थी और कहती थी कि यदि किसी ने मेरे शरीर में हाथ लगाया तौ मैं कटार मारकर मर जाऊंगी । एक वार उसने क़ाबू पाकर घातक से अपने पति का वदला लेकर उसे मार आप भी मर गई और अपने धर्म की रक्षा कर गई । जैसा कि:-

गढ़मुन्दरा के राव थे रणधीरसिंह जी ।
मारे गये वह क़ैद में रानी भी मरगई ॥
वह कतलूखां की कैद में एक साल तक रही ॥
बदला लिया पति का और अस्मत बचा लई ॥
वहां क़ैद में न उस का कोई गमगुसार था ।
शृंगार उस का धर्म था जेवर कटार था ॥

आज कल स्त्रियों को अपने गहने पातों का ही सँवार नहीं होता यदि वह भी इन्हीं की तरह गहनों में लदी होतीं, या यूं कहिये कि हाथों में हथकड़ियां और पांव में बेड़िया पहने होतीं तो क्या इस प्रकार धर्म की रक्षा कर सक्ती थीं, कदापि नहीं ।

## ❀ नं० ६ कृष्णाकुमारी ❀

यह सिन्ध के राजा की राजकुमारी थी। बड़ी वीर थी। अपने पिता के मारे जाने पर बड़ी वीरता से लड़ी, पश्चात् कैद होकर बग़दाद तकगई वहा इसने पिता का बदला लेकर अपनी जान खो दी और धर्म की रक्षाकी।

## ❀ नं० ७ समरती ( स्मृति ) ❀

जयचन्द्र वालिये कन्नौज के सिपहसालार ( सेनापति ) प्रतापसिंह की कन्या थी। यह भी लड़ाई में बड़ी बहादुरी से मारी गई।

## ❀ नं० ८ दुर्गावती ❀

यह चन्देरी के राजा सुच्छराव की कन्या थी, पाण्डु देशकी रानी थी। जब इस पर आसफ़ ने चढ़ाई की तो यह वीर रानी हाथ में तलवार लिये हाथी पर सवार थी, इस का पुत्र न्यून आयु का साथ था। मैदान लड़ाई का गर्म पड़ा हुआ, लड़का मारा गया, यह मैदान में डटी रही, लड़के की लाश को उठवाकर तम्बू में भिजवा दिया गया, आप धैर्य के साथ हाथी पर चढ़ी रही, बार बार शूर वीरों को बढ़ावा देती और हाथी बढ़ाती जाती थी। एक तीर नेत्र में आकर लगा जिससे मूर्छित होगई, एकाक्षी रहगई। परन्तु सम्हलकर उठी और सोचकर फिर हाथीवान् से कहा कि तलवार लेकर मेरा शिर काट दे। उसने इन्कार किया। कहती है कि तू नहीं जानता मैं वीर रानी हूँ। अभी एक तीर से एक आंख से अन्धी हुई हूँ। ऐसा न होकि कहीं दूसरी आंख से भी अन्धी होजाऊं और दृष्टि न रहने के कारण शत्रुकी ओर पीठ होजावे और धर्म नाश होजावै। हाथीवान् ने उसे धन्यवाद दिया। रानी यह विचार कि शत्रु की ओर पीठ होजाने वा उसके हाथ पड़जाने से धर्म जाता रहेगा, कटार खाकर मर गई। कीर्त्ति आज तक प्रसिद्ध है। और भी बहुत गुणवान थी। करनल सलीसन लिखते हैं कि जब मैंने रानी दुर्गावती का मकबरा देखा तो टोपी उतारकर सिजदा किया।

रानी चँदेरी राजे मुच्छरोव की ।
दुर्गावती थी तख़्तनशीं पांडु देश की ॥
होकर मुसल्लह आप वह आसफ से थी लड़ी ।
जखमी हुई गश आगया रणसे नहीं फिरी ॥
जावेगा धर्म हाथ जो दुश्मन के पड़ गई ।
यह सोच नेजा खाके जिगर में वह सोगई ॥

## ❁ नं० ९ कर्मदेवी ❁

यह समरसिंह चित्तौड़ के राजा की बड़ी वीर रानी थी। इसका पति पृथ्वीराज की सहायता देने में काम आया था। जब देहली और कन्नौज की विजय पाने के पश्चात् शहाबुद्दीन ने उसके सहायकों के दबाने और स्वाधीन करने के अभिप्राय से चित्तौड़ पर कुतुबउद्दीन अपने मन्त्री को भेजा, जब वह उसके निकट पहुंचा, ज्ञात हुआ कि उस की रानी कर्मदेवी राज्य प्रवन्ध करती है। उसने रानी से कहला भेजा कि किले की कुंजी भिजवा दो और मेरी बन्दगी स्वीकार करो। रानी ने उत्तर में कहला भेजा कि बहादुर शूरवीर ऐसे कायरों के से संदेशे नहीं भेजते। कहदो कि कर्मदेवी अपने सिंहवत् शूरवीर पति की प्रतिष्ठा में अपने जीते जी दाग न आने देगी। यह खबर सुनकर इधर उन्हों ने युद्ध का डंका बजाया, उधर वह घोड़े पर सवार होकर फौज के मैदान में आ डटी। अवश्य उसकी सेना शत्रुकी सेना से बहुतही न्यून थी परन्तु जब उसने भाला हाथ में ले, घोड़ा सेना के बीच में लेजा कर बढ़ावा दिया कि जिसे बाल बच्चे प्यारे हैं वह अभी लौट जावे जिन्हों ने जान लिया है कि हमारी जान थोड़ी ही देर की महमान है, वह मेरा साथ दें। यह समय स्त्री बनने का नहीं है। यदि तुम जानको प्यारी न जानो तो विजय पाओगे। उसके प्रभावशाली उपदेश ने बीरों के हृदयों को उत्तेजित कर दिया। राजपूत दरिया के तुल्य बढ़े और शत्रुओं की सेना का सफ़ाया कर दिया। जब आसपास ख़बर पहुँची

और बहुतसी सेनायें आकर सम्मिलित होगई। जिससे कुतुबुद्दीन को भाग कर प्राण बचाने के अतिरिक्त और कोई उपाय न बनि आया। कर्मदेवी इस विजय के बाद अपनी सेना को बढ़ाती गई। जब तक वह जीवित रही किसी को उसके मुक़ाबिले का साहस न हुआ।

—— :*:-०-:*: ——

# काण्ड ४।

## इसमें दो बुद्धिमती और प्रबन्धकर्त्री रानियों के जीवनचरित्र हैं।

## नं० १ संयोगता।

यह कन्नौज के राजा जयचन्द्र की कन्या और पृथ्वीराज दिल्ली के राजा की रानी थी। जिस समय इस के बाप ने स्वयम्बर रचा, उस समय राजा ने शत्रुता के कारण पृथ्वीराज को नहीं बुलाया वरन् उस के स्थान पर उसकी मूर्ति बनवाकर ड्योढ़ी पर चाकरों की जगह पर रखवादी और अपनी कन्या को स्वयम्बर की आज्ञा दी। कन्या अति चतुर बुद्धिमती थी। उसने राजों में पृथ्वीराज को वरा। उस मूर्ति को जयमाला पहिनादी। उस समय जयचन्द्र ने क्रोधित हो अपनी कन्या से कहा कि विदित हुआ कि तू रांड होकर बैठेगी। तू ने मेरे शत्रु के जयमाला डाली है तब उसने बहुत योग्यता से उत्तर दिया कि यह आप सत्य कहते हैं परन्तु आपने मुझे स्वयम्बर की आज्ञा क्यों दी? यों क्यों नहीं कहा कि मेरी आज्ञा से अमुक पुरुष से विवाह कर। अब आप अपने कथनानुसार वचन को निर्वाह कीजिये। सारी सभा में पिता को लज्जित किया सम्पूर्ण उपस्थित सभा ने कन्या के वचन की पुष्टि की तब पिता ने कहा कि मैं अपने जीतेजी प्रसन्नतापूर्वक नहीं बिवाहूंगा। पृथ्वीराज यह सुनकर चढ़ाई कर संयोगता को बिवाह लेगया। देखिये

उस समय तक स्त्रियां कैसी स्वतन्त्र सम्मति रखती थीं और कैसी बुद्धिमती थीं ।

चौपाई ।

एक समय जयचंद नरेशा । रच्यो स्वयंवर कनवज देशा ॥
देश देश के भूप बुलाये । पृथीराज निज बैर विहाये ॥
तिनकर प्रतिमा लीन्ह बनाई । सभा मध्य सो दीन्ह धराई ॥
संयोगिन जयचन्द्र कुमारी । लै जयमाल सभा पगु धारी ॥
सब नृप रहे चितै तेहि ओरा । जिनकेमन अभिलाष न थोरा ॥
राजकुमरि सब नृपन बिहाई । जयमाला प्रतिमहि पहिराई ॥
यह चरित्र जयचँदनृप देखा । उग्रउजा, अतिक्रोध विशेषा ॥
क्रोधनिरखि बोली मृदुबानी । रंगभूमि प्रतिमा किमिआनी ॥
तव आज्ञा पाल्यो नरनाहा । दीन्हमाल जेहिमम उरचाहा ॥
क्षत्री ह्वै कस मन सकुचाहू । वीर धीर निज प्रणहि निबाहू ॥

दोहा—यहि कारण अब उचित है, छोड़ लोक कुल लाज ।
मम इच्छा और धर्म हित, करो आप यह काज ॥

शेर—कन्नौजगढ़ का वाली जो जैचन्द राजा था ।
बेटी का अपनी उसने स्वयम्बर रचाया था ॥
लेकिन न पृथ्वीराज को इसने बुलाया था ।
उस की शकल का राजा ने दर्बा बनाया था ॥
संयोगता इसकी राजकुमारी थी अक्लमन्द ।
राजों में पृथ्वीराज को इसने किया पसन्द ॥
जैचन्द ने क्रोध से उस पर निगाह की ।

बेटी ने हाथ जोड़ के तब बात यह कही ॥
तस्वीर आपने यह स्वयम्बर में क्यों रखी ।
क्यों आपने भला यह इजाजत मुझे थी दी ॥
चत्री हैं आप बात को अपनी निबाहिये ।
पैमाशिकन न बनिये न मुझ को बनाइये ॥

## ❀ नं० २ अहिल्याबाई ❀

यह रानी न्यून अवस्था में विधवा हो गई थी । इस ने सम्पूर्ण राज कार्य्य अपने हाथ में ले लिया था । सारा राजप्रबन्ध अपने हाथ से संभालती थी, सारे कार्य्यों को स्वयं देखती, अति योग्य प्रबन्ध करती बुद्धिमती थी । अपने गुप्तचर ( जासूस ) लगाये रखती, इस के राज्य में जिस ने किंचित् शिर उठाया उसे इस ने नीचा दिखाया, सब प्रकार से इस ने अपना नाम प्रकाशित किया । यह खुशामद ( चापलूसी ) को विषवत् समझती थी, अपनी अधिक और अनुचित बड़ाई सुनना नहीं चाहती थी । मलिका एलज़िबिथ से इस मामले में यह बढ़ी हुई थी क्योंकि वह खुशामद पसन्द थी । यह खुशामद से चिढ़ती थी । इस की बड़ाई में एक पंडित एक स्तोत्र बना कर लाया, जिस में लिखा था कि तू साक्षात् भवानी है और भी तारीफ थी । यह प्रसन्नता के स्थान में बहुत अप्रसन्न हुई । उत्तर दिया कि तू मुझे साधु संन्यासी देवी से समता देता है । मैं तुच्छ स्त्री इस उदाहरण के योग्य नहीं । आज्ञा देती है कि इस स्तोत्र को नदी में डुबा दो और इसको इतना दण्ड दो कि यह भविष्यत् में ऐसी झूठी और अनुचित्त कविता न करे इस के प्रतिकूल मलिका एलज़िबिथ पर खुशामद जादू का प्रभाव रखती थी । जब अरल आफ़ इस्सनकसन चापलूसी करते थे, जो चाहते थे, उस से करालेते थे । यह समय की अति पाबन्द थी । आज स्त्रियों का समय काटे नहीं कटता । इसे काम के लिये समय नहीं मिलता था ।

## तीसरे अध्याय का द्वितीय भाग ❁

इस में वह बातें लिखी हैं जिन के जानने की अति आवश्यकता है। जिन्हें आज स्त्रियों ने विद्या न होने के कारण उलटा कुछ का कुछ समझ लिया है।

### ❁ अविद्या ❁

अविद्या के अर्थ प्रथम ही बतला दिये गये हैं कि जो वस्तु वास्तव में कुछ और हो और कही और बतलाई और समझी और समझाई और मानी और मनवाई कुछ और जावे, वह अविद्या कहाती है। इस का लक्षण योगशास्त्र में पातंजलि ऋषि ने यह किया है कि १ अनित्य को नित्य, २ अशुचि को शुचि, ३ दुःख को सुख, ४ अनात्मा को आत्मा समझना अविद्या है। जिस का व्योरा अधिक है। इस अविद्या में आज बड़े २ विद्वान् गोते खाते हैं और अशुद्ध और अपवित्र और अनित्य शरीर को शुचि और पवित्र और नित्य समझ महा अधर्म का काम कर रहे हैं। विषय सुख को जो निरन्तर दुःख है उस के लिये नाना प्रकार के ढोंग रच रहे हैं जड़ को चेतन वरन् इष्टदेव तक समझ बैठे हैं। अविद्या के और भी लक्षण बतलाये हैं, कि:—

इन्द्रियदोषात्संस्कारदोषाच्चाविद्या ।

एक इन्द्रिय दोष अर्थात् जिस के नेत्र में दोष है उस के सम्मुख चाहे सांप रख दो वह नहीं डरता, या जिस को सुनाई नहीं देता उसे चाहे जितनी गालियां दो वह बुरा नहीं मानता, ऐसे ही पीनस का रोग होने से सुगन्ध और दुर्गन्ध का ज्ञान और बुखार होने से स्वाद का ज्ञान नहीं होता वा नेत्र श्रोत्र नासिका जिह्वा न होने पर भी यह कहना कि मैं भले प्रकार देखता, सुनता, सूंघता वा स्वाद जानता हूं, अविद्या इंद्रिय दोष युक्त कहलाती है। दूसरी अविद्या संस्कार दोष युक्त है अर्थात् जान लिया है कि झूंठ बोलना महा पाप है, झूंठों को दण्ड होगा, कारागार का मुँह देखना पड़ैगा, सैकड़ों स्थानों पर इस के कारण लज्जित होना

पड़ता है परन्तु स्वभाव और अभ्यास के कारण झूंठ नहीं छूटता जान लिया है कि परमेश्वर चेतन व्यापक मालिक आलिम है परन्तु आज जड़ों को ईश्वर मानते और विना व्यापक मिलकियत और मालूम के उसे व्यापक मालिक आलिम मानते जो स्वभाव का कारण है । नाना प्रकार के दुःख अपने कुसंस्कारों के कारण उठा रहे हैं । दुनियां में भंगेड़ी, चरसी, ज्वारी, शरावी, कवावी आदि नामों से वदनाम होरहे हैं परन्तु अभ्यास के ऐसे चेरे, इन्द्रियों के ऐसे वशीभूत वन गये हैं कि छोड़ही नहीं सकते । यह संस्कारजन्य अविद्या कहाती है । इससे वचने और इस का प्रभाव न पड़ सकने के लिये मैंने पहिले निवेदन कर दिया है कि संस्कार का प्रभाव अवश्य पड़ता है, इस लिये वच्चों को कुसंस्कारों से वचा कर सुसंस्कारों में प्रवृत्त कराइये । यदि उनमें दुष्ट अभ्यास प्रवेश कर गये तो फिर उनका निकलना महां कठिन होजाता है जैसा कि मुझे स्मरण है कि मैंने वरेली में एक विद्यार्थी रामचन्द्र नामी के मुखाग्र सुना था कि साप्ताहिक क्लव कुमेटी के जलसे में मैं सम्मिलित होता हूँ, मेरे सत्संगी और सम्बन्धी माता पिता इष्ट मित्र रोकते हैं कि क्यों इतना समय नष्ट किया, जव परीक्षा से निवृत्त और वड़े होजाना तव जो चाहना कर लेना परन्तु जव मेरा ध्यान उस हिन्दू हुए मुसल्मान की ओर जाता है तो मुझको इस वात पर कि अवश्यही क्लवादि धार्मिक सभाओं में जाना चाहिये, मजबूर कर देता है यदि स्वभाव अभी से न पड़ा तो फिर वड़ी कठिनाई होजायगी । जैसे वालकों से माता का वुआ २ कहना नहीं छूटता उसका छूटना दुस्तर होगा । एक यवन ९० वर्ष की आयु में शुद्ध किया गया उससे कहा गया कि राम २ शिव २ कहना । वह दो एक दिन राम २ कहता रहा तीसरे चौथे दिन अल्लाह २ खुदा २ करने लगा तव लोगों ने कहा कि यह क्या वात है । उसने उत्तर दिया कि ९० वर्ष का घुसा हुआ खुदा ४ दिन में कैसे निकल सकता है । ऐसेही हिन्दू मुसल्मान होते हुए राम २ शिव २ शीघ्र नहीं छोड़ते । इसी प्रकार जो स्वभाव इस समय पड़ जावेंगे वह कैसे दूर हो सकेंगे । इस लिये मैं वहां का जाना नहीं छोड़

सकता । यही कारण है कि आज मुसल्मानों में सैकड़ों हिन्दुओं की रीतें जो उनके साथ २ मुसल्मान होते हुए आईं, पाई जाती हैं और हिन्दुओं में मास भक्षणादि विषय जो उनकी संगति और प्रायश्चित्त से प्रथम के प्रभाव के शेष रह गये, चली जाती हैं । सहस्रों मुसल्मानों की रीतें हिन्दुओं के यहां और हिन्दुओं की मुसलमानों के यहां बर्त्ती जाती हैं जो उसी संस्कार जन्य अविद्या का कारण है । उसी का आज यह फल है कि भारत वर्ष ग़ारत वर्ष और आर्यावर्त्त आरत वर्ष बन गया किन्तु वर्त्तमान समय में इसे भंग, चरस, शराब वर्ष, हुक्का, मछली, कवाबवर्त्त कहैं तो भी अनुचित नहीं । जहां कोई गृह कोई प्रान्त ऐसा नहीं था कि जहां से हवन की सुगन्धि आकाश तक न पहुंचती हो वहां से आज मछली मांस की दुर्गन्ध गली कूचा घर २ के मनुष्यों के मस्तकों को दुःखित कर रहा है । हे बहनों ! तुमको बहुत समय इस अविद्या में सोते हुए हो गया । इस के कारण वह कौनसा दुःख है जो तुमने नहीं उठाया। वह कौनसा पापड़ है जो तुम्हें बेलना नहीं पड़ा। तुम्हें पुरुष आज पशुओं से निकृष्ट समझने नहीं लगे वरन् तुम्हारे साथ उन से भी अधिक भ्रष्ट बर्ताव किये जा रहे हैं। तुम भी उन नष्ट और अनुचित व्यवहारों को सहती हुई ऐसी सहनशील बन गई हो कि अब उनसे उभरना बुरा समझती हो, कान तक नहीं हिलाती। चाहे तुम्हें कोई परदे वाली बीबी सवारी बतलावे, चाहे कोई पैर की जूती खादिमा समझे परन्तु तुम्हारे पर जूं तक नहीं रेंगती किन्तु जिस दशा में हो उसी में मग्न हो । तुम्हें जो कोई उन अनुचित व्यवहारों से बचाना चाहता है तो तुम उसे इस स्थान पर कि उसकी प्रतिष्ठा करतीं उसको अपना हितैषी समझतीं उसको अपना मुख्य बैरी समझ रही हो ? तुम्हारी आत्मा ऐसी निर्बल हो गई है कि उसमें कुछ बल पराक्रम साहस उत्पन्न नहीं होता जो उसी संस्कार जन्य अविद्या का कारण है। सत्य है कि जिसका आत्मा निर्बल हो जाता है बहुत कठिनाई से बलवान होता है जैसा कि एक चमार ने एक ब्राह्मण को गुरू किया था वह देखता कि गुरूजी महाराज नित्य प्रति न्यौता जेम आया करते हैं

एक दिन गुरू से कहने लगा कि गुरूजी आप तो नित्य ही न्यौता जेम आते हैं एक दिन मुझे भी ले चलिये, उसने कहा, कि अच्छा आज ही चलो, परन्तु मुझ से पृथक् अन्तर से बैठ जाना, आधी धोती ओढ़ लेना ताकि जनेऊ का पता न चले और अपना नाम चमार न बताना । यह सुन, जाकर वह गुरू से अलग बैठ गया, परन्तु आत्मा भीतर से निर्बल, जब कोई दूसरा ब्राह्मण आता, वह परे हट जाता, अपनी जगह उस के लिये खाली कर देता, यहां तक कि जब कोई अन्य आये यह परे हटता गया। यहा तक कि पैर धोने की जगह पर जा पहुँचा। एक और ब्राह्मण आया एक और आये तब यह वहां से भी सरका तब उन्होंने जो पहिले आये थे उस को बराबर हटता हुआ देख कर कहा कि अरे तू क्या चमार है, जो बराबर हटता जाता है ? अब वह वहीं से बोला कि गुरूजी महाराज मैंने नहीं बताया वह तो आपही जान गये जिस के कारण वहां से गुरूजी और वह चमार बड़ी दुर्दशा के साथ निकाले गये । यहां पर इस के लिखने का तात्पर्य यही है कि जिनकी आत्मायें निर्बल डरपोक हो जाती हैं, चाहे वह कष्ट सहते २ लात घूंसे खाते २ होगई हों वा वर्षों से उस कार्य के करते करते अभ्यासी बन गई हों वह सहसा बलिष्ट नहीं होतीं । जैसे पिंजरा में रहता हुआ पखेरू पिंजरे की ही इच्छा करता है । तुम्हारी आत्मायें बलिष्ट ज्ञानी पवित्र तभी बनेंगी जब उस आत्मा को जिसके अविद्या और अज्ञान से नेत्र अन्धे हो रहे हैं विद्या और ज्ञान अंजनरूपी प्रकाश से प्रकाशित कराने के लिये परमात्मा रूपी सथिया के आदिसृष्टि में दिये हुये सच्चे वेद विद्यारूपी सूर्य्य के पास लेजाओगी । उस समय तुम्हे कुछ अधिक कष्ट सहना नहीं पड़ेगा, क्योंकि जब प्रकाश आता है अन्धकार आपही दूर होजाता है । प्रकाश के आते अन्धकार नहीं रह सकता । अन्धकार में घर की सुखदाई चीजें मसहरी आरामचौकी ठेस लगने से दुःखदाई हो जाती हैं । सारे भ्रम, रस्सी का सर्प, ठूंठ का पुरुष, सीप की चांदी आदि अन्धेरे में प्रतीत होते हैं । चोर, जार सब अन्धेरे ही में चोरी जारी करते हैं । जितनी बुराइयां होती हैं सब अन्धेरे

में ! आज जो तुम उलटा कररही हो सो तुम्हारे मन बुद्धि पर अविद्या का आवरण आगया है। विद्या का प्रकाश उसके भीतर नहीं पहुँचा। सोचो भली भांति ध्यान दो कि:—

(१) जैसे अन्धकार में दश रोज सूर्य्य न निकलने से आंखों की दशा होजाती है वा रात्रि में दीपक ठण्ढा करने से घर से बाहर निकलना कठिन हो जाता है ऐसेही बुद्धि पर अविद्या व वेदों के ज्ञान न रहने का आवरण आजाने से मनुष्यों की दशा हो जाती है।

(२) जैसे नेत्र बिना सूर्य्य वा उससे आये हुये प्रकाश को देख नहीं सकते वैसेही बुद्धि बिना वेदविद्या के ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकती।

(३) जैसे भंग पीलेने से विचारशक्ति मारी जाती है, कहता कुछ, निकलता कुछ है वा जैसे आंख मींच लेने से सूर्य्य होते हुये दिखाई नहीं देता, ऐसेही बुद्धि की सहायक वेद विद्या की शिक्षा न्यून होजाने से बुद्धि भ्रष्ट होजाती है।

(४) जैसे आंख के भीतर जरा से तिल से सूर्य्य पच्चीस करोड़ मील का परिधि रखने वाला दीख जाता है वैसे ही मनुष्य की बुद्धिके अन्दर सम्पूर्ण वेदों का ज्ञान समा सकता है, यदि परिश्रम किया जावे।

(५) वेदों की रोशनी आदि सृष्टि में वैसे ही बिना दामों के मिली है जैसे आंखों को रोशनी मिलती है और वह ही अब तक विद्यमान है, परन्तु जब आंखें ही न खोलें तो किसका दोष है।

(६) याद रक्खो कि जैसे लुहार में लोहे से तलवार बनाने की शक्ति है तो लोहे में बनने की भी। इसी प्रकार परमात्मा में यदि वेदों के ज्ञान देने का गुण है तो जीवात्मा में ग्रहण करने का भी। परन्तु यदि हाथ से ही काम न लो तो वह थोड़े ही काल में निकम्मा हो जाता है वैसेही तुम ने स्वयं किया और स्वार्थियों ने वह प्रकाश तुम तक पहुँचने नहीं दिया। जिसका फल पुरुषों को यह मिला कि आज उसके कारण उनका नाक में दम है। तुम्हें समझाते समझाते मर रहे हैं, तुम्हें

उनकी बात पर विश्वास नहीं आता, तुम उन की बात पर ध्यान नहीं देतीं । एक धुना, जुलाहे, लोधे, चमार, भंगी, महामूर्ख की बात मान लेती हो परन्तु पति और अपने सम्बन्धियों की नहीं । जो अविद्या नहीं तौ और क्या है । जब तुम्हारी यह दशा है तो पति पुत्रादि भी जल भुन कर तुम्हें जो कष्ट न पहुँचायें वे थोड़े, और दे ही रहे हैं । यदि तुम पति और घरवालों की बात मानतीं, पतिव्रत धर्म को समझतीं प्रत्येक से उस की योग्यतानुसार वर्त्ततीं तो आज क्यों यह दशा होती आज आप ने सहस्रों बातों को उलटा समझा है । मैं उन सब बातों को इस छोटी सी किताब में लिख नहीं सकता इस लिये उन में से संक्षेप से कई वार्त्ताओं को बतलाऊंगा जिन को आपने अविद्या अज्ञान से उलटा समझा हुआ है । कृपा कर के यदि कोई कठोर शब्द लिख गया हो तौ क्षमा कीजिये और विचार पूर्वक एकान्त में बैठ कर पढ़िये और सोचिये औरों से भी पूछिये तब आप को पता लगेगा कि यथार्थ क्या बात है और हमने आज तक अपना समय और अमूल्य जन्म किन २ कुमार्गों में गंवाया है । इतनी बात और भी स्वीकार कीजिये कि यदि कोई बात तुम्हारी समझ में आजाये तो यह न सोचिये कि सारी आयु तो ऐसे ही इन्हीं बातों में गुजर गई, थोड़ी शेष रह गई, इसे भी ऐसे ही व्यतीत हो जाने दो । इस लिये वह पाप और अधर्म युक्त कर्मों का फल तो अवश्य ही मिलेगा और मिल रहा है । अब यह सोचो कि एक स्त्री के नेत्र पचास वर्ष तक अन्धे रहे हों अब कोई उस की आंख बना देवे तो क्या उस का धर्म है कि फिर भी वह अपनी आंख को फोड़ लेवे वा उस पर पट्टी बाँधे रहे । नहीं नहीं जब तक न दीखता था, नहीं देख सकती थीं, जब परमात्मा की कृपा हुई अब क्यों आखें फोड़ लें । बस इसी तरह जब तक न समझी थी जो कुछ किया सो किया, अब जान गई अब क्यों न उस पर कार्यबद्ध हो वर्त्ताव करे । जैसे नेत्र फोड़ लेना और अधिक पाप है, इसी प्रकार जानबूझ कर करने पर उद्यत न होना घोर पाप क्यों नहीं ? इस लिये झट पट कार्य आरम्भ कर दो । कहा भी है कि भले काम में देर लगाना नहीं चाहिये ।

काल करै सो आज कर आज करे सो अब।
पल में प्रलय होयगा, बहुरि करोगी कब ॥ वा—
कहै कबीर युग युग भई, जब चेते तबही सही ॥

आयु का एक दिन अथवा एक क्षणभी रह जावे उस समय भी यदि सच्चा ज्ञान प्राप्त हो जावे, उसे मान लेना। उसके करने पर उद्यत होजाना दूसरे जन्म में सहायक होता है। इस लिये प्यारी वहिनो ! बहुत दिन सो चुकीं, अधिक काल बीत चुका, अब कब तक चादर ताने हुये सोती रहोगी, बहुत करवटें बदल चुकीं अब तनक उठकर आंखें धो डालो। बहुत देशहितैषी तुम को सुनाते हैं कि चेतो २। इस लिये चेत जावो और जागकर देखो, तुम्हारा सारा माल असवाब चोर उठाले गये तुम्हें खबर तक नहीं हुई। बहुत से ठग टट्टी की आड़ में शिकार खेलते रहे तुम्हें उनकी आखेट का पता तक न लगा, अब जो कुछ बचा बचाया है उसे तो संभाल लो, सूर्य की ओर देखो कितना ऊंचा हो गया। हाय तुम करवटें ही वदलती रहीं। अब मेरा कहना मान लो। इस अविद्या अभागिन को जिसने तुम्हारी यह गति वनाई है, अपने पास न फटकने दो, अपनी सच्ची मित्रता विद्या वहिन से बढ़ाओ जिस से सच्चा सुख और शान्ति पावो।

( प्रकट हो कि यदि मूर्ख स्त्रियों और उन के चरित्रों को भली भांति दर्शाया जावे ती इसी विषय की एक पुस्तक बन सकती है। इसी लिये कई आवश्यक बातें संक्षेत से उदाहरण के ढंग पर आप के सन्मुख धरता हूं, जिस से मेरी वहिनों को पता लग जावेगा कि आज वह अपने अज्ञान से कैसे २ धोका देने वालों छली कपटी जनों के धोके में फंस अपना अमूल्य जन्म बिता रही हैं। वा उन के बहकाने में स्वतः यह जानकर कि हमारे छल औरों पर विदित नहीं होते, झूठे प्रपंच रच रही हैं और आत्मा का खून कर आत्मा को परमात्मा की आज्ञापालन में लगाने के स्थान पर उस से विमुख हो कैसे लचर और पोच कार्य्यों

को कर रही हैं । आप उन बातों को उनकी आरंभ की सुर्खी से ही जान लेना )

## परमात्मा के स्थान पर किन वहमी देवतों की पूजा होती हैं।

वहिनों ! परमात्मा जो सर्वव्यापक सर्वद्रष्टा सर्वान्तर्यामी है आज उसे तो तुम एक चौकीदार के तुल्य भी नहीं समझतीं । चौकीदार से डरती हो, उसके सम्मुख चोरी, जारी, जुआ आदि कुकर्मों से बचती हो परन्तु ईश्वर का तुम्हें किंचित् भय नहीं है, चौकीदार के ऊपर सहस्रों अफ़सर हाकिम, परमात्मा सर्वोपरि सब हाकिमों का हाकिम अफ़सरों का अफ़सर मजिस्ट्रेटों का मजिस्ट्रेट राजाओं का राजा जज्जों का जज्ज है उस का भय करके क्या कोई स्वप्न में भी कोई बुरा काम कर सकता है ? आज तुमने उसका डर छोड़ दिया उसकी पूजा के स्थान पर नीम दीवार पाखों पत्थर कबरों पेड़ों नदीं नालों जखैया भूत प्रेतों मुर्दों की पूजा करतीं और अपनी इच्छानुसार फल मांगती फिरती हो, तुम्हें ईश्वर पर विश्वास नहीं रहा कि एक परमात्माही सारे जगत् में व्यापक होकर हर किसी के कर्मों के अनुसार पक्षपात छोड़ के सत्य न्याय से यथावत् फल दे रहा है । शोक के साथ कहना पड़ता है कि आज परमात्मा के वेद मन्त्र 'वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्०' में बतलाया है कि परमात्मा और मोक्ष की प्राप्ति का एकही मार्ग [ साधन ] है, जब तक परमेश्वर को सूर्य की नाईं प्रकाशमान और अन्धकार से शून्य हर स्थान में व्यापक सर्वान्तर्यामी, न्यायकारी सर्वसामर्थ्ययुक्त न जान लें, तब तक पापों से बचही नहीं सकते और पाप से बचे बिना मुक्ति नहीं होसकती । शोक कि उसे छोड़ कर आजः—

कवित्त ।

**बेरी आक झाड़ी झुंड, कीकर और पीपल ठूंठ, साल बट पाकड़ और तुलसी को रुची हैं । नदी और ताल कूप,**

माटी और प्रेत भूत, चाकी और चाक भीत आवा बांबी पूजी हैं । काली ज्वाला पथरिया, भैरों सहित कूकरिया क़बर और ताजिया पै जाय जाय जूझी हैं । धीमर कुम्हार काछी खटीक चमार, माझी भाट भंगी पीर माली शीश नाय झुकी हैं ॥

दूसरा कवित्त ।

जेठ सास ससुर पति कहै माने नाहीं, फिरै अठिलाती नारी भुमियां मियां पूजतीं । सण्डे और मस्टण्डों में मेला बीच धक्का खावें, मूह खोल खोल दिखलावें सबै कूदतीं ॥ बड़ी कुल केरी कहलावें शर्मावें नाहीं, सय्यद मदार माहिं जाय हाथ जोड़तीं । कहे मनीराम सब धर्म कर्म नष्ट भयो जब से यह नारी मन माने काम ठानतीं ।

वेदों में परमात्मा के अनेकानेक नाम गुण करके हैं । आज उन्हें अलग देवता समझने लगे । वास्तव में वे अलग नहीं हैं । उसी एक परमात्मा के अनेक नाम हैं । जैसा कि अथर्ववेद में बताया हैः—

तदग्निराह तदु साम आह वृहस्पतिः सविता तदिन्द्रः ।
स अर्यमा स वरुणः स रुद्रः स महादेवः ॥

कैवल्यउपनिषद में—

स ब्रह्मा स विष्णुः स रुद्रः सशिवस्सोऽग्निस्स धर्मः ।
स्वराट् स इन्द्रस्स कालाग्निस्स चन्द्रमाः—

मनुस्मृति में—

एतमग्निं वदन्त्येके मनुमन्ये प्रजापतिम् ।

इन्द्रमेके परे प्राणमपरे ब्रह्म शाश्वतम् ॥

इन उदाहरणों से विदित है कि अग्नि, सोम, बृहस्पति, सविता, इन्द्र, अर्यमा, वरुण, रुद्र, महादेव, ब्रह्मा, विष्णु, शिव, कालाग्नि, चन्द्रमा आदि नाम उस परमात्मा ही के हैं। जो अविद्या से सत्यार्थों को न जानकर विवाद में पड़े हैं। शोक का स्थान है कि आज वह समय आ गया कि सैकड़ों स्त्री पुरुष उस न्यायाधीश परमात्मा पर विश्वास न करके महाधूर्त्तों के बहकाने से ३३ व्यावहारिक देवतों के स्थान पर ३३ करोड़ देवता मानने लगे और उन सब को पूजनीय बतलाया है। परन्तु आज तक कोई भी उन के नाम तक उन में से नहीं गिना सकता तौ यह बेचारी क्या बता सकती हैं। फिर अपने उन ३३ कोटि वेदोक्त देवतों पर भी विश्वास न करके शेख महमदा, लोना चमारी, कलुवा, जखय्यापीर, गुहणया, गूंगा, कुहाड़ा, महमदापीर इत्यादि अनेकानेक स्थानों में जाकर पूजती फिरती हैं। फिर भी शान्ति प्राप्त नहीं होती। बहुधा स्त्रियां उन क़बरों पर जहां मुर्दे गड़े हैं, जिस में उन की हड्डियां तक गलगई हैं; गुलगुला, बताशा, रेवड़ी चढ़ा कर मिन्नतें मांगतीं और वह ही प्रसादी स्वयं खाती हैं। देखो आज हिन्दू और उन की स्त्रियों की बुद्धि और समझ कि जब उन का प्यारा बाप, चचा, माता भगिनी मर जावे वा मुर्दे के संग तक जावें, तब तौ वहां नहावें और घर आकर फिर नहावें नहीं तौ पैर तौ अवश्य ही धोवें, परन्तु जिन का छुवा हुआ खाने से घृणा करें उन के मुर्दों पर चढ़ी हुई प्रसादी खावें और नेक न लजावें और हिन्दू कहलाती ही रहें। आज क्यों न इन की बुद्धि ऐसी भ्रष्ट होजावे, जब कि इन्हों ने विचार से काम लेना ही छोड़ दिया हो। सच तो यह है कि यह सच्चे ही हिन्दू बन गये। तबही तौ :—

इष्टदेव इनके हुये, पशु पक्षी और पेड़।
मुर्दे पूजें जीवते, देखो यह अन्धेर॥
नानक दुनिया बावरी, मुर्दे पूजें ऊन।
आप मुये जग छांड़ गये, तिनसे मांगे पूत॥

भला कहीं मरों से पूत मिल सकते हैं ? बालक तो अपने पिता ही से उत्पन्न होता है परन्तु माता का यह विचार है कि यह पुत्र मेरे पति का नहीं है उन्हीं मुर्दों का दिया है । इस लिये वह सन्तान सदाही मुर्दा रहती है, उस में कभी ज़िन्दगी आती ही नहीं, वह कभी अपने में बल अपनी रक्षा और अन्नों के हज़म करने का समझता ही नहीं । शोक कि साढ़े तीन हाथ का पति घर में और स्त्रियां मुर्दों से बच्चे कराती डोलें । यह भी नहीं समझतीं कि सेवक की सन्तान दास ही होगी, और उन का अन्तष्करण जीवन भर निर्बल ही रहेगा कभी बलवान् न होगा । मुझे कहते हुए लज्जा आती है । बहुधा देखा जाता है । यद्यपि पहिले की अपेक्षा कुछ थोड़े दिनों से इस में परिवर्तन दिखाई देता है परन्तु तो भी बहुत सी लुगाइयां गोद में बालकों को दबाये हुए मसजिदों की ओर या मुजावरों तकियों की तरफ जाती हैं । आगे २ उन के पति भोंदूनाथ भी बुद्धि के पीछे डण्डा लिये हुए साथ हैं । यदि उन से पूछिये कि कहां जाते हो, कहते हैं कि ज़रा इस बच्चे के फूक डलाना है या झड़वाना है । यह नहीं सोचते कि उन के तो स्वयं बच्चे इन्हीं बीमारियों में मर रहे हैं फिर तुम्हारे बच्चे के कैसे फूक डाल देंगे । एक मरी मक्खी ही को जिला कर दिखा दें । इतनी बुद्धि कहां, जहां पहुँचे प्रथम तो जो कुछ गृह से भेंटार्थ ले गये थे आगे उनके रक्खा पश्चात् अत्यन्त श्रद्धा से कहा कि इस बालक की इतने समय से अमुक दशा है । उस मुल्ला वा मुजावर ने कुछ पढ़कर इतनी जोर से फूंका कि तमाम थूक उस बालक और उस की माता के मुख पर पड़ा । हिन्दू जो छूत छात का अधिक विचार करते हैं उन से पूछिये कि इस फूक डालने से थूक मुँह पर पड़ने से धर्म तो नहीं गया हाय शोक कि आज जो यह प्रसिद्ध किया जाता है कि हिन्दुओं की स्त्रियां थुकवाती फिरती हैं उसे यही हिन्दू सचमुच पूराकर रहे हैं जिन्हें अपने अपमान का विचार नहीं रहा ।

लजाते नहीं । यदि इन्हीं मुर्दों से सन्तानें मिलती होतीं तो श्री दशरथ जी महाराज पुत्रेष्टि यज्ञ न कराते । हिन्दू गंगा के चार सौ कोश से

नाम लेने से तमाम पापों का छूटजाना वताते हैं और देखने और पीने और नहाने से कोटानुकोटिजन्म का पाप वह जाना मानते हैं । जैसा कि:—

गंगा गंगेति यो ब्रूयाद् योजनानां शतैरपि ।
मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति ॥
दृष्ट्वा जन्मशतं पापं पीत्वा जन्मशतत्रयम् ।
स्नात्वा जन्मसहस्राणि हरति गंगा कलौयुगे ॥

परन्तु देखा गया है कि मीरा की जात को जाते समय जब कि गंगा के पुलपर होकर उतरना पड़ता है तो गाड़ियों और मझोलियों पर परदे पड़जाते हैं और आंखें भी वन्द करलीं जाती हैं, और उस समय गंगाजल की एक बूंद पड़ जाना वा गंगा के दरशन हो जाना वही हिन्दू अतिअनुचित मानते हैं परिडत पुरोहित जो साथ होते हैं उनकी इतनी शक्ति नहीं कि गंगा में स्नान करसकें इस लिये कि कहीं मीरा क्रोधित होकर सत्यानाश न करदे और कहीं लड़का देना वन्द न कर दे । वाहरे हिन्दुओ ! कहने को यहांतक और मानने को एक पग नहीं वढ़ाया तो इतना कि अपरिमित कर दिया, ऐसी सहज और थोथी वातों में विश्वासकरा सारे संसार को पाप करने में प्रवृत्त कर दिया, और अपमान किया तो इतना कि उसका देखना तक रवा नहीं रक्खा, उस से कई अंश अधिक मीरा को वढ़ा दिया । कोई २ हिन्दू उत्तर देते हैं कि ऐसा सव थोड़े ही करते है । मैं पूंछता हूँ कि इन मीरा के यात्रियों को कितने हिन्दुओं ने जाति से पृथक कर भ्रातृदराड दिया ? उत्तर नहीं होता है । अपनी आंख का शहतीर नहीं दृष्टि पड़ता दूसरे की फूली यां तिनके पर उंगली उठाई जाती है । कहते हैं अमुक गंगा की निन्दा करते हैं । अरे ! ज़रा शिर नीचा करके सोचो तो यह प्रकट होसकता है कि वही कितनी अधिक प्रतिष्ठा करते हैं, वह न्हाने धोने जलपान को कैसीही दशा में किसी समय में मना नहीं करते, उनका कथन है कि जहां तक सम्भव हो नित्यप्रति जल पियो स्नान करो । पूर्व ऋषि मुनि इसी के

किनारे उत्तम जलही के कारण रहते थे । सारे संसार में सब से शुद्ध पवित्र निर्मल उज्ज्वल लाभदायक जल यदि है तो यही गंगाजल है, उस के नित्य पान और स्नान से बड़े २ भयानक रोग दूर होजाते हैं । देखो प्रसिद्ध गुरुकुल कांगड़ी सभ्य पुरुषों ने इसी हेतु से गंगा के तट खोला है । तुम्हारे में और उनमें इतना भेद है कि तुम ज़बानी कहते हो, मानते नहीं । वह कहते हैं उसे करते और मानते भी हैं । तुम कहते हो कि न्हाने देखने से मुक्ति तक मिलती है, सारे पाप छूटजाते हैं, परन्तु यदि कोई तुम्हारी एक गठरी मारकर भागता है, सेंध लगाता है प्रातःजाकर गंगा स्नान कर अपना पाप दूर करदेता है, फिर भी उसे कारागार भिजवाये बिना नहीं रहते, मुक्ति की अवधि कुछ देर की भी नहीं, कल गंगा स्नान कर आया, आज कारागार जन्मक़ैद फांसी का दण्ड पाया । गंगा न्हाकर पाप नाशहोजाने के विचार से आज सैकड़ों गंगा की छातीपर जाकर मदिरापान करते, मांस मछली खाते, व्यभिचार करते, झूठ बोलते, कम तोलते, अधर्म कार्य करते हैं । क्या सच बतलाइये कि उनका भी पाप बह जावैगा, इनकार इन बातों से कोई भी कर नहीं सकता । सहस्त्रों दूकानें इसी प्रकार की हर मेले पर जाती हैं और सहस्त्रों मनुष्य इन्हीं पापों में फंसे हुए दिखलाई पड़ते हैं वह कहते हैं कि यह उत्तम जल है, इसके न्हाने पीने से आरोग्यता होती है, इसके किनारे विचरते हुए ऋषियों के उपदेश सुनकर अन्तः-करण के मल छूटजाते हैं, तदनुसार बर्तने से यथार्थ में मोक्ष प्राप्त हो सकता है क्योंकि मनुजी का अटल नुस्खा जो सृष्टि की आदि में बताया गया है वह झूठ नहीं हो सकता, न कभी निष्फल सिद्ध हो सक्ता है ।

**अद्भिर्गात्राणि शुद्ध्यन्ति मनः सत्येन शुद्ध्यति ।**
**विद्यातपोभ्यां भूतात्मा बुद्धिर्ज्ञानेन शुद्ध्यति ॥**

उन्हों ने बतलाया है कि जल से शरीर शुद्ध होता है अब आप भी घृत, मधु, तैल, दुग्ध, दधि आदि चाहे जिससे स्नान कीजिये जिस तरह जल से शुद्धि होगी वह अन्यथा नहीं, परन्तु यदि जल से आत्मा

की शुद्धि कहो तो नहीं हो सकती, उस अमूल्य नुसखे में चार औषधि हैं। यदि आप एक से ही सारे नुसखे का लाभ प्राप्त करना चाहें तो असम्भव है। दूसरी औषध में वतलाया है कि मनको सत्य से तीसरी में जीवात्मा की विद्या और तप से, चौथी में बुद्धि की ज्ञान से शुद्धि होती है।

अब सोचो तो कि यदि तुम्हारे कथनानुसार एक औषध से ही रोग निवृत्त होजाता तो कहना और सुनना तो अलग रहा जो साक्षात् गंगास्नान कर आते हैं वह तो जीवन्मुक्त दशा को प्राप्त होजाते और पुनः वह उन्हीं पापों में प्रवृत्त न पाये जाते और आपही निष्पक्ष होकर वतलाइये कि यदि कोई यह मनुका नुसखा सम्पूर्ण पान कर तदनुसार वर्तें तो क्या उस के भी अन्तःकरण मलिन और अपवित्र रह सकते हैं, कदापि नहीं। वस आप ही सोचें और विचारें जो उचित हो कीजिये।

वहिनो! इन्हों ने तुम्हें कहां तक वहकाया है कि गंगा के न्हाने और देखने से भी परे हटाया है, यही नहीं वरन् आज तुम जखैया जो भंगी है वहां जाकर शूकर कटवाती और भंगी के हाथ से उस के रक्त का टीका अपने और वच्चों के लगवाती हो। नहीं मालूम तुमने अपनी बुद्धि कहां गवाँ दी है, किंचित् तो बुद्धि से काम लो, ईश्वर का भय करो, इन सारी पूजा पगधारियों से वचो। कभी तुम यह नहीं सोचतीं कि एक स्त्री जो अपने पति के अतिरिक्त अन्य किसी के पास जाती है वह वेश्या वा व्यभिचारिणी कहलाती है, इसी प्रकार तुम एक परमेश्वर जगत्पिता नियन्ता को छोड़ कर पशु, पक्षी, पेड़, पत्थर, पीर, पैग़म्वर आदि को उस के स्थान पर पूजती फिरोगी तो क्या उस व्यभिचारिणी स्त्री के तुल्य तुम्हारी गणना न होगी? मैं तो यही कहूंगा, चाहे पुरुष हो वा नारी जो उस अद्वितीय अनुपम का साक्षी मानेगा उस के स्थान में उस के अतिरिक्त किसी अन्य को पूजेगा तो अवश्य उस की दशा उस व्यभिचारिणी के तुल्य ही होगी। इस लिये वहनो! चाहे जहां शिर मारो, विना परमेश्वर के शरण गये शान्ति कदापि

नहीं हो सकती । यदि कहो वह परमेश्वर जो निराकार अर्थात् रूप रहित है, कैसे प्राप्त हो सकता है, इस का उत्तर यह कि प्रत्येक वस्तु की प्राप्ति की रीति हुआ करती है । सुनार की दुकान पर जाकर देखा होगा तो पता लगा होगा कि बड़ी वस्तु के पकड़ने को बड़े २ चिमटे और छोटी वस्तु के पकड़ने के छोटे २ चिमटे होते हैं । यदि बड़े चिमटों से जिन से लकड़ी और कराडे पकड़ कर रखते हैं, इन से सोने के सूक्ष्म टुकड़े पकड़ना चाहें तो नहीं पकड़ सकते । इस लिये उस सूक्ष्म से सूक्ष्म परमात्मा को इन स्थूल आंखों से देखना चाहो तो नहीं देख सकतीं । नेत्रों से अति दूर अति निकट वा जो वस्तु उस के भीतर आजावे वह नहीं दीखती । जैसे आंख के पास लगा हुआ तिनका उस में डाला हुआ सुरमा नहीं दिखाई देता । यदि कहो कि जब आईना ( दर्पण ) सामने आता है तब तो दिखाई पड़ता है । मैं कहूंगा हां परन्तु आईना मैला हो वा स्थिर न हो तब भी दिखाई नहीं देता यह दर्पण स्थूल पदार्थों के देखने के लिये है तो परमात्मा जैसे अति सूक्ष्म के देखने के लिय यथार्थ ज्ञान और निर्मल बुद्धि के दर्पण की आवश्यकता है जिस से वह जाना जा सकता है । जैसे धूप में अग्नि है, परन्तु जब तक आतिशी शीशा धूप में न लाया जावे, नहीं मिल सकती, या जैसे लकड़ी से आग, तिलों से तल, दही से घी बिना रगड़े—पेले बिलोये हाथ नहीं आता, इसी तरह जैसी २ विद्या सत्संग से शिक्षा ग्रहण करती, मन आत्मा पवित्र बनाती जावोगी, उतनी ही धीरे २ परमात्मा की प्राप्ति होती जावेगी । इस पर भी प्रश्न होता है कि मन बिना किसी पदार्थ के सामने रक्खे हुवे कैसे स्थिर हो सकता है ? निराकार परमात्मा में तो किसी तरह स्थिर हो ही नहीं सकता । उन्हें जानना चाहिये कि मन जैसे चंचल है ज़रा देर में कलकत्ता, बनारस, लराडन, पहुँच जाता है वह परिमित ( किंचित ) वस्तु के सामने रख लेने से कदापि रुक वा ठहर नहीं सकता, उस के स्थिर एकाग्र करने के लिये तो उस की तरह लामहदूद ( अपरिमित ) वस्तु की आवश्यकता है । जहां वह चाहे जैसी कूद फांद लगावे पर उस का अन्त नहीं पा सकने से अन्त को स्वयम् ही स्थिर हो जावेगा । इस पर

भी प्रश्न उठाते हैं कि बहुधा सन्ध्या पर बैठते हैं, परन्तु मन स्थिर नहीं होता; न ध्यान लगता है । प्यारे बहिन भाइयो ! एक मनुष्य ने एक अक्षर पढ़ा नहीं । वह मिडिल बी. ए. का पाठ पढ़ना चाहे तो कैसे पढ़ सकता है । बड़ी ऊँची छतपर बिना जीना ( सीढ़ी ) के कैसे चढ़ सकता है । इसी तरह अष्टांग योग के नीचे के छः दर्जे यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा किया नहीं । सातवां दर्जा जो ध्यान है कैसे हो सकता है ? पहिलाही दर्जा यम कितना कठिन और मुशकिल है । १–अहिंसा, २—सत्य, ३—अस्तेय, ४—ब्रह्मचर्य, ५-अपरिग्रह यम कहाते हैं । इन का पालन किया नहीं सातवां दर्जा जो ध्यान है कैसे हो सकता है । इस लिये प्रथम ईर्ष्या, द्वेष, छल, कपटादि से मन पवित्र करो । यम नियमादि का पालन करो फिर देखो कि ध्यान होता है वा नहीं ।

## ❁ चुटिया शिखा ❁

बहुधा स्त्रियां हिन्दुओं के उस निशान को जिस की वजह हिन्दू कहलाते हैं अर्थात् शिखा और सूत्र चोटी और यज्ञोपवीत इन में से यज्ञोपवीत तो सैकड़ों क्षत्रिय, वैश्य तक नहीं पहिनते । जब से जनेऊ उन के उतरवाये गये वा उन्हों ने कुकर्मों में प्रवृत्त होकर आप उतार कर रख दिये, वैसे ही नहीं पहिनते हैं । शूद्रों की भांति जनेऊ से नंगे शरीर दिखलाई पड़ते हैं । स्त्रियों के तो आम तौर पर पुरुषों ने उतार लिये, उन्हें नितान्त ही वंचित कर दिया । जनेऊ के नाम का चिन्हही मेट दिया । यदि ऐसा जनेऊ बच्चे वाली स्त्री के दूध पिलाते समय कुछ बाधक होता तो गले में सोने, चांदी आदि का ही कुछ चिन्हार्थ होना चाहिये था, एक शिखा का चिन्ह शेष बचा था वह आज यह मूर्ख गंवार बुद्धिहीन स्त्रियां अपने बच्चों के जिलाने के निमित्त चुटिया को क़बरों, मदारों में लेजाकर मुड़वाती फिरती हैं । उनके पुरुष भी जानते हैं, पंडित पुरोहित को भी ख़बर है कोई चूं तक नहीं करता । करें कैसे पंडित जी साहब की भी तो लुगाई चुटिया दूर करारही है ! अब पंडित जी बतावें कि यह कितनी

पुरानी और कैसी किस वेद और शास्त्रानुसार बड़ों की रीति है। कोई बिरादरी वाला उन हिन्दुओं को जो अपने धर्म का चिन्ह चुटिया तक मुण्डवाये, बिरादरी से अलग नहीं करता। हाय शोक! आज खुशी २ चुटिया मुड़वाई जावे और फिर हिन्दुओं का यह दावा है कि हम अभी धर्म से पतित नहीं हुये। इधर १-फूक डालना, २-थुकवाना उधर ३--चुटिया तक दूर करना। सच तो यह है कि यह खास ही हिन्दू बन गये। यथा नाम तथा गुणः।

कवित्त।

**कोई पीरन जात फकीरन मानत कोई कबरन पर वस्त्र उढ़ावहीं। कोई निरदई जिंदई पूजती हैं कलुआ के ढिंगे बकरा को चढ़ावहीं॥ जौन शिखा रहिधर्म निमित्त सो तौन मदारन माहिं मुड़ावहीं। भारत भगिनी ठगिनी भई निज सीस पै आपही पाप चढ़ावहीं॥**

## भूत चुड़ैल क्या है? और किन पर आता है?

भूत बीते हुए काल को और चुड़ैल कुमार्गी स्त्री को कहते हैं। इस के अतिरिक्त और भूत चुड़ैल अलग कोई वस्तु नहीं है, न किसी ने आज पर्यन्त देखा है, परन्तु जहां इन कपटी छली पुरुषों पर जखइया आदि आते हैं उसी तरह भ्रष्टाचारी स्त्रियों पर भूत चुड़ैल खेलते हैं, जो उन की मूर्खता का परिचय दे रहा है। बहुधा मूर्ख न्यून बुद्धि वाले पुरुष भी उनके दम झांसे में फँसकर मारे मारे फिरते हैं। मैं आप को इस का मूल तत्व बताता हूं कि इस का कहां से आरम्भ हुआ एक पुरुष परदेश गया था। दश बारह वर्ष तक उस को वहां ठहरना पड़ा विना स्त्री के निर्बाह न कर सका। काम से पीड़ित होकर एक दुराचारिणी स्त्री से उस का मेल हो गया, उस को घर बिठला लिया, उसके एक दो बच्चे भी उत्पन्न हो गये। कुछ समय पश्चात् वह उसे बच्चों

सहित छोड़ कर चली गई तव वह पुरुष बच्चों सहित निवास स्थान को आया और घर आकर अपने इस कलंक मिटाने के हेतु से कि एक स्त्री विवाहिता के होते हुए दूसरी से स्त्री व्रत त्यागकर किस प्रकार मन डिगाया, कुछ बात वनाई। कुछ सत्य की भी आड़ ली। कहा कि जव से मैं घर से गया, दो एक वर्ष तो अच्छा रहा पश्चात् एक चुड़ैल ( वही दुष्ट स्त्री ) मुझे आकर रातांने लगी और वह समय कुसमय आकर जगा दिया करती थी, अन्त को मैंने एक दिन उस का डुपट्टा ( चीर ) उतार लिया तव से वह वहीं रहने लगी, यहां तक कि उस के दो संतानें हुई जो यह मेरे साथ हैं। एक दिन वह डुपट्टा लेकर चली गई, फिर नहीं आई यह दोनों उसी के वच्चे हैं, उस स्त्री के पैर फिरे हुए थे जैसे कि वहुधा स्त्रियों के होते हैं। पूछा वा विना पूछे ही वता दिया कि पैर उस के पीछे की ओर थे। वह सत्य का समय था सच्चे पुरुष प्रायः सीधे सादे होते हैं उन्हें अधिक छल कपट नहीं आता, सत्य मान गये, उस ने भी सत्य ही कहा था, चुड़ैल कहते हैं कुरूप ( कुमार्गी ) व्यभिचारिणी स्त्री को और ऐसी स्त्रियां असमय आती ही हैं। उस की ओढ़नी से उस समय जव अधिक हेल मेल हो गया होगा उतारली होगी और उस ने उस दिन से जो चोरी छिपा आया करती थी, अपने घर का जाना त्याग दिया होगा। यह भी आप जानते हैं कि ऐसी स्त्रियों का जव अधिक काललक रहने वसने से निरादर होने लगता है या उन्हें उस से भी चोखा अन्य कोई स्थान प्राप्त होजाता है तो उस के साथ चली जाती हैं। वह अपने कपड़े लत्ते डुपट्टा आदि लेकर चली गई होगी और वच्चों को उसी पुरुष के निकट छोड़ा होगा। उस ने कहा कुछ, लोग समझे कुछ, नई वात थी, स्त्रियों में खिचड़ी पककर एक दूसरे से प्रसिद्ध हो गई। सोचने समझनेवाले कम, विश्वास करने वाले अधिक कुछ का कुछ समझ वैठे जैसे कि और सैकड़ों वातें एक दूसरे से सुन, कर विना विचारे हुए आज करने लग जाते हैं। उदाहरण के लिये देखलो जैसे किसी पंडित ने कहा कि शेष के ऊपर पृथिवी है। अधिक सराहना नहीं हुई, वह समझे वैठे थे कि शेष के अर्थ सर्प के हैं। वस जान

लिया कि सांप पर पृथिवी है । यह न समझे कि सांप किस पर है । शेष के अर्थ परमात्मा के थे जो प्रलय में भी बाकी रहता है उसी के आधार पृथ्वी है । यह न जानकर धोका खागये, व उक्षा के अर्थ सूर्य की आकर्षण शक्ति और बैल के हैं बताया कि उक्षा के आधीन पृथ्वी है। आप समझ बैठे थे कि बैल के ऊपर पृथ्वी है । यह न जाना कि इतनी बड़ी पृथ्वी बैल और सांप किस तरह सम्हार सकता है और बैल किस पर है और यह सूक्ष्म बात थी कि सूर्य की आकर्षणशक्ति से पृथ्वी रुकी हुई है । धोका खागये, प्रत्येक भाषा में मुख्य कर संस्कृत में तो जरासे ह्रस्व दीर्घ उदात्त अनुदात्त के साथ उच्चारण और किंचित् समास आदि उलट फेर बदलजाने से अर्थ और का और ही हो जाता है ( मद्याज परमागताः ) मेरी पूजा करनेवाला परमगति पाता है । उस का खींचतान यह अर्थ किया-मद्य अजपरमगतः शराब पीनेवाला बकरा खानेवाला परमगति पाता है । भाषा में भी बहुत कुछ अन्तर हो जाता है । 'रोटी खाई' और अर्थ ज़रा बढ़ा कर बोलने से 'रोटी खाई' और अर्थ बदल जाता है । पहिले का अर्थ मैंने रोटी खाई । दूसरे का क्या तुमने रोटी खाई है, हो जाता है ।

बस ऐसे ही कुछ का कुछ जानकर चुड़ैल भी समझ गये । इस लिये वास्तव में दुष्ट स्त्रियों के अतिरिक्त और कोई भी चुड़ैल नहीं है और नित्यप्रति जब पुरुष अपनी या अन्य स्त्री पर क्रोधित होते हैं अथवा स्त्री अपनी या किसी अन्य स्त्री से लड़ती है तब चुड़ैल का शब्द उच्चारण करती है । इस लिये जिन स्त्रियों पर चुड़ैल आती है वह आप ही वास्तव में चुड़ैल हुआ करती हैं । ऐसी स्त्रियों की जहां नौते स्यानों से अधिक पूछ गछ होती है, उन्हें सच्चा समझा जाता है वहां उन की दिन द्विगुणी रात चौगुनी और जब तक उन के अनुकूल कार्य नहीं हो जाता जिस के लिये उन पर चुड़ैल आई थी तब तक नहीं उतरती और जहां उन की बात की ओर नहीं ध्यान दिया जाता उन की रुचि के विरुद्ध कार्य किया जाता है वहां वह झट विदा हो जाती है । जहां मिर्चों का

फज़ीता बनाकर नाक में चढ़ाने का नाम लिया कि अबगई अब भागी की आवाज़ आने लगती है। सोचने का स्थान है कि जब कोई दूसरा पुरुष उस के ऊपर आता है तौ जो वात उससे पूंछी जाती है, वह अपने मुँह से क्यों उत्तर देती है, वह क्यों अलग से उत्तर नहीं देता। यदि वह अनपढ़ है और उसपर आया हुआ विद्वान् ब्राह्मण राक्षस जिन्न आदि है तौ वह क्यों अंगरेज़ी, फ़ारसी, संस्कृत, अर्बी में वात नहीं करता? क्यों तोते, मैना, गधे सियार की बोली नहीं बोलता। क्यों उसी भाषा में जिस में वह स्त्री बात चीत करती है, वह भी बात करने लगता है। आप निश्चय जानें कि कभी भी किसी भली और सभ्य योग्य स्त्री पर चुड़ैल नहीं आती। जो उसे नहीं मानते उनकी स्त्रियों पर आती ही नहीं और जो उस के हाथ जोड़े रहते हैं, उन्हीं को हर प्रकार दिक करती हैं।

प्यारे स्त्री पुरुषो! सबसे सरल उपाय उस से बचने का यही है कि तुम उनका मानना और आये हुओं का जो झूठा प्रपंच रचा है, हाथ जोड़ना छोड़दो, जिस से सारी आपत्तियें तुम्हारे शिर से दूर होजावें। अब जान लीजिये कि भूत चुड़ैल आती किसपर हैं? (१) जिन स्त्रियों की आयु अधिक हैं और पति बच्चा है। (२) पति बूढ़ा व नपुंसक है। (३) जिनका पति प्यार नहीं करता। (४) जिनका पति व्यभिचारी कुमार्गी है। (५) पति परदेश में रहता है। (६) स्त्री विधवा युवती है। (७) जिस के सन्तान नहीं। (८) जिन्हें भोजनों तक का दुःख है। (९) जिन के सास श्वशुर दुःख देते रहते हैं। (१०) जो मैके में रहना चाहती है, सुसरेवाले जाने नहीं देते। (११) जिसकी मैके में आंख लगी है। (१२) जो स्वतः दुष्ट व्यभिचारिणी है।

हमारे भोले भाई जब किसी धूर्त स्त्री पर भूत चुड़ैल आती है तौ नौते सियानों से निवेदन करते फिरते हैं। उस के तत्व मर्म पर ध्यान नहीं देते उन में से कोई २ स्त्रिया तो ऐसा पाखण्ड रचती हैं कि कुछ कहा नहीं जाता। एक स्त्री जो प्रथम श्रेणी की धूर्त थी, जब खेलती

थी, मुंह से रक्त छटांक आधी छटांक निकाल देती थी । मनुष्य हैरान थे, अन्त में पता लगाने पर विदित होगया कि यह कांच की चूड़ी को फोड़, महीन कर, मिठाई में मिलाकर खालेती है और ऊपर की हिचकी लेकर भीतर घाव होजाने से लोहू निकालती और अपना विश्वास जमाती है । आप महापुरुषों से छिपा नहीं है कि इसी तरह बहुधा नीचे श्रेणी की मूर्ख लुगाइयों पर देवी आया करती हैं, परन्तु शोक है कि उसी के सम्मुख बड़े २ उच्च घरों भले पुरुषों की लुगाइयां हाथ जोड़कर खड़ी होकर पूछती हैं कि हमारे लड़के की नौकरी कब होगी ? वह उत्तर देती है कि वह तो बड़ा धूर्त दुष्ट है । कोई पूछती हैं कि अमुक के सन्तान क्यों नहीं होती ? वह कह देती है कि उस के ऊपर उसका ससुर आता है, वह गर्भपात कर देता है । ऐसे ही अनुचित बातें करलीं और अपनी पूजा चढ़वाती हैं परन्तु वह कदापि अपने विश्वास को उस कपटिन की ओर से नहीं हटातीं । उसकी बातों को नितान्त सत्य जानती हैं । वह तो बेचारी मूर्ख अनपढ़ स्त्रियां हैं । आज तो बड़े २ पढ़े लिखे बड़े २ मुकद्दमा लड़ानेवाले बाल की खाल निकालने वाले अपने को चतुर चलते पुर्जे कहलानेवाले इन मक्कार छली कपटी पुरुषों क धोखे में आजाते हैं और वह बड़े २ पढ़ेलिखों को धोखा दे दिया करते हैं । एक मौलवी साहिब की कहानी है कि उन्हों ने प्रसिद्ध कर रक्खा था कि मुझे फ़रिश्ते दिखाई देते हैं वा जिन्न मेरे मिलने को आया करते हैं । मुसल्मानों के यहां यह बात प्रसिद्ध है कि फ़रिश्ते नूरी होते हैं । मौलवी साहब ने कह रक्खा था कि मैं किसी दिन फ़रिश्ता दिखला भी सकता हूं । एक दिन श्रावण भादों के मास में जब कि बादल घिरे हुए थे खूब अन्धेरी रात थी । शफ़ाखाने से फ़ासफ़र्स ( जो दियासलाई के शिर पर लगा होता है और जिसको अन्धेरे में यदि हाथ पर रगड़े तो प्रकाश दीख पड़ता है ) लाकर एक पुरुष को दो मुद्रा दे उस के सम्पूर्ण शरीर पर लगा बस्ती से बाहिर तकिये में एक क़बर पर बिठा आये और जिन से कहा था उन्हें लेगये । दूर से दिखलाया कि देखो वह फ़रिश्ता बैठा हुआ है । लोग देखकर चकित और हैचक होगये ।

अब क्या था, मौलवी साहिब की प्रशंसा की चहुँ ओर धूम मचगई और मौलवी भी अपनी शेखी बघारते यह न समझे कि सारी शेखी थोड़े काल में किरकिरी होने वाली है । गो बात बनाने वाले ग़ज़ब के पुतले होते हैं, परन्तु "ताड़ जाते हैं ताड़ने वाले" साथी भी मौलवी साहिब को बड़ा ही कामिल पहुंचा हुआ बताते थे तौ भी मौलवी साहिब आगे बढ़ने निकट जाने को बार २ रोकते जाते थे । चोर की डाढ़ी में तिनका की मसल प्रसिद्ध है । पाप कर्म लज्जा शंका से खाली नहीं होता । एक ने ताड़ा कि कुछ दाल में काला है, वह बड़ा ही दिलेर और बलिष्ट आत्मा था ।

उस ने कहा कि कुछ ही हो, मैं तो निकट से ही जाकर देखूंगा, बहुत होगा कि जान जावेगी, इस की कुछ चिन्ता नहीं, एक दिन अवश्य मरना है जब एक ने साहस किया और भी उस के पीछे चल दिये सत्य है "किंदूरं व्यवसायिनाम्" साहस करने वाले से कुछ दूर नहीं है ।

जब उस की ओर लोग बढ़े, वह वहां से उठकर भागा और एक जगह जाकर पकड़ा गया और पहिचाना गया कि यह तो अमुक मनुष्य है । पूछा कि अरे तू यहां कैसे आया और यह क्या शरीर में लगाया ? कहा मुझे मौलवी साहिब दो रुपया देकर और कुछ शरीर में लगाकर बिठला गये थे । मैं नहीं जानता कि क्या वस्तु है । जिस से उन की सारी मक्कारी और फ़रिश्तों से मुलाक़ात और जिन्नों पर काबू रखने का भेद सब पर खुल गया । एक और मेरे मित्र बहुधा जाकर चुड़ैल उतारते और गण्डा तावीज़ करते थे । मैं ने उन से कहा कि यह क्यों मक्र करते हो । कहने लगे मित्र ! तुम तो जानते ही हो कि यह सब झूंठा रागमाला है । परन्तु मेरी इस कारण से उस मुहल्ले में बड़ी प्रतिष्ठा है लोग आते जाते रहते हैं बहुत से काम निकलते हैं, मेरी हानि क्या है मैंने निवेदन भी कर दिया कि जब इसके बदले में परमात्मा के सामने मुँह काला होगा तो क्या उत्तर होगा क्या नहीं जानते ? "कुलूख अंदा

जरा पादाश संगस्त" अर्थ--ढेले मारने वाले को पलटे में पत्थर खाना पड़ता है तब बात टाल दी । जब पढ़े लिखों का यह हाल है तो इन मूर्ख स्त्रियों का कहना ही क्या है जिन को कभी बतलाया समझाया ही नहीं गया । यही कारण है कि आज घर २ में ढोंग रचे जाते हैं नौते सियाने आकर खेलते हैं, उन की जो प्रतिष्ठा होती है, उतनी मेरे ध्यान में बड़े से बड़े नातेदार मान्य की तो होती नहीं । सारे घर वाले उस का मुँह ताकते हैं । जहां उस ने खेल कर कहा कि "ला सवा मन रोट और लाल लँगोट" कहा बहुत अच्छा । कहा लाओ मुर्गा, बकरा, तुरन्त उपस्थित किया गया । मेरे निवास स्थान में ही एक पंडित जी के जो सन्तान उत्पन्न होती थी, वह मर जाती थी । उन के यहां बहुधा नौते सियाने खेलते रहते थे । एक दिन बहुत से नौते जमा हुये । पहिले एक नौता खेला, उस ने बतलाया कि मैं अमुक हूं । जो उन पंडित जी के पिता का नाम था । मेरी यह पूजा होना चाहिये, वह होना चाहिये मैं ही सन्तान जीवित नहीं रहने देता, मैं ब्रह्मराक्षस हूं । वह खेलता ही था कि एक दूसरा नौता खेलने लगा । अपने को कलुआपीर आदि कोई अन्य बताकर उस पहले की चुटिया पकड़ कर⋯ ⋯लगाना प्रारम्भ करदी कि बस तेरा ही इस के यहां फ़िसाद है । बहुत मनुष्य देखने वाले थे वह और पण्डित जी यह सब बातें देखते व सुनते रहे और नितान्त सत्य समझते रहे और पिता की यह अप्रतिष्ठा होते हुए देख कर भी न लजाये, जो श्राद्ध हो रहा था । एक दूसरे अपने को पण्डित कहलाने वाले जब कि एक साल अकाल वा मरी के दिन थे, मेरे एक मित्र से बैठे हुए कहने लगे कि कहो तो दो चार रुपये अभी कमालें और तुम यहीं बैठे हुए देखते रहो । यह कहकर झट खेलने लगे । अब क्या था, थोड़े ही काल में बड़ी भीड़ एकत्रित हो गई कि अमुक पण्डित पर देवी आगई । अब बड़े २ घरों से सीधा, भेंट आने लगीं । देखते २ बहुतसा आंटा और धन इकट्ठा हो गया । इस प्रकार के नौते स्याने देहात ( गांवों ) में बड़ा अन्याय करते हैं । वहां यह अपना ही राज्य समझते हैं । गांव निवासी प्रत्येक रोग में चाल समझ कर औषधि न करा

के बहुत हानि उठाते हैं। हां कभी २ स्त्री पुरुष धोके से डर जाते हैं जिस से पसीना बहुतायत से आने लगता है और ज्वर भी आजाता है परन्तु बकने नहीं लगते। हां एक ज्वर भी ऐसा होता है जिस में अंड बंड कुछ का कुछ बकने लगता है किन्तु यह नहीं कि कहे कि मैं अमुक हूँ, इस पर आया हूँ, ऐसा कर सकता हूं। बुद्धिमान रोगी और बने हुवे की उस की बातों को और ढंगों से परीक्षा कर लेते हैं। जो बुद्धि से काम नहीं लेते, परमेश्वर के दिये हुए दानों में सर्वोपरि उत्तम दान बुद्धि को रद्दी और निकम्मी समझ कर हर बात को बिना विचारे सच्ची मान लेते हैं, वह अवश्य धोखा खाते हैं। एक पुरुष ने आकर कह दिया कि अमुक वृक्षपर ब्रह्मराक्षस है यदि कोई निडर हुआ उसने कहा कि मैं अमुक स्थान पर अमुक समय जाकर अमुक काम कर आऊंगा तो छली प्रथमही से वहां पहुँचकर पेड़ पर चढ़कर उसे हिलाते वा डाली तोड़कर फेंकते हैं कभी ढेला फेंककर कभी कम्मल लटकाकर धोका दे डराते हैं। कभी ऐसा भी अवसर पड़ जाता है कि वह स्वतः ही डर जाता है। एक बार एक मनुष्य आधीरात्रि के समय श्मशान भूमि में कील गाड़ने गया। संयोग से गाड़ते समय उस के अंगर्खे का पल्ला कील के नीचे दब गया। जब उठा तो वह संस्कार जो सुना सुनाया उस के मन में जमा था समझा कि गो मैं नहीं मानता था पर यथार्थ में सत्य था। मेरा पल्लू भूत ने ही पकड़ लिया! यह घबराकर भागा। उस भय से भयभीत होकर बहुत काल तक रोगी रहा। तात्पर्य यह है कि तुम स्वप्न में भी भूत चुड़ैल के भाव का ध्यान न करो वास्तव में यह कोई वस्तु नहीं है। न यह किसी को कुछ हानि लाभ पहुंचा सकती है परन्तु तुम रात्रि में कभी भी किसी के हठ से भी कहीं न जाओ क्योंकि रात्रि में कुछ का कुछ प्रतीत होजाता है। संभव है कि उन कपटियों के धोखे में आजाओ। इस लिये उन से कहदो कि दिन में क्या उस स्थान का रहनेवाला शक्ति हीन होजाता वा देह त्याग जाता है। परीक्षा करना हो तो इन नौते स्थानों की इस ढंग पर करलो कि जब तुम्हारा वा किसी का बच्चा आरोग्य हो, शिर दर्द तक न हो, उन्हें बुलाकर पूछो, फिर देखो वह वही पूजा और चाल बताते हैं

वा नहीं। इस लिये सदा परमेश्वर पर विश्वास कर के इन पाखण्डियों की बातों से बचो।

नोट—फासफरस का ऊपर वर्णन आगया है इस से उसका जान लेना तुम्हें लाभदायक होगा। यह फासफरस हड्डियों से निकलता है। श्मशान भूमि में जहां मुर्दे जलाये जाते हैं वहां अन्धेरी रात्रि में हवा से उड़ता हुआ चमकता हुआ दिखाई पड़ता है जिसे धोखे से मूर्ख जन भूत चुड़ैल कहते हैं। उसी ख्याल से डर जाते हैं। यथार्थ में वह हड्डियों से निकली हुई वस्तु है। जो लाल पीली दो प्रकार की होती है और वही दियासलाई के सिरे पर लगाई जाती है।

## ❀ प्राचीन व वर्त्तमान सती ❀

प्राचीन समय में जो स्त्रियां सत्यव्रत धारण करती थीं, पतिव्रत रहती थीं मन वचन कर्म से सत्य २ व्यवहार करती थीं वह सती कहलाती थीं जैसे कि सीता सती और सतवन्ती नारी कहलाई। कैलास के राजा शिव जी की स्त्री का नाम भी सती था। जैसा कि:—

## ❀ सती ❀

यह महारानी शिवजी कैलास के राजा को व्याही थीं। यह संसार से विरक्त होकर योगियों की भांति गुदड़ी आदि धारण किये बहुत हर्ष के साथ पति सेवा व योग तप उपासना में बसर करती थीं। इनका ऐसी दशा से रहना उन के पिता दक्ष को अति अनुचित और बुरा मालूम होता था और एक स्थान में शिवजी उनकी प्रतिष्ठार्थ नहीं उठे थे इस कारण से भी वह बहुत अप्रसन्न था। इस लिये उसने अपने यज्ञ में निमंत्रण नहीं दिया और न बुलाया था परन्तु सती को किसी विश्वास पात्र मनुष्य से यज्ञ की सूचना मिलगई। माता पिता का प्रेम उमड़ आने के कारण उन के दर्शनार्थ जाने के लिये अपने पति से आज्ञा चाही। शिव जी ने मना किया कि देखो प्रायः धन दौलत का चमत्कार मनुष्य

की आंखें चौंधिया देता है उस की ऐश में डूब कर मनुष्य मनुष्यता से गिर जाता है वह मनुष्य के गुण अवगुण योग्यता सभ्यता पर ध्यान नहीं देता वरन् अपने जैसों ही को प्रतिष्ठा की दृष्टि से देखता है इस लिये वह तुम्हें ऐसे मलीन वस्त्र धारण किये हुये देख कर कब प्रसन्न होंगे न जाने मेरे वास्ते क्या २ कुवाक्य कहे जावें और तुम्हारा अपमान किया जावे। यदि उन्हें बुलाना होता तौ क्यों न बुलाते विना बुलाये जाना अयोग्य है। तब सती ने निवेदन किया कि मैंने बहुत काल से उन के दर्शन नहीं किये हैं यदि आप हर्ष पूर्वक आज्ञा दें तो समय अच्छा है। दर्शन कर आऊँ। तब शिव जीने कहा जाओ शीघ्र लौट आना। इतना कह अपने सेवक को साथ किया। जब यह यज्ञ में पहुँचीं पिता ने क्रोधातुर हो बहुत कुछ अनुचित बातें इन को और इन के प्राण प्रिय पति शिव को कहीं, यह भी कहा कि तू विना बुलाये क्यों आई क्यों न मर गई। सतीने दो तीन बार समझाया कि आप मुझे जो चाहें सो कहें पर मेरे पति को आप कुछ न कहें। मुझे कोई दुःख नहीं है सर्व आनन्द है मेरे पति बड़े ही योग्य धर्मात्मा हैं मुझे उन का कोई गिला (शिकायत) नहीं है मेरा आत्मा अति प्रसन्न है पति की बुराई मुझ से सुनी नहीं जाती। सारे सभासदों के ध्यान को अपने ओर आकर्षित कर प्रार्थना की कि आप इन्हें समझा दीजिये परन्तु उस ने न माना। तब सती ने कहा कि मैंने अपने पति के समझाने को न माना था उस का फल पाया मुझे उस का दण्ड मिलना चाहिये अब किस प्रकार जा कर उन्हें मुँह दिखाऊंगी इस लिये उस ने पति के विषय में अनुचित शब्द सुनना स्वीकार न कर अपनेतईं यज्ञ में डालकर क्षणमात्र में भस्म कर दिया, संसार को शिक्षा दी कि विना बुलाये कभी माता पिता के यहां भी न जाओ और पति की बुराई तक न सुनो चाहे प्राण गँवा दो। सती ने अपना सती नाम सत्य करके इस संसार को दिखा दिया शिव के साथ नहीं जली थी। आज प्राणत्याग देना स्वयं घात करना जो महापाप है उसे सती होना बताया जाता है। बहिनो! क्या सीता पति के साथ जली थी, उभयभारती आदि बहुत सी स्त्रियां पूर्व समय में

सती कहलाईं और यदि प्राण त्याग देना ही सती होना है तौ आज बहुत सी स्त्रियां मूर्खता क्रोध से जो पति पुत्र से लड़कर कुआं बावली में गिर पड़तीं वा विष खाकर और फांसी लगाकर प्राण त्याग देती हैं, क्यों न सती कही जावें । जब इस प्रकार प्राण खोना सती होना नहीं कहाता तौ अग्नि में जल जाना सती होना क्यों कहाता है ? जरा न्याय और विचार दृष्टि से देखो । एक वह जिस ने झट आग में जल कर प्राण खो दिया, सती कहलावे और एक वह स्त्री जिसने सारी आयु पवित्रता और सत्यता के साथ नाना प्रकार के कष्ट सह कर अपनी इन्द्रियों को रुला २ कर उन को वश में कर के व्यतीत की जिस ने शास्त्रानुकूल सांसारिक सुखों पर लात मार कर ऋषियों के सदृश इन्द्रिय भोगों को छोड़ कर आयु बिताई, वह सती नहीं कही जावे यदि यही ठीक है तौ पतंग के सती होने में संदेह ही क्या है ? आत्महत्या महापाप और अधर्म है, परन्तु महाकष्ट और असह्य दुःख पड़ जाने पर पापियों के अनुचित दण्ड से अपने पतिव्रत धर्म पर बट्टा आने व धब्बा लगने और कुकर्मियों के हाथ अपने पवित्र शरीर में लगने पर वा ऐसे ही किसी अन्य अवसर पर धर्म और प्राण न बचने पर इस प्रकार भी धर्म बचाना अनुचित नहीं । इस जिले शाहजहांपुर में एक गुरगांवा ग्राम है उस में एक ब्राह्मण की बहू अनेक कारणों से जलगई । कुछ वह अपने परिश्रम से जली कुछ जलादी गई । प्रसिद्ध कर दिया गया कि स्वयं उस के शरीर से अग्नि प्रज्ज्वलित हुई थी, किसी ने जलाया न था । जो प्रलय तक शुद्ध बुद्धि रखनेवाला स्वाभाविक नियम के विरुद्ध मान नहीं सकता क्योंकि परमेश्वर ने अनादि काल से जो अग्नि में दाह शक्ति रक्खी है वह प्रलय तक उस में बनी रहेगी । वह अपने नियमों को कभी तोड़ नहीं सकता, इस लिये वह न्यायी और नैयायिक कहलाता है । चाहे जैसा कोई उस का मित्र हो वा शत्रु अग्नि दोनों को जलावेगी, इसी भांति इस पृथिवीमय शरीर से स्वयं अग्नि उत्पन्न नहीं हो सकती । पृथिवीमय शरीर इस कारण कहा गया कि शरीर में और तत्वों की अपेक्षा पृथिवी का तत्व अधिक है । पुजारियों में जब यह बात अच्छे

प्रकार प्रसिद्ध होगई, लोग वहां जाने आने लगे । कई कुष्ठियों को बुलाकर भोजन खिलाने और उनका पूर्ण रीति से आदर सत्कार करने लगे और यात्रियों से कहलाने लगे कि हम ६ व ७ कुष्ठी यहां आये थे इस सती के प्रताप से दो तो नितान्त आरोग्य होकर चले गये। हमारा रोग भी घटने लगा है । जो अंग उनका आरोग्य होता उसे दिखला देते कि इसकी दया और आरोग्यता से अच्छा हुआ है । सती क्या है मानों साक्षात् भवानी है । तत्काल फल देती है फिर क्या था एक और एक ग्यारह होजाने से स्त्री पुरुषों का इतना झुकाव होने लगा कि मेला की सीमा न रही । बड़े २ दूर के यहां तक कि कलकत्ते तक से स्त्री पुरुष दर्शनार्थ आये। आज भारतवर्ष में विचार की शक्ति न रहने से यदि मूर्ख से मूर्ख भी कोई कार्य आरम्भ कर देता है मनुष्य उस के अनुसार कार्य करना आरम्भ कर देते हैं। परीक्षार्थ किसी वृक्ष पर एक कपड़े का चीर बांध दीजिये लौटने पर सैकड़ों चीरें उस में बँधी मिलेंगी। दूसरे निपट मूढ़ के कहने पर भी कुछ न कुछ स्वाभाविक कार्य होही जाते हैं। रोग से भी निवृत्त होजाते हैं । सन्तान भी उत्पन्न होती। यह किसी ने भी न समझा कि सन्तान परमेश्वर की दया से उत्पन्न हुई है। रोग और तबीयत के युद्ध होने पर तबीयत के रोग पर विजय पाने से हम या हमारे प्यारे सम्बन्धी नीरोग होगये हैं। इस पर किंचित् ध्यान नहीं, भेड़ियाधसान की भांति एक के पीछे दूसरे चल निकले। एक और मुख्य बात वहां की बतलाता हूं कि वहां पर दो नांदें उलटी हुई रक्खी हैं । एक के नीचे से यात्रियों को राख बांटी जाती है। लाखों आदमियों को बंट चुकी है परन्तु प्रसिद्ध यही किया जाता है कि यह उसी सती की राख है जितनी व्यय की जाती है उतनी ही बढ़ जाती है। इतनी तक बुद्धि न रही कि यह सदा बाहर से बढ़ाई जाती और सर्व साधारण को धोखा दिया जाता है और फिर अपना मनोरथ सिद्ध करते हैं। मानों बताशा मिठाई चढ़ जाती है। सती क्या हुई पौ बारह होगये। इस कारण तुम झूठी सतियों को त्यागकर सीता जैसी सतवन्ती नारी बनो और अपना लोक परलोक में नाम करो।

# ❀ तीर्थ ❀

## जनः येन तरति तत्तीर्थम्

जिस करके मनुष्य तर सकें अर्थात् दुःखसागर संसार से पार हो कर मुक्तिपद को पासकें उसका नाम तीर्थ है। यह भी बतलाया है कि कौन २ तीर्थ हैं।

> सत्यं तीर्थं क्षमा तीर्थं तीर्थमिन्द्रियनिग्रहः ।
> सर्वभूतदया तीर्थं सर्वत्रार्जवमेव च ॥
> दानं तीर्थं दमस्तीर्थं संतोषस्तीर्थमुच्यते ।
> ब्रह्मचर्यंपरन्तीर्थं तीर्थंच प्रियवादिता ॥

सत्य बोलना, क्षमा करना, इन्द्रियों का रोकना, दया, नम्रता, दान, मन को मारना, सन्तोष, ब्रह्मचर्य, मधुर भाषण ये तीर्थ हैं। इन के अतिरिक्त बहनों! तुम्हारे लिये सच्चे तीर्थ तुम्हारे पति हैं जिनके पूजे सुगति होती है। परन्तु तुम आज उन तीर्थों को तीर्थ न समझ कर प्रायः स्थानों को तीर्थ मानने लगीं। कोई स्थान कोई देश अपने स्वाभाविक गुणों से तीर्थ नहीं होसक्ता न कोई स्थान कभी भी स्थानीय योग्यता से तीर्थ था। किन्तु उन स्थानों में बड़े २ ऋषि मुनि महात्मा धर्मात्मा भारद्वाज, शौनक, वशिष्ठ आदि रहा करते थे। वह वहां जाने वालों को अपने सत्य और कल्याणकारी उपदेशों और ईश्वरीय ज्ञान से उन के हृदय के मलों को धो देते थे। जब ऐसा होता था उस समय वह वास्तव में तीर्थ थे। अब वह स्थान तीर्थ नहीं हैं। गृहकी शोभा गृहस्थ से होती है। आज उन स्थानों पर जाइये जहां बड़े २ हवन कुण्ड थे वहा जल भरा हुआ है। जहा ऋषि मुनि विद्यमान थे, आज भंगी चरसी भंग चर्स के स्वादों में फंस रहे हैं। जहां ऋषियों के उपदेश अन्तःकरण के मलों को शुद्ध करते थे वहां रण्डियों की तानें टूटती है। शोक कि वह महात्माओं के स्थान आज धोखेबाजों दुराचारियों के स्थान हैं। जहां नैयायिक

पदार्थवेत्ता तर्क साइन्स के सूक्ष्म विचार करते थे, जहां योगाभ्यास में स्वयं मग्न हो परमात्मा का साक्षात्कार करते थे, जिन का दया ही परम धर्म था, वहां जाकर देखो तो कपट की मूर्ति बने व्यभिचार और मांस भक्षण का उपदेश कर रहे हैं। वह कौन सी दुर्वासना दुर्घटना है जिस की वह मूर्ति दिखाई नहीं पड़ते। जितने अधिक दुर्व्यसन वहां हैं अन्य स्थानों पर दृष्टि नहीं आते। इस लिये कि उन्हें मुफ्त विना परिश्रम के माल हाथ लगता है उसे अनुचित ख़र्च (व्यय) करते हैं और धन जिस कपट छल से लोभ वश होकर यात्रियों से कमाते हैं सो छिपा नहीं है। लोभ महा रिपु सर्व पापों का मूल है इस में फंसकर वड़े २ अयोग्य कर्म मनुष्य कर वैठता है यह लोभ वड़े २ त्यागियों के चित्त को डिगा देता है। देखो एक दिन का ज़िक्र है कि राजा भर्तृहरि उस समय जव राज पाट छोड़ चुके थे एक रोज़ रात्रि के समय जव कि उजाली फैली हुई थी चले जाते थे। नदी किनारे रिपट भूमि में कोई चलता हुआ पथिक पान की पीक थूक गया था। जव कि इनकी दृष्टि उस पर पड़ी, सोचे कि यह नदी के तट लाल पड़ा हुआ है। राज के समय इसका नाम सुना था कभी प्राप्त न हुआ अव जव मैं राज छोड़ चुका तव आज यह परमेश्वर ने मेरे लिये भेजा है। झट उसकी ओर हाथ वढ़ाया जो उस पीक पर जा पड़ा तव उन्हों ने कहा है किः—

हाथी रथ घोड़ा तजे, और सखियन को साथ।<br>
धिक् मन धोके लाल के, पड़ा पीक पर हाथ॥

जव ऐसे त्यागी विद्वान् लोभ में फंस पीक पर हाथ चला वैठे तो ये विद्या से लंठ, ज्ञान से शून्य जिन्हें शरीर पालन और विषयों के आनन्द के अतिरिक्त और कोई कार्य नहीं है कैसे वच सकते हैं। इस लिये वे महापाप करते हैं। एक करेला दूसरे नीम चढ़ा। एक तो निरक्षर भट्टाचार्य द्वितीय प्रकृति के उपासक उसी के मोह स्वाद आदि में

फंसे हुये बलिदान करते २ दया धर्म से शून्य बन गये संग का प्रभाव और कर्म का संस्कार अवश्य पड़ता है । बहुत से स्थानों में जाकर देखिये बकरे भेंड़े चढ़ाये जाते हैं । पुजारी सर फड़काई और बकरा प्रतिष्ठाई आदि नामों से धन हरते और सर भेंट में ले लेते हैं । देखो काशी में जाकर गौतम बुद्ध ने पुजारियों से कहा था कि यदि कोई मनुष्य है उस में मनुष्यता का लेश मात्र भी है तो उस का कोमल मन एक हरे भरे फूल तोड़ने से दुःखित होता है परन्तु तुम जो सुकुमार बच्चों को मार २ कर भेट चढ़ा दया धर्म का नाश करते तनिक ग्लानि नहीं करते हो इसे त्याग दो, परन्तु स्वीकार नहीं किया, तबही गौतम ने इस हिंसा से बचाने के लिये प्रचार आरम्भ किया था । आज वहां जाकर देखें तो सौ में पांच नाम मात्र ईश्वर के मानने वाले मिलेंगे नहीं तो सारे के सारे ईश्वर से विमुख अहमूब्रह्म बने हुये मिलते हैं । फिर आप जान सकते हैं कि जो पाप करता है वह ईश्वर, फिर वह पाप करने से कैसे बच सकते हैं । नाम के फ़कीर परन्तु न फ़ाक़ः[1], क़नायत[2], न याद इलाही[3], न रियाज़त[4], किन्तु नित्य तर माल उड़ाते हैं । फिर इस आज़ादी के साथ कामके पंजे से कैसे बचसक्ते हैं । जब इस काम ने बड़े २ ऋषियों को सताया तो अपने को ईश्वर बताने वाले पाप कर्म कोही न माननेवाले कैसे उसके पंजे से बचसकते हैं । आज इस प्रकाश के समय में प्रत्येक तीर्थ की कलई खुल चुकी है और खुलती जाती है । यदि वर्त्तमान समय में कोई तीर्थ या कल्पवृक्ष वा कामधेनु है तो वह स्थान है जहां पर सत्य उपदेश होते, विद्वान् योग्य पण्डित अपने प्रभावशाली उपदेश सुनाते, बन्ध मोक्ष के सूक्ष्म मसलों को हल करते, हर प्रकार के सन्देहों को दूर करते प्रश्नों का उत्तर प्रीतिपूर्वक बुद्धि तर्क सहित देते, क्रोधद्वेष से वार्त्ता नहीं करते, वहां जाकर जो हम मांगें मिलसंक्ता है यहां तक कि धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष तक प्राप्त होसकते हैं जब कि हम उनके समझाये हुये उपदेशों पर कार्य करें । जहां ईश्वर प्राप्ति के लिये यम,

(१) लंघन । (२) सन्तोष । (३) ईश्वर स्मरण (४) तप ।

नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि और सच्चा ज्ञान बताया जाता है, जहां अफयून, भंग, चरस, शराव, कवाब, हुक्का, रिश्वत, जुवा, झूठ, मक्र, छल, दग़ा, वनावट, अहंकार, अभिमान छुड़ाया जाता है, वही सच्चे तीर्थ हैं और इन्हीं गुणों से सम्पन्न पहले भी तीर्थ थे।

सव से वड़े तीर्थ जगन्नाथ में कलेवर के समय जहर मिलाकर वढ़ई, राजा और पण्डा को मारा जाता था जो अव वन्द होगया है। वनारस में विश्वनाथ और अन्नपूर्णा के मन्दिरों में जो निकट हैं उनके द्वार पर लिखा है किः—

आर्येतराणां प्रवेशो निषिद्धः ।

अर्थात् आर्यों के अतिरिक्त मन्दिरों में औरों के जाने का निषेध है परन्तु वहीं वाले वतलाते थे कि वहुधा उन में चौथे पांचवें दिन नाच हुआ करता है जिस में नट, कंजर, रण्डियां, साजिन्दे, तमाशाई सभी उस में प्रवेश करते हैं और वहां से वही यात्रियों का धन उनकी भेंट होता है। जिस से वह हर प्रकार का मांस तक खाते और अननी रुचि अनुकूल कार्य करते हैं। यह भी सुना है कि वहुधा मन्दिरों के पुजारी मांस मदिरा उड़ाते और अनेक कुकर्म करते हैं जो वहीं जाने वालों या गये हुओं के मुख से प्रतीत हो सक्ता है। यह उस साइनवोर्ड की तामील होती है। काशी के विषय में यह तो प्रसिद्ध ही है कि—

रांड़ सांड़ सीढ़ी संन्यासी। इनसे बचै तो सेवै काशी ॥

जहां काशी विद्वानों पंडितों की खानि थी। सम्पूर्ण विद्याओं से सम्पन्न थी। जहां वेदशास्त्रानुकूलही कार्य होते थे। जहां पनिहारियां संस्कृत के श्लोक वनाती थीं। शोक आज उसकी यह दशा है।

अखवार तुहफ़ा हिन्द विजनौर में, जो हनुमान गढ़ी कस्वे फीरोजावाद ज़िला मैनपुरी का हाल छपा हुआ देखा था, इसे किसने नहीं देखा वा सुना होगा, जहां पुजारियों ने यात्रियों की स्त्रियों को व्यभिचार निमित्त छिपाया था और उन्हों ने वर्षों से इसी हेतु से मन्दिर में से सुरंग वना

रक्खी थी। स्त्री जो मन्दिर में जातीं, ऐसे ढंग से जिसे चाहते छिपा कर सुरंग द्वारा पहुँचा देते कि पता तक न चलता। वर्षों इसी भांति टट्टी की आड़ में शिकार खेला किये। आज परमात्मा का धन्यवाद है कि राजराजेश्वर गवर्नमेन्ट की सहायता से और उनके सराहनीय प्रबंध और विद्यादान से छल पाखण्ड टूटते जाते हैं। पुजारियों ने अपनी पुरानी आदत (स्वभाव) के अनुसार एक स्त्री को गुम किया। उस का साथी लड़का रोता चिल्लाता था। मजिस्ट्रेट जिला मिल गये, उन से बालक ने निवेदन किया। प्रथम पुलिस द्वारा ढुंढ़ाया गया पता नहीं मिला, अन्त को स्वयं उन्हों ने मन्दिर में जाकर प्रत्येक कोठा दालान को ढूंढ़ा कहीं खोज न लगा, तब कुर्सी पर मन्दिर के आंगन में बैठ गये, इधर उधर दृष्टि दी, दैव संयोग से पाप का अन्त आजाने से आंगन के पत्थरों पर दृष्टि पड़ी, एक पत्थर उभरा हुआ सा था। उठ कर कहा कि इसे हटाओ। पुजारी बहुत गिड़गिड़ाये कि हजूर यहां हनुमान का कोष है। यह बहुत पवित्र स्थान है। इस के भीतर कोई जा नहीं सकता, परन्तु कुछ पर्वाह न कर साहिब भीतर ही भीतर एक मील के लगभग चले गये, तब एक कोठी बढ़िया सजी हुई दृष्टि पड़ी, वहां पर पन्द्रह बीस सुन्दर स्त्रियां मिलीं, जिन में यह स्त्री भी थी। सब को बाहर निकाला, तब विदित हुआ कि बड़े २ घरों की स्त्रियां एक से एक सुन्दरी बरसें होगईं इसी प्रकार गुम की गई थीं और वह पुजारी उन से विषय भोग करते थे। यह एक वर्त्तमान निकट समय का उदाहरण है। पक्षपात छोड़कर तीर्थों पर जाकर कुछ दिन रहकर देखो तो आप को पता लग सकता है कि ठगने के अतिरिक्त और वहां पर क्या सच्चा उपदेश होता है? हां, चरस, भंग पीना सीखना हो वा अहम्-ब्रह्म बनकर किसी पापको पापही न जानना हो तो अवश्य जाओ, नहीं तो शान्ति के आज उन स्थानों पर दर्शन भी नहीं होते। पहुंचते ही पण्डों से कपड़े छुड़ाना कठिन हो जाता है। परमेश्वर से कोई स्थान शून्य नहीं है। वह हरजगह व्यापक, अन्तर्य्यामी रूप से भरपूर है। उसे हृदय में जानकर हर स्थान में पाप से बचने का यत्न करो, तभी शान्ति प्राप्त होगी अन्यथा कदापि नहीं।

# व्रत ।

इस के अर्थ ब्रह्मचर्य और नियम के हैं। आर्यग्रन्थों में तीन स्नातक वतलाये हैं। विद्या स्नातक, व्रतस्नातक, विद्या व्रतस्नातक। जिन का अभिप्राय यह है कि न्यून से न्यून २५ वर्ष की आयु तक विद्या पढ़े और जितेन्द्रिय रहे यह विद्यास्नातक है और जो जितेन्द्रिय रहे और विद्या न पढ़े यह व्रतस्नातक है और जो विद्या भी पढ़े और ब्रह्मचर्य भी रहे, वह विद्या व्रतस्नातक कहलाता है। जो ब्रह्मचारी है वही व्रतधारी कहलाता है। व्रत के अर्थ ब्रह्मचर्य के हैं जिसको परम तीर्थ भी ऊपर वतलाया है। जिस प्रकार सत्य तीर्थ वतलाया है उसी प्रकार सत्यव्रत भी गिनाये हैं। विशेषतः वारह व्रत भागवत में वतलाये गये हैं, लंघन करना ही व्रत नहीं है। जैसा किः—

**ज्ञानं च सत्यं च दमः श्रुतं च ह्यमात्सर्यं ह्रीस्तितिक्षानसूया।**
**यज्ञं च दानं च धृतिः क्षमा च महाव्रता द्वादश ब्राह्मणस्य॥**

अर्थात् ज्ञान, सत्य, मनको रोकना, वेद पढ़ना, अभिमान न करना, लज्जा करना, सहनशील होना, निन्दा न करना, यज्ञ करना, दान देना, धैर्य रखना, मेल वारह महाव्रत हैं। इनके करने से मनुष्य ब्राह्मण कहलाता है। यदि कोई यह कहे कि आज से हम हुक्का न पीवेंगे या मदिरा मांस का सेवन न करेंगे अथवा झूठ न बोलेंगे वा क्रोध न करेंगे या सांसारिक, पारमार्थिक कार्य जिन से शारीरिक आत्मिक लाभ हों, जैसे भोजन करने के पश्चात् पेशाव करना नित्य नियम वांधकर पढ़ना संध्या हवन आदि शुभ कार्य करने की प्रतिज्ञा करना, व्रत कहलाता है ब्रह्मचारी वेदारम्भ के समय परमात्मा से प्रार्थना करता है किः—

**अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि।**

आप हमारे व्रत अर्थात् प्रतिज्ञा की रक्षा करनेवाले हैं, आप हमारे व्रत को पूर्ण कीजिये और जो वहनो! आज तुम को व्रत वतलाये जाते

हैं, यदि हम इन्हीं को ब्रत मान लेवें तो आप जानती हैं कि कोई दिन ७ दिवस में ऐसा नहीं है जो उसी दिन के नाम से ब्रत रखने का न हो। फिर कोई तिथि ऐसी नहीं है जिस का ब्रत न हो और जन्म मरण उत्सवादि के कारण इस के अतिरिक्त और भी ब्रत हैं। इस लिये एक दिन में दो ब्रत तो अवश्य ही हैं और बहुधा तीन ब्रत भी आजावेंगे। आप किस का ब्रत रक्खेंगी ? किस देवता का मान करोगी ? और किसका अपमान ? यदि एक को बढ़ाओगी और दूसरे को घटाओगी तो तुम स्वतः उस के भय से अधमुई होजाओगी, कोई दिन तुम्हारी आयु में ऐसा न मिलेगा, जिस दिन ब्रत रक्खा जाना न बतलाया गया हो और फिर माहात्म्य प्रत्येक ब्रत का दूसरे से अधिक निराला अनोखा बढ़िया और चोखा है। दिनों के ब्रत उन के नाम से प्रसिद्ध हैं। तिथों के ब्रत सुन लीजियेः—

बूढ़ाबाबू दोयज तीज काजली हरतालि, चौथ सकट गणेश कहें पंचमी वसंत की। सूर्य चंद्र छठ, ऋषि सातें, दुर्गा आठें, देवी नवमी विजया दशमी रामचंद्र बलवंत की॥ निर्जला एकादशी बावन की द्वादशी त्रयोदशी है महेश और चतुर्दशी अनंत की। मावस दिवाली परिवा गोवर्धन, पूनो बारह संकरांत, गृह पूजा कीनी अंतकी॥

इन में से किन्हीं ब्रतों को तो स्त्रिया चाहें प्रसूता हों चाहे किसी महान कठिन रोग में ग्रस्त हों नहीं छोड़तीं। जिस के कारण इन को असाध्य रोग होजाते हैं। ब्रतों में एक तो असमय का भोजन करना वा नितान्त उपासी रहना ही आरोग्यता के विरुद्ध है। द्वितीय फलाहार घुइयां, सिंघाड़ा, गुड़ आदि पदार्थों का कराया जाता है, जिस के कारण वह बहुत शीघ्र रोगी होकर मृत्यु को प्राप्त होजाती हैं और लुटेरों की बन आती है। आप कहेंगी कि यह क्या बात है। बीमारी में दान जप कराकर लूटा जाता है मरने पर एकादशाह, द्वादशाह,

तेरहवीं, दनागत, वर्षी, चौवर्षी गया श्राद्ध वर्षों तक का माल मारने का अवसर हाथ आता है, द्वितीय यजमान का दूसरा विवाह रचाकर भी लूटते हैं और जो प्रायश्चित्त और जनेऊ के समय पर व्रत रखाये जाते हैं वह वतौर दण्ड और प्रतिष्ठा उस कार्य्य के, न इस अभिप्राय से कि एक दो दिन के उपवास से स्वर्ग प्राप्त होगा। एक बात तुम्हारे मन्तव्य के अनुकूल यह भी ध्यान के योग्य है कि शनिवार की अष्टमी का व्रत है, तिथि का देवता दुर्गा और दिन का देवता शनैश्चर है। वह समझता है कि मेरा व्रत इसने रक्खा है, वह समझता है कि मेरा सामान पूजा का भेट किया जाता है उस के ग्रहण करने पर दोनों में झगड़ा होता है। जो जीतता है वह पाता है और जो पराजित होता है वह सिवाय इस के कि जब वलवान से नहीं वन आती, निर्बल पर झाड़ बुझाई जाती है तुम्हीं पर बुझाई जावेगी। जैसे कि तुम भी पति की झाड़ बच्चों पर बुझाती हो। उस समय तुम्हारी क्या दशा होगी। तुम प्रत्येक प्रकार से निर्बल ठहरीं, इस कारण इन बातों को झूठ समझ कर कि न कोई दिन का देवता है न तिथि का, जो तुम्हें ऊपर व्रत बतलाये हैं उन्हीं का पालन करो।

## ❃ दान ❃

बहनो ! तुम्हें दान करना भी नहीं आता, यद्यपि तुम इतना दान करती हो कि जिस की सीमा नहीं तथापि वह बिलकुल अकारथ जाता है। न तो अधिकारी को मिलता न उस से कोई लौकिक पारलौकिक लाभ पहुंचता है। सन्डे मुस्टन्डे पेट भरे खा जाते हैं। लूले, लंगड़े, अपाहज, अन्धे, धुन्ध तरसते हैं। जिस प्रकार दिन में दीपक जलाना वृथा बतलाया है उसी प्रकार पेट भरे को खिलाना और समर्थ को दान देने का निषेध किया है। देश, काल, पात्र को दान देते समय ध्यान रखना योग्य है। वर्त्तमान समय में उन लोगों को दान दिया जाता है जिन्हें प्रथम से जानते हैं, जिन से अपने चार काम निकलते हैं। झूठी गवाहियां दिलवाते हैं। परन्तु निष्काम दान की प्रशंसा में

बतलाया था "लक्षंविहायदातव्यम्" पहचाने हुवे को छोड़ कर दान देवे। निष्काम दान का अधिक माहात्म्य बतलाया था। यह दान वह है जिससे सर्वसाधारण को लाभ पहुंचे। जैसे कुँवा, बावली, पुल, सराय बनवाना, गुरुकुल, अनाथालय, पाठशाला जारी करना। यह नहीं कि सैकड़ों रुपये की बखेर करना या ऐसे कार्यों में लगाना कि जिससे रुपयों की कौड़ियां हो जावें। विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति देकर पण्डित बना देना अच्छा है या उन को मरणपर्यन्त भोजन कराना जैसे कि एक अन्धे की आंख बना देना अधिक लाभदायक है इसकी अपेक्षा कि उसको बहुत काल तक भोजन खिलाया जावे। इस लिये विद्या का दान सम्पूर्ण दानों में श्रेष्ठ है। तुम सारे दान इसी हेतु करती हो कि तुम को मरने के पश्चात् द्वितीय जन्म में वही वस्तु प्राप्त हो। आप सारे संसार के अमूल्य पदार्थ हाथी, रथ, माल, भूषण, वस्त्र, मक्खन, मलाई लड्डू, पूरी, कचौरी सब दान दें। सम्भव है कि दूसरे जन्म में कुतिया बन सम्पूर्ण वही सामान प्राप्त करें। क्या आपने नहीं देखा कि अमीरों के कुत्ते, कुतिया, हाथी, बग्घियों में चलते, हलुवा, पूरी, मक्खन, मलाई खाते गहने पाते, बढ़िया झूलें पहनते हैं। एक विद्यादानही सर्वोपरि ऐसा उच्च दान है कि जिसको करके मनुष्य फिर मनुष्य ही बनता है विद्या मनुष्य के अतिरिक्त और को नहीं आसक्ती। उपर्युक्त कार्यों में सामान्य रीति से और गुरुकुल पाठशालाओं में विशेषकर दान दिया करो। या धन स्त्री सुधार में व्यय करो। विरुद्ध इसके बतलाया है कि:—

यथाप्लवेनौपलेन निमज्जत्युदकेतरन्।
तथानिमज्जतोधस्तादज्ञौदातृप्रतीच्छकौ॥

जैसे पत्थर की नाव पर बैठ कर तैरनेवाला नाव सहित डूब जाता है उसी प्रकार अज्ञानी मूर्ख को दान देने से दाता और लेनेवाला दोनों डूब जाते हैं। प्यारी बहनो! विचार करो तुम्हें अर्धांगी बतलाकर स्त्री पुरुषों के परस्पर एक समान अधिकार बतलाये हैं परन्तु स्वार्थी तुम्हारा

तक दान कराने लगे जो अनुचित है । प्रथम तो दान के विषय में प्रसिद्ध है कि दान देकर लौटा लेने से नरकगामी होता है । परन्तु तुम को दान देकर लौटा लिया जाता है । लौटाने पर मूल्य तै होने पर झगड़ा होते हैं कभी २ तो दूसरे तीसरे दिन लौटारते हैं । यदि यह कहा जावे कि पुरुष अभिलाषी है कि यही स्त्री दूसरे जन्म में मुझ को मिले, तो क्या स्त्री पुरुष का मिलना नहीं चाहती । स्त्री पुरुष की ( मिल्कियत ) समझी जाती है, इस लिये उसी का दान किया जाता है, पुरुष का नहीं । इसी से जान लो कि कहां तक न्याय है । ऐसे दानों की किसी वेदशास्त्र में आज्ञा नहीं है ।

## ❀ स्नान ❀

स्नान करना आरोग्यता के लिये लाभकारी है । प्रति दिन प्रातः काल ४ बजे उठकर शौचादि कर्मों से निवृत्त होकर स्नान किया करो । वर्त्तमान समय में स्त्रियां घरों में और बहुधा विरादरियों में ग़मी ( मृत्यु ) के स्थान पर वाहर नंगी होकर स्नान करती हैं जो अति अनुचित है । तुम कभी भी धोती या कपड़ा पहने बिना मत स्नान करो क्योंकि बहुधा धोखे से पुरुष आजाते हैं या छत पर चढ़ने और दरवाजा खिड़की से नंगी देख लेते हैं । जो लज्जावती स्त्रियों के लिये बड़ी लज्जा की बात है और निर्लज्जाओं के लिये कुछ नहीं । पतिव्रता स्त्रियों के शरीर का कोई छिपाने योग्य अंग पति के अतिरिक्त कोई देख नहीं सकता । तुम और स्त्रियों की लज्जा करती ही नहीं, क्या कोई पुरुष दूसरे पुरुषों के सामने नंगा होकर न्हाता है । पुरुषों से स्त्रियों में चार गुणी लज्जा बतलाई थी। लज्जा उनका एक भूषण था । शोक कि वह आज पुरुषों से भी गिर गई । बहुधा देखा जाता है कि यदि वस्ती के निकट नदी या तालाव होता है वहां इकट्ठी होकर मार्ग में इठलाती हुई हँसी आदि करती हुई गाती कूदती स्नान करने जाती हैं । जिन्हें पुरुष भी देखते और उन की बातें सुनते हैं । यह सब बातें तुम्हारी सभ्यता और कुलीनता के विरुद्ध हैं जो तुम को धर्म से गिरा रही हैं

और जो तुम समझे हुई हो कि नदी नाले में न्हाने से पाप दूर हो जाता है यह बिलकुल भूल है । पाप शुभ कर्म्मों के करने और पाप न करने से ही दूर हो सकेंगे । जल से शरीर शुद्ध होगा, मन और आत्मा नहीं, देखो भीष्मपितामह ने बतलाया हैः—

आत्मानदीसंयमपुण्यतीर्था सत्योदकाशीलतटादयोर्मिः ।
तत्राभिषेकंकुरु पाण्डुपुत्र ! नवारिणाशुद्धयतिचांतरात्मा ॥

हे युधिष्ठिर ! तू आत्मा रूप नदी में जिस में समय पुण्य तीर्थ है जिस में सत्यरूपी जल भरा हुआ है जिस के शीलरूपी किनारे हैं जिस में दयारूपी लहरें उठ रही हैं ऐसी नदी में स्नान कर जिससे आत्मा शुद्ध हो जावे । इसके अतिरिक्त और किसी प्रकार से आत्मा शुद्ध नहीं हो सकता । इस से अधिक आप को और क्या प्रमाण दिया जाय । इस लिये मन वाणी से सत्य बोल कर दया धारण कर शीलवान बन कर नियम के साथ रहकर अपनी आयु व्यतीत करो और पितामह की आज्ञा मानने वाली बनो । वह अच्छे प्रकार बतलाते हैं कि जल से आत्मा शुद्ध नहीं होता । इस लिये स्वप्न में भी नदी नालों से डूब जाने के अतिरिक्त तरने की आशा न रक्खो ।

———*———

## ❋ खान पान ❋

दो प्रकार के पदार्थ वर्त्तमान समय में हैं जो काम में लाये जाते हैं । एक भक्ष्य, दूसरे अभक्ष्य । तुम सदा अभक्ष्य—मदिरा, भंग, अफयून, गांजा, चरस, मदक, चण्डू, मांस, मछली, झींगी, लहसन, प्याजादि को छोड़ कर भक्ष्य पदार्थ जो नाना प्रकार के परमात्मा ने तुम्हारे लिये बनाये हैं सेवन करो, और तामसी सात्विकी भोजन का भी विचार रक्खो । मिर्च खटाई लाल मिठाई अधिक सेवन करने से क्रोध उत्पन्न हो जाता है और आरोग्यता व वीर्य आदि को भी हानि पहुँचती है ।

मांस मछली आदि से दया का नाश हो निर्दयता उत्पन्न हो जाती है। परमेश्वर ने सारी सृष्टि रच कर साथही वेदों में उपदेश कर दिया था कि प्राणीमात्र से मित्रता का वर्ताव रखना किसी प्राणी से वैर विरोध न करना।

( अभयं मित्रादभय० ) और ( सहनाववतु० ) ( दृतेदृᳪह० )

इत्यादि अनेक मन्त्रों में यही उपदेश है। सोचो जब अपना कोई प्यारा मर जाता है मृतक के साथ जाने वाले वहां नहाते हैं फिर घर आकर नहाते वा पैर धोते हैं इस लिये कि मृतक के अपवित्र परमाणु शरीर में प्रवेश न कर जावें। यह ऋषियों के प्रवन्ध थे परन्तु आज उन्हीं की सन्तानें मुर्दे को चौके में पकाकर स्नान कर खाती हैं। यदि मास के अपवित्र होने में सन्देह है तो उसको अग्नि पर रखकर जलाने से इसकी परीक्षा हो सकती है। परमाणु नाक में पहुँच कर सुगन्धित दुर्गन्धित पदार्थों की पहचान करा देते हैं। मांस के जलने में जो चिरांध आती है वह मुर्दा जलाने वालों से छिपी हुई नहीं है इसी दुर्गन्ध के दूर करने और उस का प्रभाव मनुष्यों पर न पड़ने के लिये चन्दन काफूर घी आदि सुगन्धित पदार्थों के साथ मृतक को जलाने की आज्ञा पाई जाती है। पशुपक्षी के खाने से पशुत्व न आना असम्भव है। दीपक अंधेरे को खाता अर्थात् दूर करता है। इस कारण अंधेरी वस्तु काजल उत्पन्न करता है। ऐसे ही जो मनुष्य जिस प्रकार का भोजन करते हैं वैसे ही उनके मस्तक और बुद्धि हो जाता है। मांसाहारी अपने ज़रासी फांस लगने से घबराते और सुई चुभाने से कोसों भागते हैं परन्तु पशु के काटते समय उनकी बिलबिलाहट और चिल्लाहट पर उनका बज्र हृदय किंचित् भी नहीं पिघलता। इतना कठोर हृदय हो जाता है कि तनिक भी दया उसके डकराने और स्वतः मनुष्यता छोड़कर भेड़िया आदि पशुओं के तुल्य कार्य करने पर नहीं लजाते। सत्य है जिस का हृदय और मस्तिकादि सारा शरीर पशुओं के मांस से भरपूर हो उसको फिर दया कैसी, इन्द्रियों के विषयों को त्यागना जब कि प्रत्यक

पन्थ ( मज़हब ) का उद्देश्य है तो छोटी सी जीभ अपने वश में करना कहांतक लाभकारी है । जिस की जीभ वश में नहीं आती वह अपनी जीभ काट कर ही क्यों नहीं खा जाते परमात्मा जब न्याय करेगा तब वहां किसी की कुछ न चलेगी मांसाहारियों को बदला देना पड़ेगा । आज ईश्वरीय आज्ञा ईश्वरीय नियम पर ध्यान नहीं है उस की अपेक्षा मनुष्यों के बनाये हुये नियमों का अधिक मान है। कलेक्टर म्यूनिसिपेलिटी के नियत किये हुये सफ़ाई करने वाले भंगी को यदि कोई ब्राह्मण वा सय्यद बध करे तो वह प्राण हत्या का दण्डभागी होता है परन्तु परमात्मा के नियत किये हुओं को जो स्वाभाविक सफ़ाई का कार्य कर जल वायु को शुद्ध कर रहे हैं मछली, मुर्गा, सुअर रूपी भंगियों के मारने से पापी ही नहीं गिने जाते । शोक कि पक्षपात और अपस्वार्थ की ऐनक आंख पर लगाये हैं, इस कारण साफ़ दिखाई नहीं देता कि ईश्वर ने इतने पदार्थ सृष्टि में उत्पन्न कर दिये हैं जो नित्य प्रति बदल कर खाने से आयु भर समाप्त नहीं होते तो फिर एक वस्तु खाई खाई न खाई, एक वस्तु जो धर्म की नाशक हो, यदि उसे बचादें तो क्या हो । जब कि बतलाया है:—

अहिंसापरमोधर्म्मः यजमानस्य पशून्पाहि ।

लातजालूबतूनकुम्ममकाविरुलहैवानात्

अर्थ—मत बनाओ अपने पेट को कब्र पशुओं की । जिसका यह विचार है कि बलिदान से पशु स्वर्ग को जाता और परमेश्वर प्रसन्न होता है यह केवल परमेश्वर और देवी को बदनाम करना और उनपर कलंक लगाना है । यदि यही सत्य है तो तुम क्यों खाते हो । केवल बलिदान करके फेंक दिया करो । जब तुम स्वयं खाओगे तो मैं अवश्य कहूंगा कि तुम अपने स्वाद के अर्थ परमेश्वर वा देवी को बदनाम करते हो । देखो तुम परमेश्वर को सम्पूर्ण जगत् का रचनेवाला पिता बताते हो और देवी को जगत् माता जानते हो तो वह पशु जिनकी तुम क़ुर्बानी व बलिदान करते हो क्या जगत् से बाहर हैं ? क्या वह उनके पिता माता नहीं हैं ? यदि हैं तो क्या वह बेटों को खाते हैं ? ड यनके तुल्य हैं ? शोक !!!

साई मारे राह सिधारे तिस को कहें हराम हुआ ।
ज़िन्दा को मुर्दा कर डालें तिस को कहें हलाल हुआ ॥
पढ़ें नमाज़ रखें फिर रोज़ह पराए पूत को काट लिया ।
अगर बहिश्त मिले योहीं तो क्यों नहीं कुटुम्ब हलालकिया॥

इल्म-उल-अद्विया में वतलाया है कि मांस के खाने से दिल काला होजाता है । आंखों में धुंधलापन उत्पन्न होता है । बुद्धि नष्ट हो जाती है । पशुत्व वढ़ जाता है । इस लिये तुम इस संक्षेप वर्णन से फल निकाल लेना ।

अब कुल हानियां भंग, अफयूनादि की पद्य में वतलाता हूं उसी से जान कर त्याग देनाः—

## भंग ।

यह भंग भी वह सब्ज़ क़दम है कि अल हज़र ।
नुक़सान इस से रूह का है जिस्म का ज़रर ॥
चक्कर दिमाग़ को है तो पैदा है दर्द सर ।
होशो हवासो अक़्लो ख़िरद सब हैं मुंतशर ॥
काफ़ी नशे को इस का फ़क़त एक चुल्लू है ।
कमज़र्फ़ आदमी है तो चुल्लू में उल्लू है ॥

## अफयून ।

अफयून खाने वाले को रहता है दर्दो ग़म ।
तन है नहीफ़ ज़ोफ़ से उठता नहीं क़दम ॥
गरदन झुकाये रहते हैं पीनक में दमबदम ।
आंखों में ढलका चेहरे पर ज़र्दी कमर में ख़म ॥

दो चुसकियां जो पीं तो मिठाई की चाट है ।
दुनियां की न्यामतों से तबीयत उचाट है ॥

## गांजा व चरस ।

गांजा चरसभी है वह मुनश्शी कि अलअमां ।
हुस्नो शबाब इस से है बर्बाद रायगां ॥
बैठे हैं जमघटे में मगर शक्ल नातवां ।
जब दम लगाया खींच के उठने लगा धुवां ॥
आगाज कुलफ़तो अलमो ग़म के साथ है ।
अंजाम है दमा तो दमा दम के साथ है ॥

## मदक ।

दफ्तर में नशेबाज़ी के बेशक मदक है फर्द ।
अक़लोहवास होते हैं सब इस से गर्द बर्द ॥
नीली रगें नमूद बदन का है रंग जर्द ।
चेहरे पै झुर्रियां हैं लबों पर है आह सर्द ॥
छींटों के वास्ते हैं परेशां जमाने में ।
ताक़त नहीं है हाथ उठाने की शाने में ॥

## चांडू ।

चांडू वह बद बला है कि अल्लाह की पनाह ।
कर डाले इसने हिन्द में घर सैकड़ों तबाह ॥
मुंह पर हवाई उड़ती हैं लब पर है दर्द आह ।
चक्कर क़दम क़दम पै है कमजोर है निगाह ॥

मैले कुचैले फिरते हैं चांडू की चाह में ।
ग़श आगया तो गिर पड़े असनाय राह में ॥

इस लिये बुद्धि से विचार कर पक्षपात छोड़ कर खान पान में अभक्ष्य को छोड़ कर भक्ष्य का सेवन करो* ।

## ❁ गुरु ❁

गुरु का लक्षण पहले बताया जा चुका है । आज पुरुषों में, विशेषतः स्त्रियों में, यह प्रणाली चल पड़ी है कि गुरु अवश्य किया जावे । विना गुरु किये उस के हाथ का जल पान करना ठीक नहीं है । आज विद्या से शून्य होने के कारण गुरु करने के तात्पर्य से अनजान हैं । गुरु करने का प्रयोजन केवल कान फुकाना जाने बैठी हैं । बहनो ! पूर्वकाल में पुरुषों की भांति स्त्रियां भी गुरुकुल में जाकर विद्याध्ययन करती थीं वह ही पढ़ाने वालों की चेली कहलाती थीं । यह कनफुका गुरु नहीं होते थे । वे गुरुकुल के आचार्य पुत्रियों की भांति पढ़ाते और मनुष्य जीवन का उद्देश्य बताते थे । अधिकाश तो स्त्रियां ही गुरुकुल में अध्यापिका होती थीं, वह ही गुरु होती थीं, वह ही उन की शंकायें निवृत्त कर परम धार्मिक बनाती थीं । आज दोनों गुरु चेलियां विद्या से शून्य हैं यदि गुरु पढ़े भी हैं तो वह ही सत्यनारायण की कथा व शीघ्रबोध वरन् आज कल तो प्रायः राण्डे, मुराण्डे, महामूर्ख नाम के साधुओं की चेलियां बनती फिरती हैं और वह गुरु तन मन धन सभी इन से अर्पण करा-लेते हैं । प्रथम तो इन चेलियों से पैर छुवाते हैं, जूठा खिलाते, कभी २ पाव भी छुवाते वा दबवाते हैं ।

फिर जिस समय स्त्री के पांव छूने वा पांव दवाने से जहां स्त्री के शरीर की बिजली पुरुष के शरीर में प्रभावित हुई, उधर पुरुष के शरीर की बिजली का प्रभाव स्त्री के शरीर पर पड़ा जो स्वाभाविक नियमानुकूल

---

* नोट-मदिरा के विषय में अन्तिम निवेदन में लिखा है इस कारण उसके विषय में यहां नहीं लिखा ।

बच ही नहीं सकता, फिर क्या जो होता है वह छिपा हुआ नहीं । इसी लिये शास्त्रों में बतलाया है कि बहिन, मां, कन्या के निकट भी एकांत में न बैठे, न सोवे क्योंकि इन्द्रियां इतनी बलवान हैं कि बड़े २ विद्वानों को आकर्षित कर लेती हैं ।

मात्रास्वस्रादुहित्रावा नविविक्तासनो भवेत् ।
बलवानिन्द्रियग्रामो विद्वांसमपिकर्षति ॥

ऋषियों ने इसी बात का ध्यान रखते हुए बतलाया था कि "पतिरेको गुरुः स्त्रीणाम्" कि स्त्री का केवल पति ही गुरु है । मनुस्मृति में भी बतलाया है—

वैवाहिको विधिःस्त्रीणाम् संस्कारोवैदिकः स्मृतः ।
पतिसेवागुरौवासो गृहार्थेऽग्निपरिक्रिया ॥

स्त्री का पति के यहां रहना ही गुरु के यहां रहना है । पति सेवा ही गुरु की सेवा है । इस में पति धर्म की महिमा को झलकाया है और स्त्री को गुरु करने को मना किया है । तुलसीदास जी ने भी अपने समय की दशा, जिस को बहुत न्यून काल हुआ, देख कर लिखा है कि आज कलः—

गुरु शिष्य अन्ध बधिरके लेखा । एक न सुने एक ना देखा ॥
हरै शिष्यधन शोक न हरई । सो गुरु घोर नरक में परई ॥

प्रायः तो चेले चेलियां बनाने का प्रयोजन धनहरण ही होता है और बहुत से गुरु बाहर से तो बगला रूप भीतर से काक । वामी, पाखण्डी चेलियां बनाकर उन्हें अपनी रंगत में मिलाते हैं जिस से वे स्त्रियां बहुत बुरा फल भुगतती हैं और पवित्र शुद्ध शिक्षा प्राप्त होने के स्थान पर महा पाप और नरक में पड़ती हैं । बहुत से गुरुओं को देख लीजिये चेला मांस खाते, मदिरा पीते, जुआ खेलते, चरस, भांग उड़ाते, व्यभिचार करते, परन्तु उन्हें उन के जीवन के सुधार से कुछ

प्रयोजन नहीं है। कभी उनके छुड़ाने का उपदेश नहीं करते, केवल धन प्राप्ति में यदि कुछ न्यूनता हो तो अवश्य लड़ते झगड़ते हैं, केवल धन प्राप्ति ही गुरु बनने का मुख्य सिद्धान्त है और वह वार्षिक वा छमाही आकर अपना टेक्स ले जाया करते हैं।

**टकाधर्म्मः टका कर्म्म टका हि परमं पदम्।**
**यस्य गृहे टका नास्ति हा टका टकटकायते॥**

जन्मोत्सव विवाह आदि के अवसरों पर उन के नेग बंध जाते हैं। बहुधा यह नाम मात्र के गुरु अपने साथ चेलियों को तीर्थ, व्रत कराने के बहाने से लिये फिरते हैं। घर वाले इसी विचार से कि गुरुही ठहरे बदगुमानी कैसी, साथ कर देते हैं। अधिक विधवायें उनके साथ जाती हैं और जो २ फल प्राप्त होते हैं उनके कहने से मौन भली है।

बहनो! तुम कभी भी न ऐसे गुरु करो, न एकांत में या तीर्थ व्रत को कभी किसी के साथ जाओ। जब बाप, भाई, बेटे के साथ अकेले बैठने उठने का तुम्हें निषेध है तो पराये पुरुष के साथ जाने की आज्ञा कैसी? और देखो वह गुरु जो मन्त्र देते हैं वह कान में फूंक देते हैं, इस लिये कि कोई सुन न सके, चाहे अशुद्ध हो, चाहे अंट का संट हो, जिस में गुरु जी की कलई न खुल जावे। कोई कोई तो एक शब्द भी नहीं बताते। मन्त्र भी अलग गढ़ रक्खे हैं। सदा पाप की बात छिपाई जाती है, उसी में सब लज्जा शंका होती है मन्त्र प्रत्यक्ष न बताना इस बात को प्रकट करता है कि उस को यह भय डरा रहा है कि मेरी अशुद्धि विदित हो जाने से लज्जा न उठानी पड़े। शोक! यह न सोचे कि भविष्यत् काल को यह भय न लगेगा और यह अशुद्धि होते २ अन्त को क्या परिणाम होगा।

मुझे एक लोभी गुरु के विषय में एक हास्य स्मरण आता है, जो एक लोभी गुरु से तंग आकर एक अहीरिन ने उस से चाल खेली थी। यथार्थ में इन नाम मात्र के गुरुओं के जब तक मान आदर सत्कार कम नहीं किये जाते, यह नहीं रुकते। मैं यह शिक्षा नहीं देता कि उस अहीरिन के

तुल्य कोई और भी किसी को झूठा धोका दे क्योंकि हमारा काम झूठ और धोके से बचना है न कि और प्रचार करना । वह कहानी यों है—

एक अहीर ने साधारणतया एक को गुरु किया था । वह सदा छमाही पर नाज उठाने नहीं पाता था, पोतापाई भी नहीं अदा होपाता था कि आकर अपना कर निपटा ले जाता था । यह बात उस अहीरिन को बड़ी ही कठिन प्रतीत होती थी, क्योंकि उसकी रुचि के नितान्त प्रतिकूल थी । परन्तु पति के भय से कुछ कह न सकती थी, धर्म का धन जाता था और गुरु आज्ञाओं की पूर्ति करते २ उस के और भी नाक में दम आजाता था । उसके बालकों को भी कष्ट होता था । वह सोचती थी कि किस प्रकार इन से पीछा छूटे । एक दिन गुरु जी पधारे, उसकी मलिन बुद्धि में आगया, उसका पति खेतों पर था, वह सदा एक दो बजे दिन को आया करता था । गुरुजी सवेरे आगये । इस ने झटपट चौका चूल्हा तैयार करा के भोजनों का प्रबन्ध कर दिया । जब भोजन बन गये और गुरुजी जीमने बैठे, यह उनके सन्मुख बैठकर बहुत कुछ उदास हो रुवासी शक्ल बना मूसल के सिरे पर घी लगाने लगी । गुरुजी ने देख कर पूछा तू यह क्या करती है । आंखों में जल डुबडुबा कर यह बोली—महाराज ! करती क्या हूं, तुम्हारा शिष्य थोड़े काल से सिड़ी सा होगया है, जो कोई उस के घर आता है प्रथम भोजन खिला पश्चात् यह मूसल उसकी गटई ( घाटी ) में ठूँस देता है । आप वृद्ध थे, मैंने सोचा कि घी लगा रक्खूं, जिस से चिकना होने से कुछ आप को सुख मिलै । उसने कहा जब मूसल घाटी में ठूंसा गया तब घी लगाने से क्या मैं जीवित रहूंगा ? मेरे तो किंचित् उसकी हवा लगने से ही प्राण हवा हो जायँगे, न कि घाटी में ठूंसना । अहीरिन ने कहा मैं स्वतः बड़े कष्ट और महा विपत्ति में फंसी हूं । महाराज ! उस के आने का समय निकट आगया है । गुरु जी ने वैसे ही भोजन त्याग घर का रास्ता लिया । पीछे देखते जाते थे कि कहीं आ न जावे । इतने में वह अहीर आगया । भोजन तैयार बना हुआ पड़ा देख कर पूंछा कि किसने बनाया था । अहीरिन ने कहा कि-वेही तुम्हारे अनोखे गुरु

जी आये थे, भोजन बना कर जीमने बैठे । कहा मुझे मूसल देदो । मैंने कहा कि और जो आप चाहें सो लेजावें, मूसल मेरे मैके का है वह तो नहीं दूंगी इसी पर क्रोधित होकर भोजन छोड़ अपना लट्टू पट्टू ले चले गये । फिर मैं देती भी रही परन्तु नहीं ठहरे । अभी थोड़ी दूर पहुंचे होंगे लो यह मूसल तुम्हीं दे आओ, वह मूसल लेकर गया । दूर से पुकारा और मूसल दिखाया । गुरु जी समझे कि यथार्थ में जो वह कहती थी, सच है । अब कहां गुरु का पता लगना था । अन्त को वह अहीर घर लौट आया और गुरु जी से इस तरह पीछा छुड़ाया । सच कहा है:—

लोभी गुरू लालची चेला, दोनों खेले दाव ।
भवसागर में डूबते, बैठे पत्थर की नाव ॥

इस लिये बहिनो ! तुम अपना सच्चा आदि गुरु परमेश्वर को दूसरा पति को समझो, यही तुम्हारे कल्याण की मुख्य बात है । जब गुरुकुल तुम्हारे बन जावें या अब तुम्हें जिन विद्यालयों में शिक्षा प्राप्त हो वह विद्याध्ययन कराने वाले, परमेश्वर की पहचान बतलाने वाले गुरु तुम्हारे कल्याण कारक होंगे । यह नहीं कि पहले बिना विचारे गुरु करलें फिर झूठ छल के ढोंग उस अहीरिन के सदृश रचने पड़ें ।

## ❋ तुलसी शालिग्राम ❋

आज मूर्ख स्त्रियों को उनके पाधा पुरोहित तुलसी शालिग्राम के विवाह का माहात्म्य और उस का फल सुना धोका दे दम पट्टी में ला उनका विवाह रचाते हैं । स्त्रियों की तुलसी और उनके शालिग्राम होते हैं । उनका बड़ी धूम धाम से विवाह होता है । सैकड़ों रुपये उस में व्यय होते हैं और पंडित जी सारा गहना पाता माल असबाब अपने घर ले जाते हैं । बहनो ! मैं क्या तुम्हें समझाऊं, विचार और बात की छानबीन की योग्यता ही नहीं रही है । दृष्टान्त के लिये देख लो, जहां

कथायें होती हैं वहां मनुष्य बैठे हुए बान बटते, कपड़े रींते, बहीखाता रँगते वा इसी प्रकार के और कार्य करते जाते और कथा भी सुनते जाते हैं। हां जहां पर कथक्कड़ "हरये नमः" या "हरे कृष्णादि" कहते हैं वही सब मिल कर कहने लगते हैं, मानो यह भली भांति समझ रहे हैं। एक महात्मा कहते थे कि बनारस में एक शास्त्री पंडित की कथा हो रही थी। सम्पूर्ण बातें उपरोक्त वहां विद्यमान थीं । दर्शनों की फ़िलास्फ़ी कौन समझता है, परन्तु "हरये नमः" अवश्य सुनाई देता था। उस पंडित ने यह समझ कर कि देखें यह कुछ समझते भी हैं, एक बिलकुल झूठी मनगढ़ंत कहानी परीक्षार्थ छेड़ दी कि इसी काशी नगर में एक बार एक राजा की सवारी निकली । राजा चार मन्त्री आदि के सहित हौदे में सवार था, हाट में चार मक्खियां उस हाथी के चिमट गईं और पांचों मनुष्यों सहित हाथी को उड़ा ले गईं । इस के अन्त पर भी सब ने "हरये नमः" उसके साथ कह दिया जिससे उसे पता लगा कि यहां पर समझने वाला एक भी नहीं है।

मेरा यहां पर इस कथन से यह प्रयोजन है कि स्वार्थियों की शिक्षा ने हमारे देश के स्त्री पुरुषों के मस्तकों को इतना बिगाड़ा है जो अपरिमित है । मुझे एक कहानी स्मरण हुई है वह बिलकुल ही इस के अनुकूल है । एक गांव में एक मुक़द्दम (महतिया) रहते थे । उन से आकर एक पुरुष ने कह दिया कि अरे ! तू बैठा हुआ क्या करता है? घर में घेरी लुगाई (स्त्री) रांड़ होगई । वह वहीं धाड़ें मार मार रोने लगा। लोग इकट्ठे होगए । उससे पूँछा तू क्यों रोता है ? कहा रोता क्या हूँ; मेरी लुगाई रांड़ होगई है । लोग हँस पड़े और समझाने लगे कि तू निरा पागल है । तेरे होते हुए तेरी लुगाई कैसे राड़ हो सकती है । वह कहने लगा तुम्हीं पागल खबती हो, मेरे होने से क्या हो सकता है, मैं बैठाही रहा, मेरी बहन राड़ होगई तो मैंने क्या कर लिया, जो अब हो कर करलूंगा । बस साक्षात् यही दशा है कि विचार समझ को ऐसा ही फटकारा है जैसे कि उस मुक़द्दम ने, अब आप ध्यान दीजिये कि

तुलसी शालिग्राम की कहानी पद्मपुराण से निकाली गई है जो एक अनोखी है । मैं संक्षेप से अन्तिम फल जिस से प्राप्त हो जावें, आप को बताता हूँ ।

जलन्धर नामी एक राजा था । उस की स्त्री विन्दा नामी बड़ी ही पतिव्रता थी । उस से शिवजी आदि से बड़ी कठिन लड़ाई हुई, वह किसी प्रकार मारा नहीं जाता था । तब उस के मारे जाने के अभिप्राय से उस की स्त्री का पतिव्रत धर्म नष्ट करने के हेतु विष्णु भगवान् ने भिखारी बन कर और धोखा देकर उस के साथ भोग किया और उस के पतिव्रत धर्म का नाश किया, वाह ! कैसे शोक का स्थान है, कि विष्णु भगवान् और यह काम ! जब यह छल उस पतिव्रता स्त्री पर प्रकट हुआ और इस तरह धोके से पतिव्रत धर्म नष्ट करने से उस का पति मारा गया, तब उसने शाप दिया कि जिस के शाप से विष्णुजी गण्डकी नदी में पत्थर बन लुढ़कने लगे । चुनांचे वही पत्थर शालिग्राम कहलाते हैं । वह तो एक पत्थर बन गये थे । आज नदी भर के पत्थर पथरिया सभी शालिग्राम बना लिये गये । यह किसी को ज्ञात नहीं कि वह कौन पत्थर बने थे और वह सहस्रों वर्षों के होजाने से नष्ट भ्रष्ट हो गये या अभी शेष हैं । पौराणिक बुद्धि ही जो ठहरी ।

पत्थर बनते समय विष्णु ने उसे शाप दिया कि तू तुलसी का पेड़ बनेगी । तेरा पत्ता जब मुझे चढ़ेगा, मैं प्रसन्न हूंगा । नहीं मालूम कि यह शाप किस पाप के बदले था । उस विचारी निष्पापिन स्त्री ने क्या पाप किया था । खैर, वह पत्थर बन गये यह तुलसी बन गई, यह भी पता नहीं कि कौन वा किस देश और धरती पर बनी और पहिले भी तुलसी का पेड़ सृष्टि में था वा नहीं परन्तु जो कह दिया वही होगा । क्या इन बातों से आज उन हमारे माननीय बड़ों पर दोष नहीं आता या उनकी प्रतिष्ठा स्थिर रहती है ? स्वयं ही समझ लीजिये, बहिनो ! तुम ने कभी भी इस के मूल तात्पर्य को पूछा वा तुमने सोचा कि यह कैसी टट्टी की आड़ में शिकार खेली जाती है । पत्थर जड़ और

तुलसी का पेड़ जड़! जड़ से जड़ का विवाह कराया जाता है, क्या अच्छी फ़िलास्फ़ी और बुद्धिमानी है। कभी यह भी सोचा कि शालिग्राम के पिता कौन हैं? कहां के निवासी हैं, क्या नाम है क्या निवास-स्थान हैं, तिस पर तुलसी को जगत् माता और शालिग्राम को पिता बतलाते हैं। आप उन के बाल बच्चे बने हैं। फिर आप ही माता पिता का विवाह रचाते हैं। नहीं सोचते कि यह कैसी सन्तान है जो अपने दादे परदादे वरन् उन के भी बड़ों का विवाह कराती है और शर्म नहीं खाती। इस पर और बात अधिक यह है कि तुलसी माता की पुत्री और शालिग्राम पिता को पुत्र बनाते हैं। तुलसी के विषय में बड़े २ डाक्टरों की सम्मति है कि जो बुखार घर के बरतनों के धोने या घर के और कामों की ज़हरीली वायु से पैदा होता है, वह हवा जब तुलसी के पेड़ से लगती है तो शुद्ध होजाती है, और वह बुखार नहीं फैलता। हमारे पुराने पुरुषा इस नियम से जानकार थे। इस लिये हर गृह में तुलसी के पेड़ का होना आवश्यक था। आज स्वार्थियों ने उस से भी टका सीधा कर दिखाया।

नोट—जैसे तुलसी के पेड़ से घर की वायु शुद्ध होती है वैसे ही पीपल एक बड़े पेड़ से एक टोला वा छोटे पुरवा की वायु शुद्ध हो जाती है। जितनी प्राणवायु पीपल के पेड़ से निकलती और अपान वायु उस के अन्दर प्रवेश करती है उतनी अन्य पेड़ों में नहीं, इस लिये हमारे ऋषियों की कुटी वन में पीपल के पेड़ के पास हुआ करती थी। उन्हें वायु जल की शुद्धि का (जो जीवन के लिये सब से अधिक आवश्यक है) बड़ा ध्यान था। परन्तु आज तुलसी के पेड़ की नाई इस के विषय में भी विचित्र कहानी गढ़ पद्मपुराण में लिखमारी, लिखा है कि श्रीकृष्ण की साली दरिद्रा को उस के पति ने छोड़ दिया था, वह पीपल पर रहती थी। हर शनैश्चर को श्रीकृष्ण उस से मिलने को उस पेड़ पर आते थे। आज उस पेड़ का तो पता नहीं है, इस लिये सारे पीपल के पेड़ पूजे जाते हैं। जो घी मिठाई चढ़ती हैं वह दरिद्रा का

भोजन और डोरा धागा लपेटा जाता है वह उस के वस्त्र हैं । वाहरी मूर्खता ! तूने यह भी न सोचा कि जव श्रीकृष्ण आपही शरीर छोड़ गए तव दरिद्रा उस शरीर से कैसे अमर रह सकती थी । नाम भी कैसा श्रेष्ठ है, पूर्व समय की सृष्टि प्रणाली जैसा । जव उस के पति ने किसी कलंक के कारण छोड़ दिया होगा तौ ऐसी कलंकित स्त्री के पास वरावर नियम पूर्वक जाने से कृष्णचन्द्र की योग्यता व सभ्यता कैसे स्थिर रह सकती है ? हाय ! वड़ों के नाम को कलंकित करते तनक नहीं लजाते । पीपल का पता नहीं वह उनके कथनानुसार किसी एक पेड़ पर होगी, शेष करोड़ों पेड़ों की पूजा तो निष्फल ही हुई । क्यों करोड़ों को वहँका मारा ?

## ❀ शर्म ❀

वहनो ! इस में कुछ सन्देह नहीं कि शर्म ( लाज ) तुम्हारा एक सच्चा भूषण था । आज तुमने सच्ची शर्म को त्याग झूठी शर्म करना सीख ली । कोई ज्येष्ठ श्वशुर सहस्र लक्ष में एक आध ऐसा कुमार्गी दुराचारी होगा जो अपनी छोटी भावज से या अपनी वहू से जो उसकी कन्या के तुल्य होती है, उस को कुदृष्टि से देख कर उसकी प्रतिष्ठा और पवित्रता में वट्टा लगाने का कारण वने और अपना लोक परलोक विगाड़े । जैसा किः—

**अनुजवधू भगिनी सुत नारी । सुनु शठ यह कन्या सम चारी ।**

वहनो ! आज वहू जी अपने जेठ, श्वशुर के सामने मुँह खोलना क्या मानो मुँह से वात तक नहीं करतीं । चाहे विल्ली कुत्ता कोई चीज खा रहा हो, विगाड़ रहा हो, वहू जी देख रही हों, श्वशुर जेठ वैठे हों अव मारे शर्म के मुँहसे नहीं वोलतीं इसलिये कि वेशर्म न कहलावें, परन्तु वहही वहू विवाह, मुण्डन, सगाई, जन्म आदि उत्सवों पर या और उत्सवों पर ऐसे घृणित राग गाकर सुनाती हैं कि उस समय सारी शर्म हया की धज्जियां उड़ा देती हैं, फिर ज़रा नहीं लजातीं, तालिया भी वजाती

हैं । बहनो ! न्यायपूर्वक सोचो विचारो कि वह शर्म थी या यह है । इस को जाने दीजिये, घरवाले ही नहीं वरन् समधी बराती जब एकत्र होते हैं, उस समय नाम ले २ कर ऐसी गालियां गाई जाती हैं, जिस से सभ्य और योग्य पुरुषों की, जिन्हें ज़रा भी शर्म है, गर्दन ऊपर नहीं उठती । वह दशा होती है जो अनकही अच्छी । जिस समय बहू जी गाती हैं, उन्हें पति जेठ श्वशुर सभी सुनते हैं, समझते हैं कि यह बहू जी की आवाज़ है, यह अमुक की, यह अमुक की । कैसे २ सुन्दर मनोहर शब्द उनके मुखारविंद से निकलते हैं, मानो फूल झड़ रहे हैं, वाहरी शर्म ! विचार करके देखो तो तुमसे अधिक और कौन निर्लज्ज होगा ? सत्य है—

**आप अपने दोष से माहिर नहीं होता कोई ।**
**जिस तरह बू अपने मुँहकी आतीहै कब नाकमें ॥**

इसके अतिरिक्त जिस समय मेला दशहरा चराई तीजों में जाती हो तौ फिर सोलह श्रृंगार कर मुँह खोल कर सारे मेले वालों को दिखलाती हो । अरी ! शर्म अपनों से चाहिये या अन्यों से ? परन्तु क्या किया जावे ? जब तुम ने उलटाही सबक़ ( पाठ ) सीखा हो । यदि गहरे विचार से देखो तौ गालियां गाते समय तुमने रण्डियों को भी हरा दिया क्योंकि जिस समय उसे द्वार पर रुपया मिलजाता है फिर वह गालियां नहीं गाती और तुम अपने पैसे मिल जाने पर भी जब तक बराती खाते हैं महामलिन शब्दों से गालियां सुनाती ही रहती हो, जिस समय खाकर चलते हैं, तब तक पीछा नहीं छोड़तीं कि-( चोर भागे जायें पकड़ियो लोगो ) किन्हीं २ स्थानों पर जो परमेश्वर के स्मरण का समय है, जिस में सन्ध्या हवन करना चाहिये मेढ़ा बकरा ( कोयल ) नामी गीत जिन में सभ्यता लेशमात्र भी नहीं बड़े ही उच्च स्वर से गाती हो फिर भी अपने को शर्मवाली समझती रहो । बड़े २ घरों में जो कुलीन गिने जाते हैं आपुस की स्त्रियां आप नाचती और स्वांग बनाती हैं परन्तु यदि

कहीं किसी धर्मात्मा विद्वान् का धर्म सम्बन्धी व्याख्यान हो उस में स्त्री का जाना अनुचित समझा जाता है। हमारे बड़े पवित्र विचारी सदाचारी होते थे वे दूसरों की मा बेटियों को अपनी माता बेटी के तुल्य जानते थे। इस लिये झूठा परदा नहीं था । यह उन्हीं की उत्थापित रस्म है । जिन्हें आप पर और अपनी स्त्रियों पर एतबार नहीं है, सज्जन धर्मात्मा पुरुषों की स्त्रियों पर अविश्वास का कोई कारण नहीं, वरन् देखा जाता है कि जब तक स्त्री मुंह छिपाये रहती है उस वक्त तक पुरुष की इच्छा उस के देखने की रहती है परन्तु जिस का मुँह खुला है उसकी ओर दुबारा दृष्टि भी नहीं उठती। बहिनों, मुँह छिपाने से ही शर्म नहीं कही जा सकती, जब तक मन पवित्र और उस का परदा न हो। मुँह ढापे रहने से आरोग्यता में अन्तर पड़ता है इस लिये पुरुषों के साथ निरन्तर महात्माओं के लेक्चर सुनने को जाना चाहिये। परन्तु बैठने का स्थान पुरुषों के बैठने से अलग एकान्त में होना चाहिये। इस लिये कि पुरुष का सुधार हुआ स्त्री का नहीं तो वह घर काना है, लूला है, लंगड़ा है।

## ❀ नाच ❀

जब बुरे दिन आते हैं उस से प्रथम बुद्धि बिगड़ जाती है, अपना हितैषी शत्रु और शत्रु हितैषी दृष्टि आता है । सच जानिये बहुधा घरानों में पुरुष बरातों में व्यय अधिक हो जाने के कारण या और इसी प्रकार के कारणों से नाच ले जाना नहीं चाहते परन्तु उन के घर की स्त्रिया हट करती हैं कि पातुर बिना बरात सूनी रहेगी, यह बड़ों की रीति है, आज पर्यन्त कोई विवाह ऐसा नहीं हुआ जिस में पतुरिया न गई हो और चाहे कुछ हो वा न हो मेरे पुतवा के विवाह में पतुरिया अवश्य जावैंगी नहीं तो सारी सृष्टि थूकैगी कि उन्हें पतुरिया तक न जुरी, यहातक कि वह समझती हैं कि बिना मंगलामुखी सदासुखी गृह पवित्र ही न होगा, जिन्हें यह भी तमीज़ ( योग्यता ) नहीं रही कि इसका ले जाना नाच कराना हमारी बहुओं को कितना हानिकारक होगा । हमारे नातेदार

बराती नाच देखकर क्या २ कौतुक न रचेंगे । कोई २ तो अपनी लुगाइयों को मुँह तक न लगावेंगे । सारी धन सम्पत्ति उसी पर निछावर कर देंगे । सारा घरबार धूल में मिला अपनों से विमुख हो उसी के द्वार की खाक छानेंगे । बहुतेरे उन में से ऐसे भयानक परिणाम वाले रोग अपने घरों में ला बसावें गे, जिस के प्रभाव से सन्तान तक आयु भर रोती फिरैगी । आज सैकड़ों पुरुष जो नीमकी टहनी हाथ में लिये घूमते रहते हैं, यह इसी नाँच का प्रताप है जो उन्हें कर्मपत्र मिले हैं । हा शोक, उन के बुलाने पर तुम्हें हठ ! और स्वयं भी नाच देखने का चसका ! देखो जहां नाच होता है स्त्रियों के लिये भी अवश्यमेव छत खिड़कियों के द्वारों से नाच देखने का प्रबन्ध किया जाता है। वह देखती हैं कि एक परले दर्जे की कुमार्गी, दुराचारिणी, निर्लज्ज स्त्री नीचे से ऊपर तक गहनों में लदी हुई है, दिन में चार २ बार वस्त्र बदलती है, सुगन्ध से महक की लपटें सी निकल रही हैं, पास खड़े हुओं के मस्तक सुगन्धियों से परिपूरित हो रहे हैं, उसकी वह मान प्रतिष्ठा है कि एक मनुष्य पान लिये खड़ा है, दूसरा पीकदान ! उसके कहने की देर नहीं कि तुरंत उपस्थित किया गया । सब खड़े हुए उसकी ओर देखते और हांजी हाजी कर रहे हैं । जिस से वह कुछ बात कह देती है वह ही अपने को कृतार्थ समझता है । उसे बैकुण्ठ बहुत निकट रह जाता है । सब फूले नहीं समाते । वह यह भी देखती हैं कि हमारे पति भी उन्हीं में सम्मिलित हो वैसे ही प्रसन्न हो गुलछर्रें मार रहे हैं । सोचती हैं कि मैं गोबर पाथती हूँ, चर्खा कातती हूँ, चक्की पीसती हूँ बरतन मांजती, रोटी पकाती, हर तरह से रात दिन टहल सेवा गृहधन्धों में लगी रहती हूं । नाना प्रकार की घुड़कियां झिड़कियां भी सहती हूं । जैसा मिलगया खा लिया, पहन लिया, फिरभी मेरे पति जिस समय घर में आते हैं नाक भौंहें चढ़ाये होते हैं । बाहर चाहे जैसे सभ्यता से वार्तालाप करते रहे हों परन्तु घर में तो क्रोध और गाली के अतिरिक्त बात नहीं, इधर पति का यह बर्ताव उधर सास श्वशुर ननन्द जिठानी की कठिनाइयां ।

एक ओर यह विचार भीतर ही भीतर काम कर रहा है, दूसरी ओर उस पतुरिया का गान बड़े व्याख्यानदाता की नाईं मन पिघला रहा है वह वही प्रेम, प्यार, विरह आदि की दशा को दिखला दिखला, इशारे, नाक, भौंहों से बतला बतला कर अपनी ओर झुका रही है। वह साफ शब्दों में बता रही है, परन्तु जो मोह मदिरा पिये प्रेम के रज्जू में बँधे हैं उन्हें कुछ पता नहीं लगता कि क्या हो रहा है। वह इस प्रकार सैकड़ों रागों में उन की ओर देख कर कहती हैं कि "पिया की कमाई कभी छल्ला हूं न पायो, यार की कमाई यह सारा गहना" जो क्या नहीं बतलाता है ? कि यदि तुम भी मुझ जैसी हो जाओ तो ऐसा ही गहना पाता पहरने को मिले, इसी नाच को देख कर सहस्रों बड़े २ घरों की स्त्रियां निकल २ कर पतुरियां बन रही हैं जो केवल अविद्या का कारण है। यदि वह पढ़ी लिखी समझदार होतीं तो प्रथम तो नाच ही न देखतीं और देखतीं भी तो यही तात्पर्य निकालतीं कि एक चिथड़ों की पहनने वाली टुकड़ों की खाने वाली स्त्री, यदि पतिव्रत धर्म में स्थिर है तो क्या यह उसकी बराबरी कर सकती है? यह व्यभिचारिणी स्त्री है, वह समझती हैं कि यह बाहरी झलक जो इसमें दिखाई दे रही है भीतर से यह अनेकान रोगों से ग्रस्त है, जिससे स्वयं कुष्ठिन बन अपने सारे प्यार करने वालों को उसका स्वाद चखा रही है, जो नीम की डाली लिये घूम रहे हैं। जब युवावस्था ढल जावेगी। तब उसको कौड़ी तक को कोई न पूछेगा। हमारे बाल बच्चे सेवा सुश्रूषा करेंगे उस समय यह मांगती डोलेगी, दो दो दानों को तरसेगी, कभी पापों का फल भोगे बिना नहीं बचेगी।

माता जी ! मैं इस विषय को लिखता हुआ लजाता जाता हूँ पर देश की दुर्दशा और स्त्री पुरुषों की अज्ञानता के कारण विवश हूँ। अतएव आप इतने ही से नाच के हानि लाभ समझ कर स्वप्न में भी नाच कराने अथवा देखने का विचार न करो और न बालकों व पुरुषों को देखने दो, सत्य कहा है:—

### कवित्त ।

शुभ चाल को छोड़ कुचाल चले, परमेश्वर की कुछ लाज न आई । हा ! नाच कराय के रांडन को व्यभिचार में सब सन्तान फंसाई ॥ पर रांड के प्रेम के बंधन में पितु मात की सारी विभूति उड़ाई । धन धर्म बिगाड़ लियो अपनो, काहे रांड नचावत हो मेरे भाई ॥

## निवेदन ।

बहिनो ! आज कल नाम मात्र के कपड़े रंगे हुये साधु, फ़क़ीर, बरवा, तेलिया, कनफटा, ज्योतिषी, रम्माल, नौते, सियाने ऐसी २ ठगाई करते हैं और कभी हाथ देख कर, कभी पत्रा खोल कर, कभी हाथ की सफाई, कभी बुद्धि के चमत्कार, छल, धोखा से ऐसा २ प्रभाव डालते हैं कि किसी समय बड़े २ पढ़े लिखे इन के दम झासों में आजाते हैं । फिर तुम अल्प बुद्धि मूर्खा निरक्षरा की क्या गिनती है । इस लिये मैं तुम्हें कई एक उन के छल और धोका देने वाली बातें बताता हूँ, इन्हें जान कर इन्हीं से और बातों में भी फल ग्रहण कर लेना और यह तुम्हें चाहे जैसे किसी प्रकार फुसलावें, धमकावें, डरावें तुम सदा यही समझना कि चाहे इस समय वह बात हमारे विचार में नहीं आती । जब तक हम इसे तर्क और शास्त्र द्वारा न जान लें नहीं कह सकतीं कि यह छल कपट से शून्य है । सहसा विश्वास न कर लो । सदा बात कहने वाले के प्रयोजन पर ध्यान देना चाहिये कि यह जो कह रहा है इस में इस का मुख्य तात्पर्य क्या है । यदि उस का जाती लाभ धोखे के साथ है, समझ लेना कि यह मक्कार धोखेबाज़ है ।

## ❋ साधु, फ़क़ीर, ब्रह्मचारी ❋

यह बात भले प्रकार समझलो कि एक का शरीर, कर्म दूसरे से प्रथक होता है, उसकी आत्मा दूसरे से भिन्न नहीं होती । इस लिए यह

शब्द श्रेष्ठ साधु धर्मात्माओं के लिए प्रचलित होना चाहिये, परन्तु आज सहस्रों में एक साधु, फ़क़ीर, ब्रह्मचारी चाहे आप को प्रथम सा दिखाई पड़े, जो उन भलाइयों से परिपूरित हो। वेद अनुयायी वेदोक्त चलन रखने वाला उसकी आज्ञाओं का पालन करने वाला हो, जो ऐसा है वह बड़ा ही मान प्रतिष्ठा के योग्य सराहनीय है। उस का मान करना प्रत्येक का धर्म है। जहां श्रेष्ठों की प्रतिष्ठा नहीं होती और अयोग्यों की पूजा होती है, वहां अकाल, मरी और बड़े २ उपद्रव खड़े ही रहते हैं। उन महात्माओं के बड़े सादे सच्चे जीवन होते थे। रँगे कपड़े इस लिये पहने रहते थे कि उस में कम खर्च था और शीघ्र मैले नहीं होते थे। आज तक इन कपड़ों की प्रतिष्ठा सर्व साधारण की दृष्टि में विद्यमान है। कोट, पतलून पहिनने वाले दिन रात्रि में दश २ वार गिल्लो विल्लो जान की छत पर चढ़ें उतरें उन्हें कोई नहीं रोकता, परन्तु यदि कपड़े रँगे हुए पहिना हुआ कोई एकवार भी उधर को जावे तो सर्वजन उँगली उठाते ताने से याद करते हैं कि वाहरे महात्मा! यह कपड़े और यह काम, शर्म को भी शरमा दिया।

आज अधिकांश प्रायः ऐसे ही मिलते हैं जिन के लिये रँगे सियार का शब्द प्रदान करना अनुचित नहीं, क्योंकि न तो उन में कोई साधन मिलते हैं न धर्म के लक्षण उन में घटते हैं, न वह योग की आठ सीढ़ियों में से प्रथम सीढ़ी यम पर भी पैर रखते प्रतीत होते हैं। ब्रह्मचारी कहां उन का तो नाम ही शेष है। वह सर्व गुणों से सम्पन्न होते थे। आज यह चर्स, भंग, गांजा अफ़यून खाना अच्छा जानते हैं और नाना प्रकार के अवगुणों से परिपूरित पाये जाते हैं। विद्या से नितान्त शून्य, चिमटा चिलम भगवे कपड़े वहां साधु महात्मा धर्मात्मा ब्रह्मचारी होने का चिन्ह उन के पास है। यदि कहो आप ने विद्या नहीं पढ़ी तो वह कह देते हैं कि—पढ़े लिखे नहीं होये काज, हल जोतें घर आवे नाज।

पठितव्यं तदपि मर्तव्यं न पठितव्यं तदपि मर्तव्यं।
पुनः दन्तकटाकट किं कर्तव्यं॥

अर्थात् पढ़ेंगे तो भी मरेंगे, न पढ़ेंगे तो भी मरेंगे फिर दांत क्यों बजायें नहीं सोचते कि कोई यदि इसी तरह कहदे :—

**खातव्यं तदपि मर्तव्यं, न खातव्यं तदपि मर्तव्यं।**
**फिर अन्न भसाभस किं कर्त्तव्यं॥**

अर्थात्—खाओगे तो मरोगे न खाओगे तो मरोगे, फिर अन्न भसा भस क्यों करना। तो क्या उत्तर दें और कह देते हैं—कहो रामसीता जाही में भागवत जाही में गीता, बहुत सी मालायें गले में डाल लीं बहुत से तिलक छाप लगा लिये, बहुत हुआ गीता पुस्तक हाथ में लेली फिर क्या न्यूनतता उन के साधुपने में रह गई। एक दो विधवायें साथ लेलीं, जात पांत का कोई ठिकाना नहीं। बहुतेरे इश्तहारी डाकू इस बेष में मिलते हैं। जैसा कि :—

**गीता पुस्तक हाथ साथ विधवा माला विशाला गले।**
**गोपी चन्दन चर्चितं सुललितम् भालेच वक्षःस्थले॥**
**वैरागी नटवा कलाल पटवा धोबी धुना धीमरा।**
**हा वैराग्य! कुतो गतः कलियुगे गुण्डाः परं वैष्णवाः॥**

जहां उन का यह ख़याल था कि लुहार में यदि लोहे की तलवार बनाने की सामर्थ्य है तो लोहे में भी बनने की। जैसे नेत्र के ज़रा से तिल में सम्पूर्ण वस्तुएं दिखाई दे जाती हैं। वैसे ही मनुष्य अपनी बुद्धि में सारे वेदों के ज्ञान को धारण कर सकता है, शोक! कि वहां आज वेदों के नाम से भी घृणा। कहते हैं कि :—

**वेद पढ़त ब्रह्मा मरे, चारो वेद कहानी।**
**सन्त की महिमा वेद न जानी।**
**ब्रह्म अज्ञानी आप परमेश्वर॥**

आज सहस्रों इसी प्रकार का उपदेश देते हैं कि तू अज्ञानी है, जो

पाप से डरता है, हम ज्ञानी हैं, पाप से क्यों डरें। हमारे और परमेश्वर में भेद ही नहीं है, हम ही परमेश्वर हैं। जब तक अज्ञान रहता है, तब तक माया है, भेद है। जहां दूर हुआ फिर कुछ भेद नहीं। ब्रह्म एक है दूसरा कुछ नहीं। उन से पूंछे कि परमेश्वर क्या है, उस का गुण लक्षण क्या है। वह मालिक ज्ञानी, व्यापक क़ादिर है या नहीं? कहते हैं क्यों नहीं। तो फिर उन से पूंछिये कि मालिक विना मिलकियत, आलिम विना मालूम, व्यापक विना व्याप्य, क़ादिर बिना कुदरत के कैसे मान लिया जावे, यदि मौसूफ मानोगे तो इसके लिये सिफ़त (गुण) का होना और सिफ़त मानोगे तो मौसूफ का होना लाज़िम होगा, इस प्रकार द्वैत हो जावेगा, अद्वैत कैसे रहेगा। फिर कहते हैं कि यह माया का फेर है। उनसे पूंछिये कि एक परमेश्वर के सिवाय अन्य कोई नहीं तो अभाव कैसे हुआ, जो न्याय से असंभव है "नाऽवस्तुनि वस्तुसिद्धिः" सृष्टि कैसे बनी। दूसरे हमारे तुम्हारे विचारों में अन्तर क्यों है। तुम्हें मारने से हमारे दर्द क्यों नहीं होता। कहते हैं भ्रम से। फिर पूँछिये कि जब एक के अतिरिक्त कोई शाही नहीं तो भ्रम कैसे और किस से पहले पहल हुआ। जिस ईश्वर को भ्रम हुआ वह ईश्वर कहला सकता है? तब अनिर्वचनीय कह कर टालते हैं यहां तक कि अनेक पापों को करते हुए अपने को पापी नहीं मानते। इनसे पूंछिये कि परमेश्वर सर्वज्ञ है, उस ने सूर्य चन्द्र बना दिये, तुम में भी कुछ शक्ति है? तो कहते हैं कि हम अभी अज्ञानी हैं, अभी ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ जो हम अपने को अलग जानते हैं वा अशक्त मानते हैं। तब उनसे कहना चाहिये कि यह जो आप ने इतनी देर शिर मारा, सब अज्ञान से? अज्ञानी मूर्ख की बात का क्या ठीक। जब तुम्हें ज्ञान हो जावे तब बात करने के योग्य बन सकते हो। अभी आप की बात मानने के योग्य कैसे हो सकती है 'अहंब्रह्म' कहलाने वाले अपने को वेदान्ती बतलाते हैं, जिससे सिद्ध होता है कि उन्हों ने वेद का अन्तर पाया है, उसी को लेकर भागे हैं, बुद्धि आदि का पता नहीं लगा सके। इस लिये ग़लती (भ्रम) में पड़े

हैं, जो कुछ पाप करते हैं, समझते हैं कि उस का कर्त्ता ब्रह्म है, इस लिये जो पाप न करें, वह थोड़ा ।

आप को इन भेषधारियों से यह शोच कर बहुत ही बचना चाहिये कि सीता महाराणी को रावण भेष बदल कर निकाल ले गया था । साधु जन मूर्ख तक की बात का दोष मानते, परन्तु हरवक्त क्रोधाग्नि से सुलगते रहते हैं । यदि कोई उनके विरुद्ध कुछ कहदे, फिर देखिये क्या दशा होती है । यद्यपि महात्माओं का कथन है कि आक्षेपों से मत डरो, यही आक्षेप तुम्हें अन्त को धर्मात्मा बना देंगे । जैसा किः—

**जीवन्तुमे शत्रुगणाः सदैव येषां प्रसादात्सुविचक्षणोहम् ।**
**यदा यदा मे विकृतं भजन्ते तदातदामां प्रतिबोधयन्ति ॥**

मेरे वैरी सदा जीवित रहें कि उनकी कृपा अर्थात् उन की चितावनी से मुझे अपने पापों का बोध होजाता है और उस के सुधार की ओर ध्यान आकर्षित होता है । अब मैं आप को दो एक फ़क़ीरों की धोखेबाज़ियां दिखलाता हूं ।

इस शहर शाहजहांपुर में एक बुडढा फ़क़ीर लंगोटी लगाये एक अधिक समय से आया जाया करता है वह बहुधा किसी को लौंग, किसी को छुहारा हाथ बढ़ा मुट्ठी बन्द कर मंगा दिया करता है । वह चीज़ें इस तरह से अपने पास गुप्त रखता है कि किसी को ज्ञान नहीं होता । सम्पूर्णतया उस पर यह विश्वास डटा हुआ था, कि यह कहीं से मंगा दिया करता है । कोई उसे पहुँचा हुआ बताते थे, कोई भूत अछूत उस के वश में समझते थे । मैं भी चक्कर में था । उसके भेद की बात प्रकट नहीं होती थी । आपने भानमती का खेल देखा होगा, उन से उसके हाथ में सफ़ाई ज़रा भी न्यून न थी, वरन् अधिक । एक दिन वही साहिब कचहरी दीवानी सरकारी के विकालतखाने में पधारे, आते के साथही एक लड्डू नुकती का छत से लगकर फ़र्श पर गिरा । बहुधा

पुरुष दौड़े और उठाकर प्रसादी पाने लगे । उसकी जाति अर्थात् वर्ण का कोई ठीक पता नहीं मालूम, परन्तु उन्हें इस से क्या । वहुतेरे चमार, भंगियों ने गांवों क़स्बों में बड़े बड़े हण्डे किये, सैकड़ों मूर्तियों को खिलाया । वहां वाले खाते रहे, पश्चात् को विदित हुआ कि वह चमार वा भंगी है और उसकी बड़ाई के चहुँ ओर राग गाने आरम्भ होगये। लोग वर्षों से उस पर विश्वास जमाये थे । उसकी अफ़यून के लिये चन्दा एकत्रित होने लगा । एक साहिव वदायूं ज़िले के बैठे हुये थे। इस दशा को ध्यान पूर्वक देखते रहे, उन्हों ने पच्चीस रुपये गोट से निकाल कर रख दिये कि आप साहव क्यों चन्दा करते हैं मैं २५) रुपये देता हूं जो एक अधिक समय को हो जावेंगे । वावाजी से कहो एक लड्डू और मँगादें । लोगों ने वावा जी से वहुतेरा निवेदन किया कि एक और मँगा दीजिये और थाही नहीं, मँगाते कहां से वात टालने लगे । आज शनैश्चर है दुवारा नहीं आसक्ता । तव उनकी क़लई खुली, लोगों ने जाना कि यह हाथ की सफ़ाई थी । इसपर भी वहुत से उसके विश्वासी वने हैं । इसी प्रकार गांवों में वहुधा "वरवे" घूमते फिरते हैं । अपने सर में दूध और सुर्ख़ रंग के फ़लीते भिगोकर रखते हैं। स्त्रियों से हाथ देखकर वा उनकी किसी कामना पूर्ण होजाने पर कहते हैं कि यदि काम होजावेगा तो दूध की धार निकलेगी, नहीं तो रक्त की । जो चाहते हैं, निकाल देते हैं । स्त्रिया मूर्खायें डर जाती हैं और वहुत कुछ उनकी भेट चढ़ाती हैं । इसी तरह ज्योतिषी पण्डे देवी की मूर्ति के डोले लिये घूमते हैं और मरी या अकाल के दिनों में अधिकांश और वैसे भी मनगढ़न्त देवी का स्वप्न स्त्रियों को सुना सुना कर उन्हें डराकर लूटते फिरते हैं । उनमें से कोई २ खेलते त्रिशूल चढ़ाते वकते वकाते हैं । तुम इन को नितान्त झूठा जानो ।

हाथ के देखने वाले ज्योतिषी तेलिया हाथ की रेखायें जो परमेश्वर ने मुट्ठी के खुलने वन्द होने के हेतु वनाई हैं, उन्हें देखकर झूठी गप्पें सुनाकर ठगते हैं । वहुत सी वातें स्वयं प्रिय हुआ करती हैं । वह

कहते हैं कि तुम जिसके साथ भलाई करती हो, वह मानता नहीं, वरन् उलटी तुम्हारे साथ बुराई करता है । तुम्हारे हाथ में यश नहीं है । किसी अमीर के घरकी स्त्री को देखा उससे कह दिया कि तेरी धन की कोठरी भरी है, तू सदा पूरी रहेगी । कंगाल की स्त्री को देख, कह दिया जो धन आता है वह उठ जाता है रुकता नहीं । बहुतेरे उन में ऐसे चालाक होते हैं कि दो एक दिन पहले जिस टोला में जाना होता है, उसके पुरुषों, स्त्रियों, बालबच्चों के हाल दरियाफ्त कर जाते हैं कि क्या दशा है, कै बालक हैं, विवाह हुआ या नहीं, चार सच्ची हुई, फिर दो झूठी भी होगई तो कुछ ध्यान नहीं होता । भविष्यत् की बात जो चाहते हैं वह बता देते हैं । क्योंकि उन्हें दो चार दिन रहना नहीं है । मैंने अपनी आखों से देखा है कि उसके साथ तीन चार आदमी होते हैं । एक कहीं बैठता है, एक कहीं, इस प्रकार कि एक दूसरे को देख सकें, इशारा पहचान सकें । एक हाथ देखता है, दूसरा लड़कों वा स्त्रियों से पूछता जाता है कि यह कै भाई हैं, कै लड़के लड़कियां हैं, क्या करते हैं, उधर हाथ उंगलियों के इशारे से बतलाता जाता है । उंगलियों के उठाने की जानने की बातें ठहराई गई हैं, हाथ का देखनेवाला अर्थ के लिये बहरा भी बनजाता है । तब दूसरा पास का बैठा हुआ इशारे से समझा देता है । ऐसी बहुत सी मक्कारी हुआ करती हैं । इन फ़क़ीरों में से बहुधा कई एक मिलकर दिन को फेरी देते हैं, भीख मांगते हैं, रात को चोरी करते हैं । बहुधा इश्तहारी डाकू रूप बदले हुवे इसी भेष में छिपे हुवे घूमते हैं । समाचार पत्रों से पता लग सकता है कि इन में से कितने पकड़े जाते और दण्ड पाते हैं । इन में से कोई सिद्ध, कोई साधक बन जाते हैं । झूठी बड़ाई लोगों को सुना कर माल उड़ाते हैं, अन्त पर क़लई खुल जाती है । बहुतेरे रसायन का धोखा देकर, इत उत का माल इकट्ठा कर, लेकर भाग जाते हैं अभी छः सात वर्ष हुवे जहां तक मुझे ज्ञात है दिल्ली या उस के समीप का समाचार है । कई फ़क़ीर आपस में विचार कर दिल्ली आये उन में से एक युवा रूपवान् को महन्त सिद्ध बनाया, आप साधक बने और

सम्पूर्ण नगर और पास में उस की बड़ाई गा फिरे अब क्या था भीड़ें दर्शनार्थ आने लगीं, एक साथ सब को दर्शन नहीं होते थे । वह साधक जिन्हें उन के दर्शनों को ले जावें उन का कच्चा चिट्ठा पहिले ही से उन्हें बतला आवें वा इशारे से अपने ठहराये हुए गुप्त भेदों से जतला आवें । यदि कोई नया पुरुष आवे कि जिस का कुछ हाल उसे न ज्ञात हो, तो उन से प्रथम उन के टोले जाति निवास नाम का पूरा पता पूँछ लें और कह दें कि कल दर्शन होंगे तब तक वह जाकर पता लगा लें । इन बातों से सिद्धजी का नाम इतना प्रसिद्ध हुआ कि कुछ ठीक नहीं, कभी उन्हें देवता पूर्ण पहुँचे हुए समझने लगे, खूब ही भेंट आई । स्त्रियां भी दर्शनार्थ आया करती थीं । एक दिन बहुत सी स्त्रियां उनके दर्शनों को आईं, उन के साथ नवयौवना अति रूपवती खत्री की विधवा कन्या आयु पन्द्रह सोलह वर्ष की थी, उस के हाथों में चांदी की चूड़िया पहने हुए देखकर यह भांप गया कि विधवा है । यह उन स्त्रियों को देखकर पीठ फेरकर बैठ गया और कहा कि तुम सब स्त्रियां चली जाओ, दर्शन नहीं होंगे । उन्होंने कारण पूँछा । बहुत हठ से बताया कि तुम्हें बताकर क्या करें, तुम्हारे साथ एक अमुक स्त्री है । यह खास मेरी ही स्त्री थी । इस को मैं तीन जन्म से विधवा करता आया हूं । और अभी इसे बेवा कर के थोड़े ही दिन हुए यहां आया और अभी तीन जन्म अगाड़ी तक मेरी इच्छा इसी प्रकार विधवा करने की है । यह बड़ी दुष्ट है । इस लिये मैं इसका मुख नहीं देखना चाहता इस समय तुम सब की सब चली जाओ और इसे भी मेरे सामने से ले जाओ । यदि तुम्हें दर्शन करना ही हो तो फिर इस से अलग हो कर आना, और दर्शन कर जाना । यह भी डाट दिया कि देखो इस की चर्चा पुरुषों से न करना नहीं तो तुम्हारा सब का सत्यानाश कर दूँगा । बस अब क्या था, लगी मूर्ख स्त्रियों में खिचड़ी पकने । साधु जी बड़े सच्चे पूरे महात्मा हैं, इतने दिन आये हुए, कैसी कीर्त्ति चहुँ ओर छाई है, जो बात कहते हैं मानो मनकी धरी हुई बता देते हैं । हो न हो यह तेरे अवश्य ही पति हों । तुझे इन्हों ने ही विधवा किया है ।

इतने दिन हो गये सहस्रों स्त्रियां आईं गईं कभी किसी ओर से न कहते कि तू मेरी लुगाई है देखो वह तेरा मुख भी देखना नहीं चाहते । मानो न मानो परन्तु यह तेरेही पति हैं । इस लिये अब तो तू चल समय कुसमय अकेली आ आ कर भले प्रकार हाथ पांव जोड़, अपने अपराध क्षमा कराना । यदि अपना भला चाहती है तो इन्हें प्रसन्न करले, नहीं तो बेटी! कई जन्म पर्यन्त तक क्लेश भुगतने पड़ेंगे । यदि तुझे यह महात्मा स्वीकार कर लेंगे तो अहो भाग्य । अरी ! इन जैसे साधुमहात्मा की बात पत्थर की लकीर होती है कभी टाले नहीं टलती फिर तू पछतावेगी, कुछ नहीं होगा । जिस का फल यह हुआ कि वह इस बार्ता को सत्य जान, उस धूर्त के निकट रात बिरात, समय असमय आ आ कर हाथ पैर जोड़ती । घण्टों मनाती थी । पहले वह फटकारता रहा अन्त में एकदिन उसे लेकर भाग गया । पीछे से पता लगा कि बहुत स्त्रियां इन धूर्तों ने इसी प्रकार इकट्ठी की थीं । जब घरवालों को ज्ञात हुआ आप जानते ही हैं कि एक घर में विधवा हो सम्पूर्ण घर की जान जंजाल और विपत्ति में उस के दुःख में होती है । सारा घर उसकी मौत चाहा करता है । किसी ने कुछ कहा, किसी ने कुछ । अन्त को यह ठहरी कि यदि उसे ले भी आये तो क्या उसे घर में थोड़े ही रख सक्ते हैं । बिरादरीवालों का भय है इस लिये चली गई सो चली गई । अब गुनगुना दूध उगलने का न पीने का, बदनामी हो गई । अब लाने में और अधिक फ़जीता होगा । बैठ रहे । इसी प्रकार के नाना ढोंग रचकर धोका देदे कर आंख के अन्धे गांठ के पूरों को ठगा जाता है उन्हों ने ही इस दोहे को सत्य कर दिखाया ।

दोहा ।

पाग बांध के ना चढ़ें, ना धर ब्याहें मौर ।
करी कराई ले भगें, यह संतन के तौर ॥

## ❀ ज्योतिषी या पत्रा पांडे ❀

वेदों के छः अंग हैं ( १ ) शिक्षा ( २ ) कल्प ( ३ ) निरुक्त ( ४ ) व्याकरण ( ५ ) छन्द ( ६ ) ज्योतिष, इन में से ज्योतिष एक अंग है । इस के सम्बन्धी जितना गणित है वह सब सत्य है इस में बीज गणित, रेखा गणित आदि बहुतरी विद्यायें सम्मिलित हैं । इस के जानने वाले तारों चन्द्रमा की चाल शीतोष्ण ऋतु के हाल जानते हैं, इस से समय आदि की गणना होती है इसी से सैकड़ों वर्षों के ग्रहण का हाल कि कब २ कहा २ पड़ेगा और दिखाई देगा । सूर्य, पृथिवी की चाल आदि का हाल जाना जाता है । बनारस के मानमन्दिर में इस के जानने वालों की योग्यता देख कर उन की विद्या का कुछ पता लगता है । किन्तु वह सम्पूर्ण योग्यता और मान आज लालच और अधिक तृष्णा ने खो दिया । गणित के स्थान पर फलित के झगड़े आरम्भ कर दिये और उन बहानों से लोगों को धोखा देकर माल मारने लगे । वह ग्रह किसी को इष्ट किसी को अरिष्ट बताकर उन के नाम से जप दान करा कर अपने घर ले जाने लगे । जैसे नदियों की उतराई का ठेका ठेकेदारों के पास होता है इसी प्रकार वह स्वयं ग्रहों के ठेकेदार बन गए । उन्हों ने आश और भय के जाल में ऐसा फासा और विचित्र बुद्धि से काम लिया कि सारा हाल छोटी सी पुस्तक शीघ्रबोध मुहूर्त 'चिन्तामणि में पाया जाता है । यदि कोई चोरी करने की सायत पूछे वह भी उस में उपस्थित मिलती है । जार कर्म करने, जुआ खेलने, पराई स्त्री भगाने आदि जिस अच्छे बुरे कर्म के विषय में चाहो पूछ लो । एक मुक़द्दमे में यह अवश्य निश्चय है कि एक जीतैगा दोनों जीत नहीं सके, परन्तु दोनों की शुभ सायत बताई जाती है, दोनों ही पूजा पाठ में ठगे जाते हैं । सच्ची परापरीत को इन पुस्तकों ने मिटा दिया जिस का फल यह हुआ कि आज सैकड़ों विधवायें उन की जान को रोती हैं कि यह कैसी परापरीत मिलाई थी । पाप का फल प्रत्यक्ष है कि जितनी विधवायें आप को इन नाम के पण्डितों पत्रापाण्डों के यहा मिलेंगी अन्यत्र नहीं । तब भी लो

आज आंखें नहीं खुलतीं । यदि इन्हें परापरीत ही मिलाना आता तो उन्हीं की कन्या जिस का द्विरागमन तक नहीं हुआ क्यों विधवा होकर बैठती । यदि कहो परमेश्वर की गति, तो फिर तुम क्यों अपनी ग़प्प मिलाते हो ? तुम क्यों नहीं उन के माता पिता को अपनी रुचि के अनुसार वर ढूँढ़ने देते ? क्यों मीन मेष बीच में लगा देते हो ? मुक़द्दमे की कल तिथि है पण्डित जी के यहां दिशाशूल है । क्योंकि शनैश्चर, सोमवार को पूर्व और इतवार, शुक्रवार को पश्चिम, मंगलवार, बुध को उत्तर और बृहस्पति को दक्षिण जाने का निषेध है । अब बतलाइये यदि वह न जावें तो दिशाशूल उन के मुक़द्दमे में पैरवी कर लेगा । आज रेल ने उन के दिशाशूल को तोड़ डाला, सहस्रों पुरुष नित्य प्रति पूर्व से पश्चिम और पश्चिम से पूर्व जाते हैं उन्हें कुछ हानि नहीं पहुँचती जब तक मूर्खता का समय रहा इन्हों ने खूब ही लूटा खाया । सारे भारत वर्ष को पुरुषार्थ हीन बना दिया, बिना पूछे क़दम भर चलना फिरना तक बन्द कर दिया, कोई काम हर्ष वा शोक का आरम्भ वा अन्त उन के बिना कठिन था । अब आप को संक्षेप से दो एक वार्ता इन्हीं ज्योतिषियों की सुनाई जाती हैं । मुझे ध्यान है कि मैं ने सिम्तबर वा अक्टूबर सन् १६०२ई० में एक समाचार पत्र में पढ़ा था कि एक ज्योतिषी साहब इटावे में पधारे, सराय में एक कोठरी लेकर ठहरे, कोठरी के बाहर एक चटाई बिछाकर फ़र्श लगाकर आप बैठे थे । सामने एक त्रिशूल गाड़ रक्खा था, वह त्रिशूल कभी २ हिलता था, लोग बड़े हैंचक थे, जब वह कहता हिलने लगता नहीं तो हिलना रुक जाता । कोठरी के भीतर एक चटाई बिछी रहती थी, जो कोई आदमी आता था उस से कहते थे कि जो कुछ तुम्हें कहना है कोठरी में जाकर चटाई से अलग खड़े होकर कह आओ । तुम्हारा उत्तर मैं दे दूंगा । जब वह जाकर कह आता उस का उत्तर लिखा हुआ उस की चटाई के नीचे आजाता वह दिखला देता कि यही कहा था ? वह कहता कि वास्तव में यही कहा था । एक पाषाण पट्टिका और लेखनी और दावात सम्मुख बढ़िया धरी रहती थी उस पर दिखावे के अर्थ लकीरें करते जाते थे । उन की प्रसिद्धि सम्पूर्ण नगर में हो गई,

सहस्त्रों मनुष्य आने लगे सहस्त्रों रुपये का माल सोने चांदी का गण्डा तावीज के अर्थ उनके पास एकत्रित होगया । एक दिन वह सब लेकर भाग गये, ढूँढने से लखनऊ में पकड़े गये तब भेद खुला कि उन्होंने कोठरी में चटाई के नीचे तहखाना खोद रक्खा था उसमें एक दूसरा पुरुष विठला दिया था वही कहने पर त्रिशूल हिला देता और वही प्रश्न सुनकर उत्तर लिख देता था । इन ज्योतिषियों की जो कुछ दशा है तुम जैसी साधारण बुद्धिवाली स्त्रियों की क्या गिन्ती वड़े २ पढ़े लिखे इनके धोखे में आजाते हैं । साधारण प्रश्न उनसे कीजिये हमेशा दुतर्फी बात कहते हैं, बात वहही तो निकलते रहें दोनों पहलू । यदि कोई स्त्री वा पुरुप उनसे पुछे कि ज्योतिषी जी वतलाइये कि अमुक के पुत्र उत्पन्न होगा वा पुत्री ? ज्योतिषी जी कह देते हैं कि हम मुखाग्र नहीं वरन् लेखवद्ध उत्तर देसक्ते हैं । स्मरण रहे न रहे दोनों में से किसी को विस्मरण होजाय इस लिये लाओ काग़ज हम लिखदें उसे लेजाकर घर में रख छोड़ो जव बच्चा उत्पन्न होजावे तव हमारे निकट ले आना उस समय तुम्हें हमारी विद्या का हाल प्रकट होजावेगा कि अमुक कितने ज्योतिषी हैं । ज्योतिष विद्या समुद्र है । लिख दिया कि "पुत्र न पुत्री" यदि लड़का पैदा हुआ तो पण्डितजी ने कह दिया कि देखो हमने लिखा था कि पुत्र, न पुत्री, अर्थात् लड़का हो लड़की नहीं । यदि कन्या उत्पन्न हुई, न, इधर लगा दिया, पुत्र न, पुत्री, लड़का नहीं होगा लड़की होगी । यदि लड़का लड़की कुछ न हुआ, गर्भ ही न रहा, या पात होगया, तौ कह दिया कि हमने तो लिखा ही था कि पुत्र न पुत्री न पुत्र होगा, न कन्या । अव वतलाइये क्या जाना जावे और साधारण रीति से किस प्रकार ज्योतिषी जी को झूठा वताया जावे । चाहे जैसा प्रश्न उनसे कीजिये यह कभी नहीं कहेंगे कि यह हम नहीं जानते । आप पूछिये कि यह हमारा इतना रुपया वा गहना या अन्य कोई वस्तु माता पिता आदि की रक्खी हुई नहीं मिलती झट नक़शा खींच कर वता देंगे । परन्तु परताल कीजिये, सौ में एक भी ठीक नहीं । यदि उन्हें यही हाल मालूम होजाता होता तो पृथिवी में सहस्त्रों लक्षों रुपया

दबा हुआ है स्वयं ही क्यों न निकाल लेते ? क्यों मारे २ दो दो रुपये को फिरते ।

आज कल के ज्योतिषियों के पास जाकर साधारण प्रश्न किये जाते हैं वही सन्तान धनप्राप्ति रोग तथा विवाह आदि के मध्ये । वैसाही साधारण प्रश्नों का उत्तर साधाराणही होता है कोई बीजगणित, रेखा गणित, ज्याग्रफ़ी का प्रश्न पूछिये वा न्याय, व्याकरण, साइंस फ़िलासफी के प्रश्न कीजिये फिर देखिये कि वह प्रश्न भी बता सकें या यही पूछिये कि हमारे घर हमारा पैदा किया हुआ कितना रुपया है हमारे पितादि से कितना प्राप्त हुआ वह कहां कहां है ।

ज्योतिषी बता देते हैं कि तुम्हारी उन्नति होगी, अमुक मास में धन हाथ आवेगा उनसे पूछिये कि कल भविष्य को अमुक डाकखाना वा स्टेशन पर कितना द्रव्य आवेगा, इसे टाल जावेंगे क्योंकि शीघ्र विद्या ज्ञात होजावे। यह जिस नगर में जाते हैं वहां के रहने वाले दो एक चलते हुवे पत्रा पांडों को मिला उनका भाग ठहरा खूब माल मारते हैं ।

पराप्रीति में जो बात मिलाना चाहिये वह नहीं मिलाते अन्य की अन्यही मिलाते हैं । लोभ महा रिपु है । यही सब पापों का मूल है । इसी के चक्कर में फँस अनमिल बेजोड़ जोड़ा मिला देते हैं । माता पितादि को सूझता नहीं कि:—

**परहथ बनिज सँदेसे खेनी । बिन वर देखे व्याहे बेटी ॥**

यह कभी काम सफलता को प्राप्त नहीं होते । परन्तु वह सैकड़ों हानियों को देखते हुए भी इस ओर पुरखों की रीति टूटने के कारण ध्यान नहीं देते । जिन परीक्षाओं को वैद्य डाक्टर द्वारा करानी चाहिये, उनकी आरोग्यता, बल पराक्रम की जांच करना चाहिये । योग्यता, सभ्यता, चाल चलनकी जांच परताल के स्थान चूहा बिल्ली गर्व नाड़ी आदि झूठे ढोंग में की जाती है जिसका फल प्रत्यक्ष में प्रकट है कि पति अपनी राह जाता है पत्नी अपनी राह । यही परापरीति है जिसके कारण योग्य

स्त्री अयोग्य वर के गले मढ़ी जाती है । बाल्यावस्था बीते पर्यन्त गुण कर्म स्वभाव की परीक्षा नहीं होसक्ती परन्तु आज बाल्यावस्था के विवाह का नाम तो हर्ष नोदक और युवावस्था के विवाह का अर्थ निकासू घर बसौअर आदि रख छोड़ा है । यहां तक कि ( प्रथम लिख दिया गया है ) बालकों को भांवरों के समय सोते से उठाया जाता है उस से कहा जाता है कि चलो, फेरे खालो, अर्थात् भांवरें डलालो । वह कहता है कि पेड़े तुम्हीं खालो मुझे भूख नहीं । जिसे पेड़े फेरे की समझ नहीं वह विवाह के समय की प्रतिज्ञाओं का कैसे स्मरण रख सकता है या उन का पालन कर सकता है ? यदि आज आप गहरे विचार से देखें तो ज्ञात हो कि विवाह वर कन्या का नहीं वरन् दोनों ओर के पंडितों का होता है । यदि कहो विकालतन क्यों यह काररवाई न समझी जावे तो बयान वा इज़हार दोनों ओर के मुक़द्दमे वालों का असालतन होता है, वकील का नहीं होजाता । इसी भांति प्रतिज्ञा भी वर कन्या को स्वयं करना चाहिये पंडित नहीं कर सकता । आप क्या सोचते हैं आज तो विवाह उस अवस्था में होजाते हैं जब मुंह से बात तक नहीं कर सक्ता । देखो तो १९०१ की मर्दुमशुमारी में हिन्दुओं में एक वर्ष आयु वाली विधवाओं की गणना १८५९ है अधिक आयु वालियों का तो वर्णन ही क्या जिनकी मिलाकर गणना २,८५,९१,९३६ है । जिन की ठंढी श्वासों का धुवां भारत को रसातल लिये जा रहा है । वा कहिये कि आज विवाह वर के साथ नहीं होता वरन् श्वशुर के साथ होता है क्योंकि इतनी न्यून अवस्था में उस के गुण कर्म की परीक्षा तो हो ही नहीं सकती यह देख लिया जाता है कि इस का पिता धनाढय है, पुनः विवाह पश्चात् वह चाहे महा दुराचारी निकल कर चाहे सब कुछ खोकर दोदो दानों को मारा २ फिरे इस की कुछ परवाह नहीं । देखिये इन ज्योतिषियों ने क्या के क्या अर्थ लगा दिये जो उन की चतुराई छल के साथ कहिये वा अज्ञानता । देखो शुक्र के अर्थ वीर्य के थे उस के उदय होने पर अर्थात् युवावस्था पूर्ण होने पर विवाह होता था । जब बाल्यावस्था का विवाह रचाने लगे तो उस के अर्थ को कहां ले जाते, इस लिये बता

दिया कि शुक्र तारे का जब उदय हो तब विवाह हो डूबने पर नहीं शुक्र के अर्थ वीर्य निम्नलिखित श्लोक से प्रकट हैं।

**रसाद्रक्तं ततो मांसं ततो मेदः प्रजायते।**
**मेदसोस्थि ततो मज्जा मज्जाः शुक्रसम्भवः॥**

रस से रक्त, रक्त से मांस, मांस से मेदा, मेदा से हड्डी, हड्डी से मज्जा, मज्जा से शुक्र [ वीर्य ] बनता है। ऋषियों का सिद्धान्त था कि सदा युवावस्था में विवाह हुआ करे। क्यों कि वीर्य बहुत अमूल्य पदार्थ है, जैसे इत्र कई बार में खिंचता है अर्क की नांई एक बार में नहीं खिंच जाता। ऐसे ही पेट रूपी भबका में जठराग्नि रूपी आच से तपवा कर सात बार के परिवर्तन के पश्चात् उपरोक्त कथनानुसार वीर्य बनता है यदि कोई इत्र जो ऐसे परिश्रम से खींचा गया है मूत्र की नाली में डाल नष्ट भ्रष्ट कर दे तो उसे कौन बुद्धिमान कहेगा। इसी प्रकार वीर्य जो अमृत तक प्रथम सिद्ध हो चुका है इसे यदि निष्प्रयोजन नष्ट कर दिया जावे तो शोक के अतिरिक्त और क्या कहा जावे आज कच्चे आम की नांई स्त्री रूपी फूस से ढक कर पाल की भांति पकाया जाता है। पाल के आम की गुठली की बेड़ नहीं लगाई जाती परन्तु आज मनुष्य रूपी बागीचा लगाने को इसी पाल के वीर्य से काम लिया जाता है। आज यह यहां तक गिर गए। कोई गंवार हरी भरी खेती को हल जोत कर नहीं उजाड़ देता परन्तु आज गर्भ दशा में भी समागम किया जाता है। आज उलटे अर्थ कर अर्थ का अनर्थ कर अभिप्राय ही बदल दिया। विवाह होने से वीर्य के उदय होने के समय तक वीर्य से शून्यही ढाक के तीन पात रह जाते हैं। यहां पर यह भी स्मरण रखना चाहिये कि गौने ( द्विरागमन ) की कोई पद्धति नहीं है, न प्रथम समय से प्रचलित थी, न इसका किसी स्मृति आदि में वर्णन है। यह तो बाल विवाह का ही बच्चा है। इस के बहाने वह आयु जिसमें विवाह होता था पूरी किये जाने का यत्न किया गया था परन्तु सिद्धि प्राप्त न हुई इस लिये कि जब विवाह जल्द होजाता है फिर यह सूझती है कि चार काम घर के चलेंगे, जैसे बने शीघ्र बिदा

होजावे । छोटी अवस्था में जितने बच्चे मर जाते हैं बड़ी आयु में इतने नहीं मरते । युवा होने पर बहुत कम मरते हैं, जो ईश्वरीय नियम है । छोटे निर्बल पेड़ न्यूनवेग वायु से उखड़ जाते हैं, जब दृढ़ होगए जड़ लग गई तब प्रबल आंधियों से नहीं उखड़ते । इस अर्थ के पूरा करने को नाई पुरोहितों ने सोचा कि यदि जल्द न्यून अवस्था में विवाह हो जावेगा हमारे टके सीधे हो जावेंगे । पश्चात् यदि बच्चा मर भी गया तो हमारी बला से, दूसरे यह भी सोचा कि युवा हो जाने पर विवाह में इतना धन हमारे हाथ नहीं लगेगा क्योंकि उस समय तो अर्थ गठौअल होती है ! बच्चे के विवाह का हर्ष निराला होता है । बहिनो ! तुम कहने सुनने वालों के मुख्य प्रयोजन तत्व हेतु पर भी तो ध्यान दिया करो । मैं ही आप से निवेदन कर रहा हूँ । यदि आप युवावस्था में विवाह करेंगी, आप और आप की सन्तानों को सुख आनन्द मिलैगा, मुझे क्या लाभ होगा ।

इसी तरह बृहस्पति के अर्थ बुद्धि के थे, जिस समय बुद्धि भी उदय हो जावे उस समय विवाह करने की दूसरी प्रतिज्ञा थी सो बुद्धि विना युवा अवस्था हुये यानी २५ वर्ष से प्रथम उदय नहीं हो सकती । और ब्रह्मचर्य का यही समय था और इसी के लगभग २२ वर्ष की आयु की क़ैद कोर्टआफ़वार्डस में रक्खी गई है, उन्हों ने जांच और अनुभव करके जाना कि १८ वर्ष में समझ पूर्णतया उन्नति पर नहीं पहुंचती । आज इस बृहस्पति व शुक्र के उदय अस्त के झमेले में उत्तम रामग्र विवाह का हाथ से जाता रहता है । और ज्येष्ठ आषाढ़ में सूर्य की लपटें सहना पड़तीं वा कीचड़ों में कढ़िलना पड़ता है खेती वारी को भी हानि पहुँचती है । विवाहों से छुट्टी न मिलने के कारण खेतों के जोतने बोने का समय निकल जाता है ।

देखिये चरक सुश्रुत आदि में मौत के अतिरिक्त हर मर्ज़ ( रोग ) की दवा ( औषधि ) बताई है परन्तु आज देखा जाता है यदि कोई रोग ग्रस्त हुआ परमेश्वर पर विश्वास करने और योग्य वैद्य के पास जाने

और श्रद्धा पूर्वक धैर्य के साथ औषधि कराने के स्थान पर कोई ज्योतिषी जी की सेवा में भागता फिरता है कोई नौते स्यानों के पाव पड़ता है परन्तु वाहरे पंडित ! कल तो बतला गये थे कि सब ग्रह अच्छे हैं कोई अरिष्ट नहीं, आज बच्चा रोग ग्रस्त होगया, झट आकर बता दिया कि अमुक ग्रह उदास होगया कल दृष्टि चूकगई थी । यत्न पूछा जाय तो दान बता दिया और कुछ जप के वहाने से संकल्प कराकर कुछ दान में लेकर चम्पत हुये । इधर नौते सियाने आकर कुछ खेल खाल किसी न किसी देवता की चाल बताकर धन हरा । इन्हें परीक्षा करना भी तो नहीं आता किसी आरोग्य पुरुष वा बालक को रोगी बता फिर पण्डित जी और नौते दिवाने को बुलाकर पूछें कि अत्यन्त रोगी होगया है देखो बिना भेद जाने वह वही चाल ग्रहों का कोप बताते हैं वा नहीं। हर तरह टट्टी की आड़ में शिकार खेलते हैं आप को पता नहीं लगता । विवाह मुण्डन आदि अवसरों पर नवग्रहों को जिन में से प्रत्येक पृथिवी से कई लाख गुणा बड़ा है, अकेले सूर्य ही पन्द्रह लाख गुणा बड़ा है, वह बालिस्त भर में बुलाकर बिठा देते हैं, किसी को उन का आना जाना दीखता नहीं । परन्तु आ जाने का पूर्ण विश्वास है यदि न होता तो हाथ बांध क्यों जोड़ते । सर क्यों नवाते । यह दशा उस उदाहरण जैसी है कि—एक पुरोहित ने एक राजा से कहा था, कि मैं आपको राजा इन्द्र के वस्त्र लाकर पहना सकता हूँ यदि पचास सहस्र रुपया व्यय करो, और उस में से पच्चीस सहस्र इस समय दो और शेष आने पर देना। छः मास में ले आऊंगा । वह आधे मुद्रा लेकर छः मास पश्चात् कई बढ़िया बक्स लांकर आगया कहा कि राजा इन्द्र के वस्त्र बड़े परिश्रम से प्राप्त हुए हैं परन्तु आप को यह ऐसे नहीं पहनाये जावेंगे किन्तु सम्पूर्ण नगर निवासियों को बुलावा देदो कि कल राजा चार बजे राजा इन्द्र के वस्त्र पहनेंगे सब एकत्रित हों । जब सब इकट्ठे होगये, उन्हों ने संदूक रखकर ऊंचे स्वर से कहा कि देखो ! यह राजा इन्द्र के वस्त्र हैं यह उन्हीं को दिखाई देंगे जो अपने बाप से पैदा होंगे। और राजा को नंगा कर दोनों हाथ ख़ाली बक्स में डाल २

कर सम्पूर्ण वस्त्र का नाम ले ले कर पिन्हा दिये । सब कहते रहे कि वाह वाह क्या सुन्दर पगड़ी अंगरखी आदि हैं । यदि कहैं हमें नहीं दीखतीं तो उतने मनुष्यों में उन की माता को कलंक लगता है । फिर राजा को नंगा करके रनवास को भेजा । बांदी रानी के पास दौड़ी गई कि राजा को आज क्या होगया कि नंगे आते हैं । रानी ने भी आ-श्चर्य किया तब राजा ने बांदी और रानी को ही न दिखाने वालों की पंक्ति में जाना । इसी भांति यह नहीं सोचा जाता कि इतने २ बड़े ग्रह यहां कैसे आ सकते हैं । यदि अकेला सूर्य ही आजाता तो हम और पण्डित और मण्डप ज्यों के त्यों बने रहते ? कोटियों कोस दूर होने पर तो गर्मी से ज़रा देर धूप में बैठा नहीं जाता । परन्तु क्या करें नकेल उन के हाथ में है । जिधर घुमाई चल दिये हां यह है कि पूर्ण विश्वास नहीं है, सच्ची कार्यवाही नहीं समझते, यदि सत्य समझते तो जैसे स्टेशनों पर महसूल जो मांगा जाता है तुर्त दे देते हैं । यह नहीं कहते कि तिलहर से शाहजहांपुर तक ≈)॥ की जगह दो आना लेलो या १००) की नालिश में साढ़े सात रुपये के रसूम कोर्टफ़ीस के जगह पर सात रुपये लेने को कोई नहीं कहता परन्तु जहां ग्रहों के नौ टके मांगे जाते हैं पहरों झगड़े होते हैं और यहां तक कि फिर दो एक सुपारियों पर काम चल जाता है, देखा गया है कि जिस विवाह में रण्डी ५०) ले जाती है पुरोहित जी को महा दुर्दशा के साथ ५) कठिनाई से प्राप्त होते हैं जो कितने शोक का स्थान है । वहनो ! तुम्हें परमात्मा ने बुद्धि विचारने के अर्थ दी है, तुम भी विचार किया करो । इन की चालों से अचेत न हो जाओ ।

——:०:——

## ❃ उतारा ❃

आज स्त्रियां अपने बच्चों के जीवित रहने के विचार से उतारे कर-वाती हैं मन में यह समझती हैं कि इस उतारे से मेरा बच्चा ज़िन्दा हो जावे । चाहे दूसरों के बच्चे इसे नांघ वा छूकर अपने प्राण गंवावें । परन्तु फल उल्टा होता है । और होना चाहिये । इस लिये तुम कुन्ती

जैसी धर्मात्मा बनो । दूसरों के बच्चों के लिये अपने बच्चे निछावर करदो । कभी स्वप्न में भी तुम्हारे बच्चों का बाल वांका न होगा। देखो कुन्ती एक बार किसी ऐसे गांव में अपने पांचों पुत्रों सहित पहुंची, जहां एक राक्षस एक बच्चा रोज खा जाया करता था । राजा ने प्रति गृह से बारी नियत करदी थी, यह जिस गृह में पहुंची, उस ब्राह्मणी के बच्चे की उसी दिन बारी थी वह अपने बेटे के क्लेश से क्लेशित हो अति विकल हो रोती थी कि हाय मेरा एकही पुत्र है जो आज राक्षस की भेंट होगा । कुन्ती ने उसे धैर्य बंधाया, चुपाया और कहा कि मेरे पांच पुत्र हैं यद्यपि मुझे हाथ की पांचों उंगुलियों की नाईं सभी से प्रेम है परन्तु मैं इन में से एक को बदले में भेज दूंगी वह माता की बात सुन पांचों निकल कर जाने को उद्यत हो गये । अन्त को भीम को आज्ञा दी गई यह उस पेड़ के तले जाकर खड़ा हो गया । जहां वह राक्षस आकर अपना आहार खाता था । जब वह आया इस ने कहा कि मैं तेरे भोजनार्थ भेजा हुआ आया हूं ज्यों ही वह राक्षस निकट आया, भीम ने दोनों हाथों से पकड़ कर उसे चीर कर फेंक दिया और माता के पास चला आया । ब्राह्मणी ने आता हुआ देखा फिर रोने लगी, कि तेरा बेटा नहीं गया । उस ने उत्तर दिया कि सम्भव है न गया हो । भीम ने आकर वतलाया कि मैंने उसे चीर कर फेंक दिया, और तेरा ही नहीं वरन् सम्पूर्ण ग्राम के लिये दुःख दूर कर दिया । पस जो दूसरों के अर्थ अपने बच्चों को न्योछावर करने पर उद्यत रहे उस का मारने वाला कौन ? परमात्मा धरमात्माओं की सदैव रक्षा करते हैं ।

## ❀ भूषण ( ज़ेवर ) ❀

पूर्व काल में स्त्रियों का भूषण और भूषणों का भी भूषण एक विद्या ही थी इसी भूषण से वे अपने को भूषित करती थीं । सम्पूर्ण शृंगारों से उत्तम शृंगार इसी को जानती थीं यह ऐसा भूषण था जिस पर कभी मैल नहीं चढ़ता था इस गुप्त भूषण को वह सदैव अपने पास रखती थीं । शोक है कि आज मुख्य भूषणों की ओर ध्यान ही नहीं रहा, सच कहा है—

न वेत्तियो यस्य गुणप्रकर्षं स तस्य निन्दा सततं करोति।
यथाकिराती करिकुम्भजानां मुक्तांपरित्यज्य विभर्तिगुंजाम् ॥

जिस के गुणों को जो नहीं जानता वह उस की सदा निन्दा किया करता है। जैसे भीलनी जंगली स्त्रियां गजमुक्ताओं को त्यागकर लाल काली घुंघचियों का हार पहिंनना पसन्द करती हैं। ऐसेही आज विद्या हीन होने के कारण वह स्त्रियां हर्ष पूर्वक ऊंट की नांई अपनी नाक में नकेल तक डला बैठीं, कर्णवेध तो एक संस्कार है जिस से कई लाभ हैं। यही लाभ है कि तुम मुंह खोलते लजाती हो पुरुषों की यदि कोई नाक कान छिदवादे झुंझुनिया डलवादे तो वे भी निकलते शर्मावें। यह न समझो कि इन्हें ऊंट तक बना दिया गया। हाथ पैर में हथकड़ियां भी डला लीं इन्हें संसार में आज भूषणों से अधिक प्यारी कोई वस्तु नहीं है। यहां तक एक रानी के विषय में प्रसिद्ध है कि उसके पति राजा ने किसी आवश्यकता से अपनी रानी से परोरा उठाने को कहा उसने अपने में उस के उठाने की शक्ति न बतला कर उठाने से इनकार कर दिया। वह ही पन्सेरा उरा राजा ने सोने में मढ़वा कर किसी भूषण के नाम से उसे दिया, वह कई दिनों तक उसको गले में पहिने फिरी। आज इसी के लिये बेचारे पुरुषों की जान खाई जाती है! नाक में दम किया जाता है यदि किसी तरह से खान पान में कष्ट सहन कर किसी समय को चार पैसे बचाकर रक्खे जावें वह उन्हें घर रखने नहीं देतीं। चाहती हैं कि इनका ज़ेवर बनवावें, रुपये के छः आने भलेही रह जावें, अन्त को वह छः आने की भी चाहे न बिके, परन्तु वह यह चाहती हैं कि जैसे हो वैसे हमें ज़ेवर से लाल पीला बना दिया जावे, अधिक तो जहां मनुष्य रसोई में भोजनार्थ पहुँचा बस वह समय अति उत्तम उन्हें उस अपनी रामकहानी कहने का हाथ आता है। वही बात कि तुमने यह बना देने को कहा था अभी तक नहीं बनाया, आज सुनार के यहां चले जाओ, पटवा के यहां से माला पुहवा दो, यहांतक कि उसका भोजन करना उतना समय काटना कठिन कर देती हैं, जिस

समय ज़रा मुंह लगाया और झगड़ा फिर आरम्भ होजाता है। एक कान का भूषण बन गया गले पर हठ है यदि गले का बन गया अभी हाथ का शेष है, चाहे जितने भूषणों से लद चुकी हों परन्तु उन्हें शान्ति नहीं। जैसे २ भूषण बनाते जाते हैं लालच, लोभ बढ़ता जाता है। जब तक दूसरा बना पहिला घिस गया या खराब हो गया, टूट गया, चोरी गया। अब फिर वहही पहिला दिन शिर पर खड़ा है, उन्हें भूषणों के लिये यह विचार नहीं है कि पति या पुत्र चाहे रिश्वत लेकर चाहे चोरी कर के या झूठ बोल के बेईमानी से धन कमा लावे, उन्हें पाप पुण्य से कुछ प्रयोजन नहीं। वास्तव में उन्हें इतना ज्ञान नहीं कि वह पाप से कमाया हुआ धन चाहे धर्म से कमाए हुये धन को भी लेकर डूब जावे और उस पर कोई मुक़द्दमा वा और कोई विपत्ति पड़कर उनका छल्ला २ तक बिक जावे परन्तु वह क्या जानें नेक कमाई किसे कहते हैं और उसका फल क्या होता है। मैं आप को संक्षेप से वह भूषण बतलाऊंगा, जिन्हें पूर्व काल की स्त्रियां धारण करती थीं, जिन्हें पहिन कर वह, वह कार्य करती थीं जैसे कुछ मैं पूर्व उन के विषय में वर्णन कर चुका हूँ। ईश्वर करे कि उन्हीं भूषणों को तुम भी पहनने लग जाओ, उन्हें धारण कर फिर देखो कि तुम्हारी शोभा रूपवान् होने का क्या ठिकाना है। तुम सभी मन माने फल पाओ और यदि आप उन्हें दृष्टि से गिरा कर इन्हीं मुलम्मे के भूषणों को अधर्मयुक्त कमाइयों से बनवा कर पहिना कीं, तो स्मरण रक्खो कि मरते समय तुम्हें इन्हें छोड़ते हुए कठिन दुःख होगा, खोजाने, चोरी जाने आदि पर धाड़ें देकर रोना पड़ेगा, पूर्व मैत्रेयी की कहानी यहां पर याद करो इनके रहते हुए इन्हें पहिन कर कोई तुम वीरता का काम नहीं कर सकोगी। चोर डाकुओं लुटेरों के भय से सदा भयभीत रहोगी, इस लिये भूषणों की परवाह न करके धर्म कमाई से जो कुछ बचे उस धन का संचय करो। पाप का पैसा कभी सुखदाई नहीं हो सकता, यदि इस पर विचार करती रहो तो तुम्हें पता लग सकता है कि अधर्म के पैसे से जितनी वस्तुयें आई उनमें से कौन सी वस्तु ऐसी है जिस के सुख और फल को तुम मरने पर

अपने साथ लेजा सकती हो । देखो चोर सहस्रों रुपये की चोरी कर के ले जाते हैं, परन्तु उन्हें रोटी तक नहीं जुड़ती, सैकड़ों रिश्वत लेने वालों को तुमने देखा होगा अन्त को उनके यहा एक पैसा तक नहीं निकलता। जो पाप तुमने अपनी आयु में किये हैं, जिस समय एकान्त में बैठकर उन का स्मरण करो तो कितना तुम्हारी आत्मा को कष्ट होता है । पाप का फल भुगते विना दूर नहीं हो सकता । पुण्य धर्म के काम में अधिक वल होता है। पाप से आत्मा निर्वल होजाता है । देखो हथियार वांधे हुए चोर चोरी करने को घुसते हैं परन्तु एक बुड्ढी स्त्री के खांसने से वा चूहों के खड़ खड़ करने से भाग जाते हैं । झूठा पुरुष एक वात को दस जगह दस प्रकार कहता है । सच्ची वात एक तरह सहस्र स्थान पर कही जाती है । तभी तो कहा है कि 'जिसका पाप उसका वाप' ।

रहे न कौड़ी पाप की, ज्यों आवे त्यों जाय ।
लाखों का धन पाय के, मरे न कप्फन पाय ॥

देखो तुम्हारे मरने पर तुम्हारे धर्म कर्म पुण्य के सिवाय तुम्हारे वेटे, पोते, वाल, वच्चे, मा, वाप, अड़ोसी, पड़ोसी कोई भी सहायता न कर सकेंगे, फिर तुम्हें कर्मानुकूल मनुष्य जन्म पाना वहुत कठिन होजावेगा और शेष योनियों में न मालूम कितने दिन पापों का फल भोगना पड़े गा, इस लिये तुम धर्मानुकूल अपनी आयु को व्यतीत करो और समझ लो कि जो वर्ताव तुम दुनिया में अपने साथ औरों से कराना चाहती हो उसी को दूसरों से वरतो तुम्हारी आत्मा हर समय तुम्हें बुरे कामों से रोकती रहती है । वही बुरा काम है, जिस के करने में भय, लज्जा, शंका उत्पन्न होती है । इस लिये यह समझ कर कि आभूषण साथ न जावेंगे, एक धर्म ही मरने पर साथ जावेगा और कोई वस्तु साथ नहीं जासकती । धन दौलत, रथ, पृथ्वी, वाग वगीचा, हाथी, घोड़ा सव यहीं रह जाते हैं । जो स्त्री पुरुष यह कहते रहते हैं कि मेरा वच्चा अच्छा होजावे चाहे मैं मर जाऊं यह सव कहने मात्र की वात है करने की नहीं,

कोई मा या बाप या स्त्री किसी के पीछे नहीं मरते। मुझे यहां पर एक कहानी स्मरण आती है। एक बड़े भारी साहूकार के एकही लड़का था जो युवा हो आया था जिसका विवाह होगया था, परन्तु वह एक महात्मा के पास जो बस्ती से बाहर रहते थे बहुधा चला जाया करता था। उसके माता पिता वैमनस्य होते थे कि तू फ़क़ीर साधुओं के निकट बहुत मत जाया कर तेरी मति भ्रष्ट होजावेगी, क्यों सिड़ी हुआ है, संसार में ईश्वर प्राप्ति के सैकड़ों मार्ग हैं सभी सच्चे और ठीक हैं अन्तको सब वहीं पहुँच जाते हैं अभी तेरी आयु पड़ी हुई है। एक दिन महात्मा ने पूछा कि बच्चा आज कई दिन पश्चात् आए, तो उसने महात्मा से सच्चा हाल कह दिया कि मेरे माता पिता आप के पास आने को रोकते हैं और सारे मार्ग सच्चे और ठीक बताते हैं। महात्मा समझाने लगा कि बच्चा पन्थ अनेक भले हों परन्तु सीधा रास्ता एकही होता है दूसरा नहीं सब सीधे कदापि नहीं होसक्ते प्रत्येक प्रश्न का सही और सत्य उत्तर एकही होसक्ता है शेष झूठे होते हैं। दो और दो के योग का सही उत्तर "चार" एकही है। मनुष्य आंख से देखता है पैर से चलता है जीभ से खाता है सूर्य से प्रकाश और उष्णता आती है जब से संसार स्थिर है और जबतक रहेगा प्रलय का एक पल रहजावेगा देश देशान्तरों में वह ही सूर्य्य रहेगा और सच्चा ठीक उत्तर एकही मिलेगा। सूर्य्य लाखों करोड़ों वर्ष पर्यन्त भी नहीं बदलता यह तुम्हारे पिता का समझाना वृथा है। मैं यह नहीं कहता कि तुम अपने माता पिता की बात न मानो परन्तु इतना अवश्य कहूंगा कि यदि सत्य यथार्थ धर्मयुक्त हो, मानो नहीं तो उल्लंघन करने से दोष भागी नहीं होता क्योंकि आज प्रहलाद संसार में पिता की अधर्मयुक्त बात न मानने से धर्मात्मा कहलाता है भरत ने माता कैकेयी की बातको पापमूल धर्म विरुद्ध समझकर स्वीकार न किया और धर्मध्वजी कहलाया जिस के विषय में लिखा है कि—

जो न होत जग जन्म भरत को।<br>
सकल धर्म धुरि धरणि धरत को॥

यदि अनेकानेक पन्थ होंगे, एक दूसरे को झूठा और बुरा बतलायेगा आपस में झगड़े होंगे। फिर सुख और शान्ति कहां? यह भी बतलाया कि माता, पिता, स्त्री मरण पश्चात् तो साथ सहायता देही नहीं सकते इस संसार में भी जब तक उन्हें उस से अपने सुख की आशा है तब ही तक बड़े हितैषी सहायक दृष्टि पड़ते हैं यदि कल आशा छूट जावे फिर कोई किसी का साथी नहीं। लड़का बोला कि और बातें तो आप की मेरी समझ में आगई परन्तु यह अन्तिम बात मेरे ध्यान में पूर्ण रीति से नहीं आई। मेरे माता पिता स्त्री तो इतना प्यार करते हैं मैं तो कह सकता हूं कि मेरे पीछे प्राण दिये फिरते हैं यदि कोई अवसर आ जावे तो मेरे लिये प्राण तक त्याग देंगे धन दौलत क्या वस्तु है। महात्मा बोला यह सब तुम्हारी अल्प आयु और अल्पज्ञता की बात है। यह संपूर्ण बातें कहने मात्र की हुआ करती हैं करने की नहीं। लड़के ने हठ किया कि (हाथ कंगन को आरसी क्या है) आप इस की परीक्षा करलें। अधिक उलट फेर के पश्चात् महात्मा ने कहा कि अच्छा थोड़े काल पश्चात् मैं तुझे इस की भली भांति परीक्षा करा दूंगा। मेरे पास प्रति दिन १ घण्टा अमुक समय आते रहना महात्मा ने उसे प्राणायाम सिखाना प्रारम्भ कर दिया। जब आध घण्टा तक श्वास चढ़ाने लगा तब एक दिन उस महात्मा ने उस से कहा कि आज तुम अपने घर वालों से कहना कि मैं आज थोड़े काल पश्चात् प्राण त्याग दूंगा मेरा काल अति निकट आगया है यदि तुम्हें मेरा जीवन चाहिये तो उस महात्मा को बुला लेना नहीं तो मेरा प्रणाम लो। इस ने जाकर यही घर वालों से कहा कि मैं आज ही आप से क्या संसार से ही विदा हो जाऊंगा। घर वाले हँसी समझे कि अचानक यह आंगन में गिर पड़ा और श्वास चढ़ा गया अब दम नदारत। सारे घर में रोने पीटने पड़ गये, हाय हाय मच गई, बस्ती टोले के सहस्रों मनुष्य एकत्र हो गये। इतने में याद आई, महात्मा को बुलाओ। वह महात्मा इसी लिये तैयार बैठे थे झट आगये। भीड़ एकान्त करके कहा घबराओ नहीं, अभी चेत होता है। एक काम करो एक सुवर्ण के पात्र में गौ का दुग्ध लाओ

थोड़ी सी चीनी वा मिश्री डाल लो । तुरन्त उपस्थित किया गया, उसने उस बालक के मुँह से पांव तक उतार कर उसके वृद्ध पिता को प्रथम दिया कि आप इसे पी लीजिये आप मर जावेंगे लड़का जीवित हो जावेगा । आप वृद्ध हो चुके सब कुछ देख चुके यह अभी युवा है इसे बहुत कुछ देखना शेष है परन्तु पिता ने बहुत सी बातें बनाईं और पीने से इनकार कर दिया । तब माता से कहा तुम्हीं पी जाओ, तुम थोड़े दिन और जीतीं, अधिक जीकर क्या करोगी ? तुम्हारा यह उत्पन्न किया हुआ पुत्र है, बहू की ओर देखो इस पर दया करो, यह रांड होने से बच जावेगी । तुम्हें अपने पति के हाथ की आग प्राप्त हो जावेगी, परन्तु इस ने भी यह कह कर कि अमुक का पुत्र मर गया, अमुक की गोद खाली हो गई, मुझ से मरा नहीं जावेगा । यदि इसका पिता और मैं जीवित रहे, न जाने परमेश्वर की बड़ी बड़ी बाहैं हैं कोई और पुत्र देदे । फिर उस की स्त्री से कहा, उसने उत्तर दिया कि यदि वह जीवित हुआ और मैं मर गई तो क्या लाभ होगा दोनों के रहने से सुख हो सकता था, यह तो प्राप्त न हुआ । यहां तक कि सब ने इनकार कर दिया । तब उसने कहा कि तुम सब मकान से निकल जाओ और जो कुछ तुम्हारे पास सम्पत्ति है दान देदो तो मैं किसी दूसरे मा बाप को देकर उसके लड़का लड़की को पिलादूं । इस से भी इनकार कर दिया कि फिर हम क्या भीख मांगेंगे जब खाने को मिलता है तब ही बाल बच्चे भी सूझते हैं नहीं तो अकाल के दिनों में पाव पाव भर नाज को बाल बच्चे दिये जाते हैं । तब महात्मा ने कहा अच्छा मैं पीलूं सब के सब पैरों पड़ गये । कहा बस महात्मा जी ! अत्यन्त आप की दया होगी महात्माओं का शरीर दूसरों के उपकार के लिये होता है ( परोपकाराय सतांविभूतयः ) उस ने उठाकर वह दूध पी लिया वह लड़का चेत गया । उस दूध में था ही क्या, परीक्षा करनी थी । तब महात्मा ने बच्चे को बतलाया कि देखो तुम क्या कहते थे प्राण त्याग देना तो अलग रहा धन तक नहीं दिया गया । लड़के ने लज्जित हो पैर चूमे और निवेदन किया कि सच है गुरु जी ! परमात्मा का मुख्य

नाम ओ३म् ही है उसी के यथावत् अर्थों को जानकर मुक्ति प्राप्त हो सकती है, न कोई अन्य मार्ग है, न संसार में उस के सिवाय कोई बन्धु इष्ट मित्र रक्षक है। इसी लिये गीता में लिखा है कि:—

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन् ।
यः प्रयाति त्यजन्देहं स याति परमां गतिम् ॥

परन्तु आज गुरुडमरू के जाल में ऐसे फंसे कि ओ३म् के स्थान में बोम २ बम २ करने लगे और प्रत्येक अपने को सच्चा और अन्य को झूठा बताने लगे। महात्मा जी ने बतलाया है कि सच्चा मार्ग एक वेद का ही है, तभी तो वेदों में बतलाया है कि "नान्यःपन्थाविद्यतेयनाय" दूसरे इस के अतिरिक्त कोई ईश्वर प्राप्ति और मुक्ति का मार्ग नहीं है कि ईश्वर को सूर्य की तरह प्रकाशमय अन्धकार से शून्य सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, न्यायकारी जान ले, तभी पापों से बच सकता है, नहीं तो बच ही नहीं सकता और पापों से बचे बिना मुक्ति कैसी। इस लिये उसने प्रतिज्ञा की कि मैं मरते दम तक यथावत् ज्ञान की प्राप्ति का यत्न करूंगा।

इस लिये बहनो ! इस जीवन को थोड़े दिनों का समझ कर अपने पतियों बाल बच्चों को अधर्म से धन कमाने से रोको और सदा यह देखो कि हम से अधिक कंगाल, दुःखी, अन्धे धुन्धे, लूले, लंगड़े, अपाहज सैकड़ों हैं। हमें हर समय परमात्मा को धन्यवाद देना चाहिये और जो कुछ धर्म से प्राप्त हो उसी पर सन्तोष करना चाहिये। दूसरों को देख डाह करना जलना महा पाप है।

यह माना कि अपने पति के पाप की तुम जिम्मेदार नहीं। न वह तुम्हारे कर्मों का है। चाहे ( एकःपापान कुरुते फलं भुंक्ते महाजनः ) वाला गीता का श्लोक और भी इस की पुष्टि में वर्णन कर दो। तथापि इस को सोचो कि जब सम्पूर्ण शरीर को सुख हो तभी सुख कहा जा सकता है जब तुम्हारा अर्ध अंग पति अधर्म से धन कमाता है तो उस

पैसे से जब उस को सुख नहीं मिल सकता तुम भी उस के दुख से दुखी होगी। और यह भी शोचो कि तुम अपने पति की हितैषी हो वा उस को नरक में पहुँचाने वाली ? इस लिये उपरोक्त बातों पर ध्यान देकर इन आभूषणों से सच्चा शृंगार करो, जिन्हें न चोर चुरा सकता है, न राजा छीन सकता है, न आग जला सकती है, न पानी बहा सकता है, व्यय करने से घटता नहीं। भले पुरुषों में विदुषी स्त्रियों में इस की चमक देखिये कि क्या ही झलक मारती है शेष रही सोने चादी के भूषणों की चमक उन के विषय में एक शेर ही काफ़ी है।

**सोने चांदी की झलक, बस देखने की बात है।**
**चार दिनकी चांदनी, और फिर अँधेरी रात है॥**

शिर के भूषण की आवश्यकता हो तो मूड़ बुद्धि विचार का झूमर रखना जिस से तुम्हारे सम्पूर्ण कार्य सुधर जावें। बुद्धि के बिना मनुष्य पागल गिना जाता है ! कानों में ज्ञान की बालियां और शिक्षा के झुमके दया के पत्ते पहनना, गले के भूषण की आवश्यकता हो तो बहिन ! तेरी भलाइयां ही तेरे गले का हार हों। बांह का भूषण तेरा बाहुबल हो। इस से तेरा काम मनचाहा सदा संसार में चलता रहेगा। आलस्य तेरे निकट न फटकने पावेगा। अपने बाहुबल से जो तू कार्य आरम्भ करे उसे अन्त तक पहुँचा दे ! अधूरा बीच में न छोड़। हाथ का भूषण दस्तकारी से कोई भी उत्तम नहीं है। जो तुझे किसी का आधीन न बनायेगा। हर प्रकार का हर एक हाथ का काम सीख ले जो हर समय तेरी सहायतार्थ तेरे साथ रहेंगे। कमर का भूषण यही है कि हर समय कमर हिम्मत कसे रहो। पांव का भूषण यह है कि—सदा धर्म-मार्ग में पग जमाये रहो। कदापि सत्य मार्ग से पांव न डिगने पावै।

जान लो पहिले समय की स्त्रियां ऐसे ही भूषणों से अपने को भूषित करती थीं। आज कल की नाई रास्ता चलते हुये छड़े कड़े बजाती झांझ पाजेब बिछुवा आदि की झनकार से धरती सर पर न उठा लेती थीं। आज इन झनकारों के ही कारण साधु और धर्मात्मा

पुरुष की भी दृष्टि स्त्रियों की ओर बहुधा उठ जाती हैं। दृष्टि का शुभाशुभ होना उस के मनकी वृत्ति पर निर्भर है। मेरे निवेदन का तात्पर्य यह है कि यदि साधारण चाल चलें तो अवश्य उनकी ओर दृष्टि उठाने की भी हिम्मत न पड़े। देखो विदेशी स्त्रियां जो केवल सुन्दर और सूक्ष्म वस्त्रों ही से अपने को वस्त्रित रखती हैं न नाक छिद्वार्ती न कान कटवाती हैं क्या वह देखने में कुरूप जान पड़ती हैं। इतने ही से अधिक समझो। जिस देश ने उन्नति की है उस में पहेल स्त्री शिक्षा की ओर ध्यान हुआ है। दूर क्यों जाइये, आज जापान में ६० फ़ी सैकड़ा बड़ी ऊंची शिक्षा पाई हुई ग्रेजुएट स्त्रिया हैं।

———:※:-:※:———

ओ३म्

# चौथा अध्याय ।

इसमें केवल आपको यह बतलाना है कि पूर्वकाल में जब स्त्री पुरुषों के बाल बच्चे होजाते थे और और उनमें से एक भी लड़का घरके कामों के सँभालने के योग्य बन जाता था, उस समय स्त्री पुरुष अपने घर का कामकाज उसको सौंप आप शान्ति प्राप्त करने के लिये घर के झगड़ों को छोड़कर स्थिर चित्त ज्ञान की प्राप्ति योगाभ्यास करने के निमित्त वाणप्रस्थ आश्रम धारण कर वनको चले जाते थे। जो स्त्रियां पुरुषों के साथ जाती थीं फिर वह कभी ध्यान ज्ञान के सिवाय गृहस्थ न कहलाती थीं। पति से अलग रहती थीं । कम से कम उन के और पति के बीच में एक दण्ड अवश्य ही रहता था । जिन स्त्रियों को इतना वैराग्य प्राप्त न होता था कि वह गृहस्थ बालबच्चों को छोड़ सकें और वन में रहकर कन्द मूल फल खाकर पृथ्वी पर सोकर परमात्मा के ध्यान में निमग्न होसकें वह अपने बालबच्चों के पास रहती थीं। जो जो अनुभव उन्हों ने अपनी आयु में किये थे, जिन २ धर्मों का पालन किया था वह अपनी बहुओं बच्चों को सिखलातीं, उनसे अपनी सेवा भी करातीं, प्यार मेल हर्ष के साथ व्यतीत करतीं और सदा सुखपूर्वक रहती थीं। वन में जाकर ज्ञान प्राप्त करना बहुत ही कठिन मार्ग था। यहां पर मैं वैराग्य सम्बन्धी एक बात बतलाना चाहता हूँ वैराग्य ज्ञान प्राप्त होना अति कठिन है और सहल भी है। किन्हीं को वर्षों तथा जन्मों में प्राप्त नहीं होता, परन्तु वामदेव को तुरन्तही प्राप्त होगया था।

एक स्त्री पुरुष गृहस्थं छोड़ कर वैराग्य धारण कर वाणप्रस्थ बन कर ज्ञान प्राप्ति के लिये वन को गये । रात्रि को दो चार दिन तक जब सो जावें वही घर वही गृह के काम धन्धे दिखाई दिया करें । प्रातः उठ कर दोनों अपने २ स्वप्न का हाल वर्णन किया करें, तब इन्हें अति चिन्ता उत्पन्न हुई कि जिन को छोड़कर ज्ञान प्राप्ति के लिये वन आए वह तो छूटे ही नहीं । वन आने से क्या हुआ, इस लिये चलो कहीं कोई महात्मा धर्मात्मा साधु संन्यासी मिल जावें उन से पूछकर शान्ति ग्रहण करें । आगे बढ़े दूर से वेदध्वनि स्वाहा शब्द की गुंजारें सुनाई दीं । ज्ञात हुआ कि कोई ऋषि स्थान है । आगे बढ़े यज्ञों के धूम्र से मस्तक सुगन्धित होने लगा, यज्ञ की सुगन्धि से सम्पूर्ण वन महक रहा था । और आगे बढ़े, एक स्थान दृष्टिगोचर हुआ वहां जाकर देखा कि चार आसनों पर चार मनुष्य बैठे हुवे ईश्वरीय ध्यान में मग्न हैं पूछने से पता लगा कि माता, पिता, पुत्र और पुत्रवधू हैं । दैव इच्छा से इन के जाने के थोड़े ही समय पश्चात् पुत्र का देहान्त हो गया । माता पिता स्त्री ने अपने २ आसनों से उठकर नियम पूर्वक अन्त्येष्टि संस्कार किया और वहां से आकर नहा धोकर कुछ खान पान करके अपने २ आसनों पर आ बैठे और उसी प्रकार ध्यान करने लगे । यह भी दोनों सम्पूर्ण कार्यवाहियों में सम्मिलित रहे इन्हों ने देखा, न कोई रोया न चिल्लाया न आंसू गिराये न किसी प्रकार का शोक किया । तीनों में से किसी की आकृति में भी कुछ अन्तर न पाया, यह दशा उन दोनों ने देख कर बड़ाही आश्चर्य किया कि जिन का युवा पुत्र मर जावे और वह न रोवें, वह कैसे माता पिता हैं । जो विधवा हो जावे जिस की सारी आयु अपभ्रंश हो जावे वह कैसी पत्नी है । या तो वास्तव में यह माता पिता वधू नहीं हैं वा कोई और ही भेद है । प्रथम बाप से पूछा कि आप के अकेला पुत्र था, संसार में पुत्र मरण समान शोक नहीं होता है । क्या कारण है कि आप नहीं रोये ? एक भी आंसू न गिरा आप का बड़ा कठोर हृदय है । पिता ने उत्तर दिया । जैसा कि :—

एकवृक्षसमारूढा नानापक्षिविहंगमाः ।
प्रभाते दिग्दिशं यान्ति का कस्य परिवेदना ॥

एक पेड़ पर सायंकाल को बहुत से पक्षी चिड़ियां इकट्ठी हो जाती हैं, प्रभात होते ही उड़ जाती हैं । पेड़ ने किसी पक्षी के उड़ाने का यत्न नहीं किया था । अब बतलाइये कि वह पेड़ किस २ के लिये रोवे और अश्रुपात करे । ऐसे ही मेरे पेड़ रूपी आयु पर यह भी एक पक्षी रूपी पुत्र आकर बैठ गया, बिना उड़ाये उड़ गया । मैं ने उस के उड़ाने का यत्न नहीं किया था फिर रोने से क्या हो सकता है ? क्या अधिक वा न्यून रोने से यह मिल सकता है ? फिर निरर्थक कार्य क्यों किया जावे । यदि रोये से मिल जावे तो १०० वर्ष पर्यन्त रोना चाहिये । यह प्रभावशाली उत्तर सुनकर निरुत्तर हुए तो भी उसकी माता और स्त्री से विना पूछे नहीं रहा गया ।

बहिनो ! तुम माता और स्त्री के उत्तरों से उनकी पंडिताई और वैराग्य का पता लगाओगी और जानोगी कि कैसी २ स्त्रियां भारत देश में थीं । प्रथम माता से प्रश्न किया कि संसार में माता की ममता प्रसिद्ध है । माता के तुल्य किसी को प्रेम नहीं होता, बहुतेरी मातायें अपने पुत्र के मर जाने पर रोते २ प्राण गँवा देती हैं, हक्का बक्का सी हो जाती हैं । वह समय तक नहीं देखतीं परन्तु तुझ जैसी कठोर हृदय माता मैं ने नहीं देखी । ऐसी हृदय विदीर्ण करने वाली मृत्यु पर तो पत्थर भी पसाज जाता है, तेरी तो कांति में भी अन्तर न आया मुखड़े की रंगत जैसी की तैसी ही है इस का उत्तर दीजिये । उस ने उत्तर दिया—

अयाचिते मया गर्भे दैवेन संगमः कृतः ।
अयाचितः पुनर्याति का कस्य परिवेदना ॥

परमात्मा की इच्छा से यह पुत्र मेरी कोख में उत्पन्न हुआ और उसी की इच्छा से शरीर त्याग गया, न मेरी वा अन्य किसी की इच्छा से बच्चा उत्पन्न हो सकता है, न कोई माता अपने पुत्र को बिना परमा-

त्मा की आज्ञा के मार सकती है । फिर परमेश्वर की आज्ञा में क्या वश है । इस लिये रोने से क्या होसक्ता है ? चाहे आयु भर रोऊं अव मिलने का नहीं । फिर रोना अज्ञान के सिवाय और क्या है ? फिर दोनों ने उसकी स्त्री से प्रश्न किया कि अरी तेरा तो सोहाग नष्ट हो गया, जीवन का स्वाद जाता रहा । संसार में आज तक तुझ जैसी कठोर हृदय वाली स्त्री नहीं देखी, तूने तो एक आंसू भी नहीं वहाया ऐसी निर्दयता तुझे किस ने सिखाई । मैं क्या कहूं वता तो क्या मुख्य कारण है ? वह उत्तर देती है—

> वनानां वनकाष्ठानां नद्यांवहतिसंगमे ।
> संयोगेन वियोगेन का कस्य परिवेदना ॥

जैसे नदी में वहुत से वनों की लकड़ियां वहती हुई चली जाती हैं । वह एक दूसरे से मिलती जाती हैं, इसी तरह मैं न जाने किस जंगल की लकड़ी थी और मेरा पति किस वन की, इस नदी रूपी संसार में क्षण मात्र के लिये लकड़ियों के तुल्य मिल गया फिर अलग हो गया ऐसे ही जन्म जन्मान्तरों में न जाने कितनी वार किस २ लकड़ी से मेल हुआ है इस लिये रोने से क्या हो सकता है । रोना मूर्खों का काम है, ज्ञान हो जाने पर रोना नहीं होता, जैसे पुरुष किसी गृह को जव तक अपना समझता है यदि उस में किंचित् हानि पहुंचती है तो वह दुःखी होता है । यदि उसी गृहको वेचदे वा दान देदे या नीलाम होजावे, तात्पर्य यह है कि किसी प्रकार उससे सम्वन्ध छूट जावे फिर चाहे कोई आग लगादे उसे कुछ दुःख नहीं होता । दूसरा ज्ञान है । जब राजा अज विवाह करके लाया था उसके पिता ने राज पाट उसे सौंप दिया आप वाणप्रस्थ वन वन जाने की तय्यारी की । राजा अज ने पिता से कहा कि पिता जी ! हम से निकट रहना दर्शन देते रहना । पिता ने उत्तर दिया कि हे पुत्र ! सांप जो अपनी केचली उतार देता है फिर उस छोड़ी हुई केचली की परवाह नहीं करता, न प्रेम करता है, क्या मैं

अपने छोड़े हुए राज की परवाह करके साप से भी गिर जाऊंगा? जो पैसा कि अपना समझते हैं उन्हें खर्च करते हुए धर्म कार्यों में भी बड़ी ही तकलीफ बीतती है, और जो ज्ञानी हैं वह सर्वस्व पर लात मार कर उसका ध्यान तक न करके वानप्रस्थ संन्यासी हो जाते हैं। इन बातों को सुनकर उन्हें शान्ति हो गई और ज्ञान प्राप्त होगया और वहां से प्रणाम करके एकान्त में जाकर उसी तरह वह भी ब्रह्मानन्द में मग्न हो गये। फिर कभी उन्हें स्वप्न दिखाई नहीं दिये। उस समय वे गो गृहस्थ के धन्धों को छोड़ आये थे परन्तु उन में वही प्रीति और विचार विद्यमान थे। इस लिये बहिनो! यह वाणप्रस्थ महा कठिन है प्रथम तो विद्या से धर्म ज्ञान प्राप्त करो आगे बढ़कर तुम्हारी सन्तानें तुम्हारी बेटियां योग्य बनकर इस कार्य को भी जो अभी तुम्हें कठिन प्रतीत होता है सहल समझेंगी और करने पर उद्यत होंगी देखो चुड़ाला का नाम कभी तुम ने सुना है?

## चुड़ाला।

यह राजा शुक्रध्वज मालवदेश की रानी थी, इनका जिकर योगवाशिष्ठ में बहुत विस्तार पूर्वक है। विवाह के पश्चात् उन्हों ने जब सारे सांसारिक भोग भोगे और किसी में आनन्द न पाया, तब यह विचार करके कि यह जवानी बिजली के चमत्कार की नाईं पलभर में समाप्त होने वाली है मौत अपने अस्त्र शस्त्र सँभाले शिर पर डोलती है। जैसे नदी का वेग नीचे की ओर जारहा है वैसेही आयुबल नित्यप्रति क्षीण होरहा है वा जैसे हाथ पर जल डालने से बहजाता है रुकता नहीं वैसेही युवा अवस्था निवृत होती जाती है ठहर नहीं सकती, जहां चित्त जाता है वहां अज्ञान अविद्या के कारण दुःख भी साथ जाता है। जैसे मांस के टुकड़े के पीछे चील्ह आदि लगे चले जाते हैं वैसेही विषय रूपी दुःखों की ओर मनुष्यों का प्रवाह चल रहा है। जैसे लगा हुआ आम डाली से और सूखा हुआ पत्ता पेड़ की डाली से झड़ कर गिर जाता है ऐसे ही यह शरीर अवश्य पतित होने वाला है। इस लिये उसका आश्रय

लेना वृथा है। बस ऐसा यत्न किया जावे जिस से शरीर रूपी विसूचिका दूर हो । सोचती है कि यह कैसे दूर हो सकती है। पता लगता है कि ब्रह्मविद्या रूपी औषध का पान किये बिना यह दूर नहीं हो सकती। ब्रह्मविद्या से ज्ञान प्राप्त होगा और उसी से सर्व दुःख नष्ट हो जावेंगे। इस लिये आत्मज्ञान सीखने के लिये पति सहित ऐसे महात्माओं के निकट जाती है जो आत्मवेत्ता ब्रह्मज्ञानी योगी थे। वह उपदेश करते हैं कि एक चेतन आनन्द स्वरूप शुद्ध आत्मा के जाने विना दुःख निवृत्त नहीं होते। रानी इस विचार में पड़ कर पति सेवा करती हुई भी वही ध्यान वही विचार हरदम करती रहती है कि मैं क्या हूं? संसार क्या है? कर्म इन्द्रियां, ज्ञान इन्द्रियां, मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार आदि क्या हैं? जो ऋषि समझाते हैं उसे वह अपने पति की अपेक्षा अतिशीघ्र समझ लेती है पश्चात् पति को समझाती है। जिस से वह जीवन्मुक्त होकर कुछ दिनों संसार में कुम्हार के चाक की नाईं जोकि घड़ा उतर जाने पर भी पिछले संस्कार से कुछ देर तक घूमता रहता है भ्रमण करती विचरी और अन्त को मोक्ष की भागी बनी, उस के पति ने पूछा था कि तू क्यों सर्व आनन्द में निमग्न रहती है। बतलाया था कि मैं स्थिर और शुद्ध बुद्धि और सत्यज्ञान को पा कर श्रीमती हुई हूँ। इसने अपने पति की परीक्षा ली और अपने ही उपदेश द्वारा वैरागी त्यागी बना दिया था, त्याग में बतलाया था कि आप बाग बगीचा, राज आदि तोंबा, आसन, वस्त्र, कमण्डल के त्यागने से सर्वत्यागी नहीं हो सकते, जो आपका है उसे त्यागो। पूछा कि फिर मेरा क्या है? तब बतलाया कि अहंकार और अभिमान को त्यागने से सुख मिलता है और अविनाशी परमात्मा के जानने के लिये जो आवरण अज्ञान का पड़ा है उसे हटा दो जिस से उसका प्रकाश दिखाई पड़े। जैसे वृक्ष के जल जाने से फल फूल नहीं आते ऐसे ही अज्ञान के अभाव से दुःख सुख नहीं रहते।

---

## ❀ गार्गी ❀

राजा जनक ने ब्रह्मविद्या के जिज्ञासु बनकर अपने यहां एक सभा की थी कि ऋषि पण्डितों के पधारने पर उनके परस्पर विचार से ब्रह्मविद्या मालूम होजावेगी। इस लिये उसने सारे ऋषि मुनियों को सूचित कर यज्ञ रचा। इस विचार से कि मैं परीक्षा नहीं कर सकता, बहुत सी गायें सोने से सींग मढ़ा कर खड़ी करादीं कि सब से योग्य ब्रह्मज्ञानी हों वह इन्हें ले जावें। यह बात सुन सब मौन थे कुछ काल तक याज्ञवल्क्य ने वाट हेरी, अन्त को जब कोई नहीं बोले तब इन्हों ने अपने चेलों को आज्ञा दी कि तुम इन सबको लेजाओ सम्पूर्ण सभा के उपस्थितों ने याज्ञवल्क्य से कहा कि तुम को बड़ाही अभिमान है। तुम ने हम सब का अपमान किया। याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया कि नहीं मैं आप सब को नमस्कार करता हूं। मैंने देखा कि आप में से किसी को आवश्यकता नहीं है। मुझे आवश्यकता थी इस लिये मैंने लेजाने को आज्ञा देदी। वहां पर बहुतों ने अनेक प्रश्न किये। याज्ञवल्क्य ने सब का उत्तर दिया। अन्त को गार्गी (जिसने बाल्यावस्था से ही विवाद नहीं किया था, बड़ी योग्य पण्डिता थी) सबकी ओर से प्रश्न करने पर उद्यत हुई और कहा कि यदि मेरे प्रश्नों का यथावत् उत्तर मिल जावेगा, जान लिया जावेगा कि सब के प्रश्नों का उत्तर होगया। तब इसने शास्त्रार्थ का साहस किया। इससे कहा गया कि तू स्त्री होकर ऐसा साहस करती है? वह उत्तर देती है कि मैं स्त्री नहीं हूं वरन् यह सब स्त्री हैं। जो पराधीन हो वह स्त्री हैं, मैं पराधीन नहीं हूँ मैं स्त्री नहीं। जो इन्द्रियों के वश में है वह स्त्री है। मैं उनके वशमें नहीं हूँ। वह वेश्या स्त्री भले ही हों जो काम, क्रोध, लोभ मोह के विषय में फँसी हों। मैं उनमें नहीं फँसी। जिन्हें आत्मा का ज्ञान है वह आत्मज्ञानी तो मेरे में स्त्री का ज्ञान नहीं कर सकते, एक नट खेल करते समय कभी स्त्री कभी पुरुष बन जाता है। इसी तरह जीव न स्त्री है न पुरुष, यह कर्मानुसार स्त्री पुरुषों के शरीरों में आजाता है। जैसा कि:—

नैव स्त्री न पुमानेष न चैवायं न पुंसकः ।
यद्यच्छरीरमादत्ते तेन तेन सयुज्यते ॥

अन्त को इनने कई प्रश्न किये जिन का याज्ञवल्क्य ने यथातथ्य उत्तर दिया । अन्त में गार्गी ने सब से कह दिया कि उत्तर दाता के उत्तर बहुत ही सन्तोष जनक हैं और यही गौओं के पाने के अधिकारी थे ।

## ❀ अन्तिम निवेदन ❀

बहनो ! अब अन्त में आप को वह कई एक आवश्यकीय बातें बताता हूँ जिनका सदा अपने जीवन में ध्यान रखना ।

प्रथम तो इन छः बातों से बचने का सदा प्रयत्न करती रहना—

पानं दुर्जनसंसर्गः पत्या च विरहोटनम् ।
स्वप्नोऽन्यगृहेवासश्च नारीसंदूषणानिषट् ॥

१ मदिरा पीना २ दुष्ट जनों का संग ३ पति से अलग रहना ४ इधर उधर घूमना ५ दूसरों के घरों में जाकर सोना ६ दूसरों के घर जाकर रहना । सुरापीना—यह जैसी हानिकारक वस्तु है, वह सभी पर प्रकट है जिस ने इसे लेशमात्र भी मुंह लगाया अपने सम्पूर्ण सुख सम्पत्ति से हाथ उठाया । बुद्धि जिस से मनुष्य मनुष्य कहलाने का अधिकारी है, उस की यह वास्तविक शत्रु है । जब बुद्धि ही ठीक न रही फिर भला कोई भी यथार्थ कार्य हो सक्ता है ? जिस की बुद्धि बिगड़ जाती है वह पागलखाने में भेजने योग्य होजाता है । प्रायः आजकल दुष्ट मनुष्य साली, सरहजों, भावजों से उनको शराब पिलाकर बेहोश कर उन से भी कुकर्म कर गुज़रते हैं । मदिरा पान से भली से भली स्त्री के ख़यालात ( चित्त की वृत्ति ) बिगड़ जाते हैं । शोक ! ऐसी अपवित्र और हानिदायक कष्टवर्धक वस्तु को किन्हीं घरानों में शकुन समझा है, जो वामियों से आई हुई बात है । देखो मनुजीने कहा है किः—

ब्रह्महत्या सुरापनं स्तेयंगुर्वंनागमः ।
महान्तिपातकान्याहु संसर्गश्चापितै सहः ॥

ब्रह्महत्या, मदिरा पीना, चोरी करना, गुरू की स्त्री से भोग करना, ऐसे दुष्टों से संसर्ग रखना इन सब को महापाप बतलाया है ।

और देखो कि प्रथम तो यह बड़ी बहुमूल्य वस्तु है । घर का दिवाला निकालने में संदेह ही क्या है द्वितीय इस को पीकर गज़क ( क़बाब ) की ज़रूरत पड़ती है, जिस से हत्या का पाप भी होता है फिर व्यभिचार तो इस का मुख्य ही फल है । लहन उठते समय सहस्रों कीड़े उत्पन्न होकर मरजाते हैं । उन का भी उबाल खिंचकर उस में मिल जाता है । इस को थोड़े काल लगातार पीने से भूख थोड़े ही दिनों में दूर हो जाती है, पाचन शक्ति नहीं रहती, कलेजा, गुर्दा, दिल, दिमाग़ ( मस्तक ) सब ही मुख्य अंग अवश्य निकम्मे पड़ जाते हैं । रक्त का दौरा बढ़ जाता है, ५ बार के स्थान पर ७ बार होने लगता है । शरीर के नीचे का रक्त ऊपर को खिंचता है जिस का प्रमाण यह है कि प्रथम पैर निर्बल हो कांपने, फिसलने लगते हैं और नेत्रों में लाल डोरे पड़ जाते हैं । यह नशा सम्पूर्ण नशों से बुरा है । शराबियों के मुंह और वस्त्रों से कैसी दुर्गन्ध आती है कि नाक नहीं दी जाती । एकबार प्रयागराज में दो तीन शराबियों ने जो मेरे साथ थे शराब पी । मैं नहीं पीता था । परन्तु एक कोठे में था । कपड़ों पर गिरी । इतनी बू चढ़गई कि मुझे क़ै हो गई । वह भी पीते समय मुंह बिगाड़ते जाते हैं क़ै भी होती जाती है, शोक कि फिर भी पीना नहीं छोड़ते । ऐसी ही सैकड़ों हानियां हैं । यहां पर सारी जता नहीं सकता । बहनो ! मेरी प्रार्थना स्वीकार कीजिये और इस डाइन को कभी हाथ से भी न छूना ।

पति से अलग रहना—अपने पति से अलग कभी न रहो । ऊपर देख चुकी हो कि सीता ने कितने दुःख सहे परन्तु पति का साथ न

छोड़ा पति के साथ रहने से अधर्म के मौक़े भी नहीं मिलते या बहुत कम मिलते हैं ।

बुरे मनुष्यों का संग—बीज और संग का प्रभाव अवश्य पड़ता है । यदि दुष्ट जनों के निकट बैठकर उन से सम्बन्ध रख कर चाहो कि तुम्हारी पवित्रताई में धब्बा न आवे असम्भव है । इस लिये कभी दुष्ट आदमियों से वर्ताव भी न करो ।

इधर उधर घूमना—इस से अमूल्य समय निरर्थक व्यय होता है । आज कल स्त्रियों का वक्त काटे नहीं कटता, पहले समय काम करने को नहीं मिलता था ।

अन्यों के घर सोना वा रहना—यह इस लिये निषिद्ध है कि आग फूस इकट्ठा होकर जलने लगते हैं । इन्द्रियों के विषय बहुत प्रबल होते हैं बड़े २ साधु महात्मा ऋषि मुनि डिग गये, न जाने उस घर में कोई राक्षस दुष्ट प्रकृति वाला हो वह सोते समय या अन्य समय तुम्हारी इज्जत बिगाड़ने का कारण बन जावे । इस लिये यदि तुम छः बातों को ध्यान में रक्खोगी संसार भर में तुम्हारी कीर्त्ति छा जावेगी यह बातें तुम्हारी सदा रक्षक रहेंगी ।

दूसरे—द्विज सदा नित्य प्रति प्रातः उठकर सायंप्रातः सन्ध्या हवन आदि पंचयज्ञों को करती हुई सत्य व्यवहारों में लगी रहना । समय के पल पल पर ध्यान रखना इस को ख़राब न होने देना, सदा सब से मीठे और मधुर वचन बोलना, कड़ुवी और कड़ी वाणी को त्याग देना । इसी से तुम सबकी लाडली बनी रहोगी । इस से मीठा मेवा संसार में कोई नहीं है—

**तुलसी मीठे वचन से, सुख उपजे चहुं ओर ।**
**बसीकरन यह मन्त्र है, तजदे वचन कठोर ॥**

तीसरे—सदा सदाचार से जीवन व्यतीत करना जो जान ... उस पर उद्यत रहना, यह नहीं कि स्वयं तो खूब धन दौलत ...

करें औरों को वैराग्य का उपदेश करें कहैं राव करें कुछ नहीं । यदि सदाचारिणी नहीं बनोगी फिर सब तुम्हारा पढ़ा, लिखा, सन्ध्या, हवन दान, यज्ञ निष्फल और निरर्थक हो जावेगा । जैसा कि वशिष्ठस्मृति में लिखा है :—

नैनं तपांसि न ब्रह्म नाग्निहोत्रं दक्षिणा ।
हीनाचारश्रुतं भ्रष्टं तारयन्ति कथं च न ॥

जिस मनुष्य का आचार अच्छा नहीं है और धर्म नहीं करता उस की रक्षा वेद पढ़ने, तप करने, अग्निहोत्र और दान से नहीं हो सकती ।

चौथे—यह कभी न सोचो कि वही काम अच्छा होता है जिसे बहुत से मनुष्य करते हों वा जिस के लिये अधिकांश सम्मति हो । जो सब करते हों वही उचित है । प्रथम तो संसार में यह स्वाभाविक नियम है कि बुरी और सस्ती वस्तु संसार में अधिक हैं । अच्छी और क़ीमती कम, चाहे जहां पर इस की परीक्षा करके देखलो । घास फूस अधिक, फलदार पेड़ उस से कम, चन्दन आदि के बहुत कम । कस्तूरी इसी लिये क़ीमती है कि बहुत कम मिलती है । माणिक आदि में लाल न प्राप्त होने के कारण ही बहुमूल्य है, मिडिल पास वाले अधिक, इन्ट्रेंस वाले कम, एम० ए० बैरिस्टर एल० एल० डी० बहुत ही कम । अन्त में सब से श्रेष्ठ सब का सर ताज महाराजाधिराज परमेश्वर एक ही है। इस लिये तुम विद्वान् धार्मिकों की बात मानो, जो बुद्धि के अनुकूल हो, आत्मा के विरुद्ध स्वाभाविक नियम के प्रतिकूल न हो । झूठ न हो। न उस में कपट छल धोखे का लेश हो । इसी लिये बतलाया है कि वह धर्म जो एक ब्राह्मण वेद का जानने वाला वर्णन करता है, श्रेष्ठ और मानने योग्य है पर जो मूर्ख वर्णन करे वह धर्म नहीं हो सकता, चाहे गिन्ती में वे लाखों हों ।

एकोपि वेदविद् धर्मं यं व्यवस्येद्द्विजोत्तमः ।
सविज्ञेयः परोधर्मोऽज्ञानानामुदितोऽयुतैः ॥

पाचवें—स्वार्थी मत बनो, सदा परोपकार पर दृष्टि रक्खो, भर्तृहरि जीने बताया है कि (१) संसार में सत् पुरुष वे हैं जो अपना लाभ दूसरों के अर्थ छोड़ देते हैं । (२) सामान्य वे हैं जो न अपनी हानि करते न अन्यों को हानि पहुँचाते हैं । (३) राक्षस वे हैं जो अपने लाभार्थ दूसरों की हानि कर देते हैं । भर्तृहरि जी कहते हैं-मैं उन महा मूढ़ों को नहीं जानता कि वे किस कोटि के मनुष्य हैं जो अपना भी लाभ न हो, और औरों की हानि कर देते हैं । इस लिये तुम वृक्षों नदियों से शिक्षा ग्रहण करो । जो सदा परोपकार में लगे रहते हैं । अपने शरीर पर दृष्टि डालो, नेत्र पांव को राह दिखाते, पैर वहां ले जाते, हाथ उठाता, मुँह पेट में पहुँचाता, पेट वात पित्त कफ़ बना कर नख से शिखा तक पहुँचा देता है । यदि इन में स्वार्थपन उत्पन्न हो जावे, सारे अपनी शक्तिया खो बैठें । इसी प्रकार यदि तुम में स्वार्थता आई, फिर तुम्हारा पता तक न लगेगा ।

छठे—भले प्रकार स्मरण रक्खो कि अपने कर्मों का फल आपही भुगतना पड़ता है परमेश्वर सर्वव्यापक, अन्तर्यामी, न्यायकारी है । सब के कर्मानुसार फल देता है । यह नहीं हो सकता कि तुम्हारा दान यज्ञ का फल दूसरे को और दूसरों की हत्या का फल तुम्हें पहुँच जावे ।

सातवें—संसार में जो जो जैसी योग्यता विद्या गुण प्राप्त करता है, उसी के अनुसार वह प्रसिद्ध होता है । कोई संसार में जन्म से प्रसिद्ध नहीं हुआ इस लिये तुम अपने में सुन्दर गुण धारण करो । देखो रेशम कीड़े से, सोना पत्थर से, दूब पृथ्वी से, कीचड़ से लाल कमल, गोबर से नील कमल, अग्नि काष्ठ से, मणि सांप के फण से उत्पन्न होते हैं । इस लिये इन के जन्मस्थानों को जानकर कहिये कि जन्म से क्या है । कोई यदि जन्म से ही प्रसिद्ध होता तो वह किसी दशा में नहीं बिगड़ता ।

जैसा कि:—

> कौशेयं कृमिजं सुवर्णमुपलाद्दूर्वापि गोरोमतः ।
> पङ्कात्तामरसं शशाङ्कउदधेरिन्दीवरं गोमयात् ॥
> काष्ठादग्निरहेः फणादपि मणिर्गोपित्ततोगोचनं ।
> प्राकाश्यं स्वगुणोदयेन गुणिनो गच्छन्ति किं जन्मनः ॥

अब तक इसे मानते रहे, जगत् गुरु अपनी रक्षा और अन्य के पाचन शक्ति इन में विद्यमान रही । जब इसे मान कर फिर उठेंगे वह ही पदवी पावेंगे ।

अठवें—सब से डर पाप का और बल पुण्य कर्मों का रक्खो और शुभ कर्मों को करती और परमात्मा की आज्ञा पालन करती हुई जीवन व्यतीत करो मनुष्य यद्यपि अल्प शक्ति वाला है, परन्तु परमात्मा का आश्रय ले सब कुछ कर सकता है । परमात्मा के विश्वासी का कभी बाल बांका नहीं होता । तुम उस पर विश्वास कर जो काम करो उसे अधूरा न छोड़ो । पुरुषार्थ हर कामना पूर्ण करता है । और पूर्ण विश्वास से जान लो कि—"बाल न बांका होसके, जो प्रभु सीधा होय" । सारी पृथिवी एक ओर और परमेश्वर की दया एक ओर । तुम उसी पर विश्वास रक्खो ।

( इन्द्रजीत )

* ओ३म् शम् *